स्वास्थ्य के लिये फल तरकारियां

विठ्ठलदास मोदी

स्वास्थ्य के लिए

फल-तरकारियां

विट्ठलदास मोदी

संपादक– 'आरोग्य'

संचालक–आरोग्य-मंदिर

आरोग्य मंदिर प्रकाशन

प्रकाशक
आरोग्य मंदिर प्रकाशन
गोरखपुर २७३००३

प्रथम बार : १९८४--५०००
दूसरी बार : १९८८--५०००
तीसरी बार : १९९३--५०००
मूल्य : चौबीस रुपया

मुद्रक
अशोक मुद्रण गृह
४२, ताशकंद मार्ग
इलाहाबाद-२११००१

दो शब्द

'स्वास्थ्यके लिए फल तरकारियां'--इस पुस्तकमें केवल फल-तरकारियोंके रोग-निवारक गुण, स्वास्थ्योन्नयनमें उनका स्थान, मात्राका विवेचन नहीं किया गया है, जैसा कि इसके नामसे प्रतीत होता है; वरन् इसमें आहार-शास्त्रके संपूर्ण दर्शनका विवेचन किया गया है। शाकाहार क्यों ? मांसाहार क्यों नहीं ? भोजनका मनपर प्रभाव, भोजनद्वारा मस्तिष्कका पवित्रीकरण आदि विषयोंपर समुचित प्रकाश डाला गया है ताकि पाठक फल-तरकारियोंको केवल उनके स्थूल रूपमें ग्रहण न करें, वरन् उनकी श्रेष्ठताके आधारपर मन-मस्तिष्कसे स्वीकार करें। इस लक्ष्यकी प्राप्तिकेलिए हमने पुस्तकके अंतमें प्रोफेसर अर्नाल्ड इहरिटकी जीवनरेखा दी है, जिन्होंने शाकाहारके आध्यात्मिक प्रभावको पहचाना और अपने जर्जर शरीर और मनको स्वास्थ्यकी एक ऊँचाई तक ले जानेमें सफल हुए। यही नहीं, एक अध्यायमें बर्चर बेनरके आहारका भी विवेचन किया गया है, जिसकी जड़में शाकाहार ही है। इनके विचार सारे यूरोपमें क्रांतिकारी ही नहीं, आहारोपचारमें दिशादर्शक माने गये।

इस पुस्तककी संपूर्णताको ध्यानमें रखकर मैंने (१) भोजनमें अपेक्षित खनिज पदार्थ--समुऐल मारिसन (२) विटामिन और खनिज लवणकी गोलियां धोखामात्र-- लूत्रोसिया लोपेज (३) नीबू--श्री विश्वंभर (४) गरोबोंका सेब अमरूद--नीलकांत शास्त्री (५) आंवला--भोजन और दवा--चुन्नीलाल भरद्वाज (६) प्याज और लहसुन--डा० गोपाल कृष्ण सर्राफ (७) घास दवा है--ज्ञानोदय शर्माके लेख सम्मिलित किये गये हैं। अपने लेखोंका .नयोग करनेकी आज्ञा प्रदान करनेके लिए मैं इन महानुभावोंका कृतज्ञ हूँ।

पाठक इस पुस्तकको पढ़ें, वे नवचेतनासे ही नहीं भर उठेंगे, वे दवाकी व्यर्थताको भी समझेंगे और जानेंगे कि, स्वास्थ्योन्नयन और रोग-निवारणके लिए परमुखापेक्षी होनेकी आवश्यकता नहीं है, वह केवल अपने वशकी बात है।

—विट्ठलदास मोदी

आरोग्य-मंदिर
गोरखपुर
२६-६-८४

विषय-सूची

विषय | पृष्ठ

अध्याय १

आहार कैसा हो--पक्व या अपक्व ?

पाश्चात्य देशों में आजकल अपक्वाहारके पक्षमें बड़ा उत्साह दिखलाया जा रहा है। यह पाक-क्रिया में होनेवाली अति की, जिसके क़ारण हमारे बहुत-से खाद्य पदार्थ निःसत्त्व हो जाते हैं, प्रतिक्रियामात्र है। ऐसी स्थितिमें हमारे मनमें यह प्रश्न उठना कि क्या खाद्य पदार्थोंको उनके प्राकृतिक रूपमें ग्रहण करना ज्यादा समझदारीका काम नहीं होगा, जिसमें हमें उन सभी तत्त्वोंका लाभ प्राप्त हो सके, जिन्हें प्रकृति पौधोंके पोषणके लिए छोटे-छोटे कोषोंमें भर देती है, कोई आश्चर्यकी बात नहीं होगी।

अन्तर क्या है ?

खेतसे लिये गये एक मुट्ठी अन्न और मैदेसे तैयार की गयी रोटीमें बहुत अधिक अंतर होता है। गेहूँके दाने अपने प्राकृतिक रूपमें होते हैं, पर उन्हीं दानोंसे बना हुआ मैदा पहले मिल और फिर तेज आँचके संपर्कमें आकर अपना सारा सत्त्व खो देता है। इस तथ्यको दृष्टिमें रखते हुए ज्यादा समझदारीकी बात तो यही जान पड़ती है कि खाद्य पदार्थोंको तेज आँचपर निःसत्त्व नं बनाकर उनके प्राकृतिक रूपमें ही खाया जाय जिसमें सारे तत्त्व ज्यों-के-त्यों मौजूद रहते हैं। इसलिए मैं आधुनिक मनोवृत्तिका, जो तापके संपर्कमें लाकर क्षति पहुँचाए बिना सलाद, फल, अन्न, गिरी, दूध आदि खानेके पक्षमें है, पूर्ण रूपसे समर्थक हूँ।

अब प्रश्न यह है कि क्या पूर्ण रूनसे अपक्वाहार पर रहना बुद्धिमानीका काम होगा अथवा परिस्थितिके अनुसार पक्व और अपक्व दोनों प्रकारके आहारोंको मिलाकर ग्रहण किया जाय ? इस मार्गमें जो समस्याएं सामने आएंगी, उनमें एक यह है कि जिन पदार्थोंको हम खाना चाहते हैं उन्हें प्राकृतिक रूपमें खानेपर क्या हमारी आंतें पचानेंमें समर्थ हो सकेंगी? दूसरी यह है कि क्या वर्तमान स्थितिमें खाद्य-पदार्थ अपक्व रूपमें जीवाणुओंसे इतने सुरक्षित मिल सकते हैं कि उनके खानेपर किसी तरहकी क्षति पहुँचनेकी संभावना न रहे?

पाचनकी समस्या

हमारा सबसे मामूली खाद्य कार्बोहाइड्रेट है । यह कई रूपोंमें प्राप्त होता है जिनमें मुख्य सेलुलोज, श्वेतसार और शर्करा है । सेलुलोजके संबंधमें निःसंकोच रूपसे कहा जा सकता है कि मनुष्यका पाचनांग उसे पचाकर पोषण प्राप्त करनेमें समर्थ नहीं हो सकता । बैल आदि पशु और कुक्कुट आदि पक्षीकी पाचन-शक्ति सेलुलो-के किसी भी रूपको पचाकर उससे पोषण ग्रहणकर सकती है । उदाहरण के रूपमें गायको ही ले लीजिए । उसके दो पेट होते हैं । जब वह घास खाती है तो उसे सीधे पहले पेटमें पहुँचाती जाती है, पीछे उसे निकालकर पागुर करती और दूसरे पेटमें पहुँचाती है जहां से वह महास्रोतमें पहुँचती और पचकर पोषण प्रदान करती है । इस प्रकार गाय तो भूसा या घास खाकर चिकनाई प्राप्त कर सकती है, पर मनुष्य सेलुलोज पचानेमें समर्थ न होनेके कारण इस प्रकारके खाद्यसे कोई पोषण या आहार प्राप्त करनेमें समर्थ नहीं हो सकता ।

श्वेतसार पचाना उतना कठिन नहीं है, पर ऐसे बहुतसे मनुष्य हैं जिनकी पाचन-शक्ति श्वेतसार अच्छी तरह नहीं पचा सकती, इसलिए उन्हें या तो इससे परहेज करना पड़ता है या अग्निकी सहायता लेकर आंशिक रूपसे पचा लेनेकी क्रिया पहले ही कर लेनी पड़ती है । इस प्रकार अपक्व श्वेतसार बहुतोंके लिए तो अच्छा आहार हो सकता है, पर शेष लोगोंकी पाचन-शक्तिके लिए यह असह्य भार हो जायगा । इसलिए मनुष्य अगर अपने खाद्यमें श्वेतसार रखना चाहता है तो उसके लिए अग्निकी सहायता अनिवार्य हो जाती है ।

स्वयं प्रकृति आहारके रूपमें श्वेतसारका उपयोग नहीं करती । उदाहरणार्थ, गेहूँ दाना जब अंकुरित होता है तो बीज-मूलके चारों ओरका श्वेतसार शर्करामें परिवर्तित हो जाता है और इस अवस्थामें वह आत्मसात् होकर पोषण करने योग्य हो जाता है । मनुष्य भी प्रकृतिकी यह क्रिया देखकर गेहूँको अंकुरित होने देता है और उससे श्वेतसारके स्थानमें शर्करा प्राप्त करता है । इस क्रियाको दूरतक बढ़ने और शर्कराको अंकुरके उपयोगमें आनेसे रोकनेके लिए चतुर मनुष्य तापका प्रयोग करता है । इससे बाढ़ रुक जाती है और शर्कराका छोटा-सा भंडार बन जाता है जिसे मनुष्य आसानीसे पचा सकता है ।

फल और पाचन

फलोंमें का श्वेतसार उनके पकनेपर प्रायः शर्करामें परिवर्तित हो जाता है, पर बहुतसे फल ऐसे भी हैं जो शर्करामें परिवर्तित नहीं हो पाते और कई फलोंमें तो इतना अम्ल होता है कि वे आजकलके मनुष्योंके लिए आहारके काममें आ ही नहीं सकते । इस क्षेत्रमें मनुष्य अपनी प्रखर बुद्धिका सहारा लेकर इन कड़े, अम्लयुक्त और दुष्पाच्य फलोंके स्थानपर मीठे शर्करायुक्त फल उत्पन्न करने लगा है ।

खेती भी तापका स्थान ग्रहण किया करती है । उदाहरणार्थ, जंगली गाजर केवल मतली न लाकर पाचनांग को भी विषाक्त कर देता है, पर हजारों वर्षोंके प्रयत्न और प्रगतिके फलस्वरूप उसमें श्वेतसार और शर्कराकी मात्रा बहुत अधिक आ गयी है और उसकी अम्लता, जो मतली या विष उत्पन्न करनेवाली होती है, बिल्कुल दूर हो गयी है, इस प्रकार पाक क्रिया या कृषिसंबंधी प्रयत्नोंके फलस्वरूप ऐसे बहुतसे पदार्थ उपयोगके योग्य बन जाते हैं जो साधारणतः मनुष्यके उपयोग के योग्य नहीं होते ।

जीवाणुओंसे रक्षा

जिन पदार्थोंको कच्चा या अग्निके संपर्कमें लाये बिना खाया जाता है उनके संबंधमें उत्पादकको बहुत सावधान रहना चाहिए, जिसमें कोई हानिकारक जीवाणु उनमें लगने न पायें । जिन स्थानोंमें शाक, तरकारियां आदि उत्पन्न होती हैं वहाँ ऐसे जानवरोंका प्रवेश नहीं होने देना चाहिए जिनके शरीरमें रहनेवाले जीवाणु निकलकर खाद्य-पदार्थोंमें घुस जा सकते हैं । अगर खाद्य पदार्थोंके संबंधमें इस प्रकार का संदेह हो तो अग्नि या तापका उपयोग लाभदायक होता है । इसलिए सलाद, मूली, गाजर, ताजा फल आदि ग्रहण करनेका हृदयसे समर्थक होते हुए भी मैं इस बातपर जोर देना चाहता हूँ कि खाद्य पदार्थोंको जीवाणुओं आदिसे सुरक्षित रखनेका पूरा प्रबंध होना चाहिए जिसमें वे रोगका संक्रमण न कर सकें ।

इस प्रकार मनुष्यकी कुशाग्र बुद्धि पक्व और अपक्व खाद्य पदार्थोंकी स्थितिसे पूर्णतः परिचित होकर दोनोंके मिश्रणसे आवश्यकतानुसार ऐसा खाद्य प्रस्तुत कर सकती है जो उसके पाचनके उपयुक्त हो और समुचित पोषण प्रदान कर सके ।

अध्याय २

मांस खाना बहुत बड़ी भूल है

शाकाहार और मांसाहारका झगड़ा बहुत पुराना है। दोनों पक्षोंकी ओरसे तरह-तरहकी दलीलें पेश की जाती हैं, पर कोई दूसरेकी बात माननेके लिए तैयार नहीं होता है। विवादका मुख्य विषय प्रोटीन है। मांसभोजीका दावा है कि मांससे ही बढ़िया प्रोटीन उचित मात्रामें मिल सकता है और इसके विपरीत, शाकाहारियोंका दावा है कि मांससे प्राप्त होनेवाले सारे तत्त्व अन्य खाद्य पदार्थों से भी प्राप्त किये जा सकते हैं।

प्रोटीनका महत्त्व क्यों ?

प्रोटीनको इतना अधिक महत्त्व क्यों प्रदान किया जाता है ? महत्त्व देनेका कारण यह है कि नये तन्तुओंके निर्माण और पुराने तन्तुओंके पुनर्निर्माणके लिए प्रोटीन अनिवार्य रूपमें आवश्यक होता है। पचीसकी अवस्था प्राप्त होनेके पूर्व शरीरकी पूरी बाढ़ नहीं हुई रहती, इसलिए इस अवस्थामें बाढ़के लिए आवश्यक पदार्थोंका उचित रूपमें शरीरको प्राप्त होना जरूरी है। इसके अलावा बादके जीवनमें भी क्षीण पड़े हुए तन्तुओंका स्थान ग्रहण करनेके लिए तन्तुओंका निर्माण या पुननिर्माण आवश्यक होता है। तन्तुओंका निर्माण करने वाले कोशाणुओंमें सजीव पदार्थोंको नोषजन, गन्धक, स्फुर आदि खनिज तत्त्वोंकी भी जरूरत पड़ती है।

प्रोटीनका निर्माण

इस प्रयोजनके लिए आपके शरीरको उचित रूपमें प्रोटीन मिलना आवश्यक है। सभी प्रोटीनोंमें कार्बन, उद्जन, ओषजन, नोषजन और गन्धक अल्पाधिक परिमाणमें मौजूद रहते हैं। कुछ प्रोटीनोंमें स्फुर, लोहा और कुछ अन्य खनिज तत्त्व भी पाये जाते हैं। इसलिए प्रोटीन ही ऐसे खाद्य पदार्थ हैं जो इन सारे तत्त्वोंको प्रदानकर बाढ़ और पुनर्निर्माणकी आवश्यकता की पूर्ति कर सकते हैं। निर्माणके लिहाजसे और खाद्य पदार्थ इसका स्थान नहीं ग्रहण कर सकता।

प्रोटीन कई प्रकारके होते हैं जो एमिनो-एसिड नामक अमिश्र पदार्थोंसे बने होते हैं। पोषणकी दृष्टिसे प्रोटीनका महत्व बहुत कुछ उसमें मौजूद एमिनो एसिडोंपर ही निर्भर है। अबतक तेईस प्रकारके एमिनोएसिडोंका पता चल सका है और हो सकता है आगे चलकर और भी एमिनोएसिडोंका पता चले। जिस प्रकार वर्णमालाके कई अक्षरोंके योगसे शब्दका निर्माण होता है उसी तरह ये एमिनोएसिड आपसमें मिलकर विभिन्न प्रकारके प्रोटीनोंका निर्माण करते हैं और जैसे शब्दोंके संयोगसे वाक्यकी रचना होती है वैसे ही विभिन्न प्रकारके प्रोटीन आपसमें मिलकर जीवित तन्तुओंका निर्माण करते हैं। इनमेंसे कुछ एमिनोएसिडोंका निर्माण तो शरीर ही कर लेता है, पर आठ ऐसे हैं जिनकी प्राप्ति, हम लोग जो खाद्य पदार्थ ग्रहण करते हैं, उन्हींसे होनी चाहिए।

पूर्ण प्रोटीन

जीवनको कायम रखने और बाढ़की क्रिया उचित रूपमें चलानेके लिए आवश्यक सारे एमिनोएसिड जिन प्रोटीनोंमें मौजूद रहते हैं उन्हे पूर्ण प्रोटीन कहते हैं। बाढ़की क्रिया चलते समय ये विशेष रूपमें आवश्यक होते हैं। दूध, अंडा, पनीर, मूँगफली, मांस, मछली और मुर्गा पूर्ण प्रोटीन प्रदान करनेवाले खाद्य पदार्थ हैं। अंशतः अपूर्ण प्रोटीन वे हैं जो जीवन तो बनाये रखते हैं पर बाढ़में विशेष रूपसे सहायक नहीं होते। ये प्रोटीन गेहूँ, जौ, मटर, सेम और मसूरमें खास तौरसे पाये जाते हैं। आहारमें इन चीजोंका उपयोग करते समय पूर्ण प्रोटीनवाले कुछ पदार्थोंको भी शामिल कर लेना चाहिए जिसमें प्रोटीनकी कमी पूरी हो जाय।

वनस्पतियोंसे भी प्राप्य

इसलिए विवादमें विचार करनेकी मुख्य बात यह ठहरती है कि मांससे जितने पूर्ण प्रोटीन प्राप्त होते हैं उतने वनस्पतियों और गिरियोंसे प्राप्त हो सकते हैं या नहीं। अगर आप खाद्य पदार्थोंकी रचना-संबंधी तालिका देखें तो आपको मालूम होगा कि सोयाबीनमें पूर्ण प्रोटीन ३८ और मूँगफलीमें ३० प्रतिशत है जो मांसकी तुलनामें, जिसमें प्रोटीन केवल २५ प्रतिशत रहता है, कहीं बढ़े हुए हैं। पनीरका स्थान भी बहुत नीचे नहीं है जिसमें प्रोटीन २१

प्रतिशत रहता है । इसलिए यह दलील कि वानस्पतिक खाद्य पदार्थोंकी अपेक्षा मांस पूर्ण प्रोटीनका अच्छा साधन है, नहीं टिक सकती ।

मांस-भक्षणसे रोग

इस प्रश्नका एक और पहलू है । कुछ लोगोंके लिए मांस संखिया-जैसा विष प्रतीत होता है । जरा उन सारे रोगों और अस्त-व्यस्तताओंपर भी विचार कीजिए जिन्हें मांस उत्पन्न करता या बढ़ानेमें सहायक हुआ करता है। गठिया इसका अच्छा उदाहरण है । इस रोगसे ग्रस्त व्यक्ति मांसमेंके प्रोटीनका उपयोग नहीं कर सकता । ऐसे व्यक्तिके आहारसे मांस सबसे पहले निकाल देना पड़ता है; क्योंकि गठिया प्रोटीनके सदोष पाचनका ही एक रूप है ।

मांसका वृक्कोंपर खास तौरसे जोर पड़ता है; क्योंकि उन्हें ही मलको छानना पड़ता है । मूत्रिकाम्ल मांसके ही प्रोटीनसे निकलता है । इसकी मात्रा कम होनेकी हालतमें तो वृक्क किसी तरह उससे निपट लेते हैं, पर मांस अधिक खाते रहनेपर वृक्कोंको बराबर कठिन श्रम करनेके लिए बाध्य होना पड़ता है और अन्ततः वे जवाब दे देते हैं । इस कथनका यह अभिप्राय नहीं है कि मांस खानेका हर एक आदमीपर इसी प्रकारका गंभीर प्रभाव पड़ता है। आहार-संबंधी नियम सबपर एक-से लागू नहीं होते । खाद्य पदार्थोंके अभिशोषणके तरीकेमें आपके और आपके पड़ोसीके शरीरमें उतना ही अन्तर होता है जितना शक्ल-सूरत और बोलचालमें । ग्रहण किये जानेवाले खाद्य पदार्थोंका रूप आपके स्थान, पेशे, उम्र, शरीरकी बनावट, परिस्थिति तथा अन्य बहुत-सी बातोंपर निर्भर है । कुछ लोग अधिक निरोध-शक्तिसे संपन्न होनेके कारण वर्षों मांस खाते रह सकते हैं और उसका कोई बुरा प्रभाव नहीं देख पड़ेगा, पर अन्य लोगोंके लिए वह बिल्कुल विष सिद्ध होगा ।

यदि आपके भोजनमें बहुत अधिक मांस रहता हो तो आप उसे बिलकुल बंद न कर बहुत थोड़ा मांस खाइए और धीरे-धीरे उसका स्थान तरकारियोंको देते जाइए । आलू, खीरा, गाजर, सेब आदि छिलकेके साथ खाइए, क्योंकि उसमें क्षार और खनिज लवण अधिक रहते हैं ।

अपने आहारका मेल बैठाते समय प्रोटीनको इसलिए मत भूल जाइए कि आप मांसको हटा रहे हैं, क्योंकि बाढ़ अच्छी न होना, पेशियोंका उचित

विकास न होना, कद ठिगना होना, निरोध-शक्तिका कम होना आदि बातें पोषणमें पर्याप्त प्रोटीन न मिलनेका ही परिणाम होती हैं। अधिकांश लोंगोंका स्वास्थ्य ठीक न होनेका कारण आहारमें प्रोटीनकी कमी ही है। बच्चोंके संबंधमें इस बातका और अधिक महत्त्व है। उनके आहारसे अन्नका पूर्ण बहिष्कार कभी न किया जाय, पर उन्हें सत्त्वहीन, निर्जीव अन्न कभी न खिलाये जायँ; क्योंकि वे बारीक बनाने और पाक आदिकी क्रियामें रक्षा करनेवाले प्रायः सभी तत्त्वोंसे वंचित हो जाते हैं, इसलिए उन्हें पूर्णान्नसे बनी हुई चीजें ही दी जायँ।

युवकोंके आहारमें रोज कुछ दूध रहना चाहिए और इन प्रोटीनवाले खाद्य पदार्थोंको मसूर, मटर, सेम आदिके योगसे पूरा करना चाहिए। गिरियां प्राकृतिक, पूर्ण प्रोटीनकी प्राप्तिके मुख्य साधनोंमें हैं। फलोंके साथ, जिन्हें आहारमें प्रमुख स्थान मिलना चाहिए, मिलनेपर वे क्षुधा और स्वास्थ्यकी वृद्धि करती हैं। कम-से-कम एक बार रोज सलाद खाइए। अगर गिरी इसीके साथ खायँ तो और अच्छा।

अन्तमें इस बातको कभी न भूलिए कि संतुलित आहारसे ही आपके शरीरको उचित रूपमें शक्तिशाली बनानेके लिए आवश्यक सभी तत्त्व प्राप्त हो सकते हैं। इस प्रकारके आहारमें विटामिनों और खनिज लवणोंवाले पदार्थोंका रहना आवश्यक है। ये तत्त्व हरे पत्रशाकोंसे प्राप्त होंगे। उसमें थोड़ा कार्बोज और चिकनाई भी रहनी चाहिए। अगर आपके आहारमें सारे पोषक तत्त्व मौजूद रहें तो आप बलवान, सशक्त बनें रहनेके अलावा रोगसे भी बचे रहेंगे।

अध्याय ३

शाकाहार और शांति

हर एक समझदार आदमी स्वस्थ शरीरकी इच्छा करता है, जिससे वह जीवनका ठीक उपभोग कर सके।

इस उद्देश्यकी सिद्धि के लिए लोग बहुत तरहके उपाय काममें लाते हैं; खेल खेलते हैं, तरह-तरहके व्यायाम करते हैं, ठंढे पानीका स्नान आदि स्वास्थ्यवर्धक उपचार अपनाते हैं।

लेकिन 'मनुष्य केवल रोटीपर नहीं जी सकता।' केवल शरीरपोषणसे उसे संतोष नहीं मिलता। उसे आध्यात्मिक खाद्य भी चाहिए, क्योंकि उसके पास बुद्धि है जो ज्ञान चाहती है और आदर्शकी प्राप्तिकी आकांक्षा है जो प्रयत्न और साधनाके माध्यमसे अपने लक्ष्यतक पहुँचना चाहती है।

यह आध्यात्मिक खाद्य, जो दिखता नहीं है, पर किसी भी दृश्य चीजकी ही तरह वास्तविक है, विचारोंमें, सर्जक प्रयत्नमें, ज्ञान-प्राप्तिमें दया, क्षमा, प्रेम आदि भावोंके अभ्यासमें, और जिसे हम शिक्षा कहते हैं, उसमें मिलता है। इस आध्यात्मिक खाद्यको हम ग्रहण कर सकें, इसके लिए उचित अभिमुखता होनी चाहिए, यानी ऐसे भाव या विचार जब आयें, तो हमें उनका प्रभाव स्वीकार करना चाहिए। लेकिन जिसे हम 'बढ़िया भोजन' कहते हैं, ऐसे भोजनके बाद इन सूक्ष्म प्रभावोंके प्रति अभिमुख होना कितना कठिन हो जाता है, इस बातसे शायद ही कोई अनजान हो। इससे प्रकट होता है कि भोजन हमारी अभिमुखताकी शक्तिपर असर डालता है।

इस विचारपर हम ईमानदारीसे कुछ और सोचें तो ध्यानमें आयगा कि जीवंत और प्राणवान अभिमुखता शरीरका पोषण उन जीवंत और प्राणवान खाद्यान्नोंके जरिये करनेपर ज्यादा अच्छी तरह सिद्धकी जा सकेगी, जिनमें प्राणका तत्त्व अपने ताजे रूपमें प्राप्त होता है। मांसादिमें प्राणका तत्त्व अपने ताजे रूपमें न मिलनेके कारण यह गुण नहीं हो सकता।

धरतीपर सात प्रकारकी जीव-सृष्टि है, और सात ही प्रकारके

प्राकृतिक जीवंत खाद्यान्न भी मिलते हैं। वे इस प्रकार हैं :

१. कंदमूल (गाजर-मूली आदि)

२. जमीनके, ऊपर पैदा होनेवाली साग-भाजी (पातगोभी, दूसरी पत्ती-भाजियां और दालें)

३. अनाज (गेहूँ, चावल, जौ, ज्वार, मकई आदि)

४. नारियल-जैसे फल, जिनमें भीतर गिरी होती है--नारियल, बादाम, अखरोट आदि।

५. गुठलीवाले फल (आड़ू, खुबानी, बेर वगैरा)

६. बीजवाले फल (सेब, नासपाती, नारंगी वगैरा)

७. अंगूर--खासकर घरके अहातेसे बाहर पैदा किये हुए।

इनसे मनुष्यके पोषणके लिए प्रायः सारे जरूरी तत्त्व मिल जाते हैं। इनका उचित मात्रामें उपयोग किया जाय तो आरोग्य और शक्ति कायम रखनेके लिए आवश्यक युक्ताहार प्राप्त हो जाता है। उन्हें पकानेके लिए तापका उपयोग कर सकते हैं, पर ज्यादा अच्छा यह होगा कि ऐसा न किया जाय।

ऐसे प्राकृतिक और जीवंत खाद्योंके युक्ताहारका उपयोग करनेसे अदृश्य आध्यात्मिक प्रभावोंके प्रति अभिमुखताकी शक्ति ज्यादा आसानीसे प्राप्त हो सकेगी। इसके परिणामस्वरूप हमारा जीवन कई अंशोंमें आजकी अपेक्षा ज्यादा शुचि और पवित्र बनेगा, और हमारी स्वाद और गंधकी शक्तियां अनायास ही ज्यादा सूक्ष्म और समृद्ध बनेंगी।

शुद्ध आहार अपनानेके लिए यह एक बड़ा कारण है और इसमेंसे शाकाहारके पक्षमें दो मुख्य कारण प्राप्त होते हैं : जीवन-तत्त्वके सारे रूपों यानी सारे जीवधारियोंके प्रति आदर; और दूसरा--जो पहलेमेंसे ही उत्पन्न होता है--यह कि ये जीवधारी भी हमारी सृष्टिमें समान भागीदार हैं, वे हमारे 'छोटे भाई' हैं, जिनका हमें अपने स्वार्थके लिए--भोजन, वस्त्र या औषध आदिके लिए शोषण नहीं करना चाहिए।

देहकी छोटी और बड़ी सारी व्याधियोंसे मुक्ति तथा महामारी और युद्ध आदि विनष्टियोंके निराकरण और समाप्तिकी चाबी इसी बातमें है। युद्ध

तब तक कभी बंद नहीं हो सकता, जबतक कि मनुष्य अपनेसे छोटी जीव-सृष्टिका संहार करना और अपने मानव-बंधुओंका--एक वर्ग दूसरे वर्गका, एक जाति दूसरी जातिका--शोषण करना बंद नहीं करता।

बड़ी-बड़ी घटनाओंका आरंभ तो छोटा ही होता है; शाकाहारी जीवन-पद्धति पृथ्वीपर शांतिकी स्थापना और धर्माचरणके प्रवर्तनके लिए पहला और परम आवश्यक कदम है।

अध्याय ४

विटामिन क्या है ?

एक अति सूक्ष्म पदार्थ आजकल स्वास्थ्य तथा जीवनके लिए अत्यावश्यक समझा जाने लगा है। वह हमारे खाद्य-पदार्थोंमें अत्यल्प मात्रामें होता है। उसका अस्तित्व तथा उसका महत्त्व पर्यवेक्षणोंसे सिद्ध है। इस अति सूक्ष्म पदार्थको हम 'विटामिन' कहते हैं।

यदि हमारे भोजनमें विटामिनोंका अभाव हो, तो हमारे शरीरमें उसके अभावके कारण विचित्र-विचित्र लक्षण प्रकट होने लगते हैं। पोषण-तत्त्वोंके अभावोंके कारण उत्पन्न लक्षणोंका परिचय हमें सभ्यताके अति प्राचीन कालसे होता आया है। बाइबिलमें कथा आती है कि, जाबने शिकायत की कि, रातके समय मेरी हड्डियां मेरे शरीरमें धंसी जाती हैं; और मेरे जोड़ोंमें बेचैनी है। मेरी त्वचा काली पड़ गयी है और मुझे मेरी हड्डियोंमें आग लगी-सी लगती है।

उस समय उसके कष्टका नामकरण नहीं हुआ था, पर वर्तमान विज्ञानकी दृष्टिसे, जाबके कथनसे लगता है कि, उसे स्कर्वी रोग हो गया था। जाबका यह रोग हजारों वर्ष बाद पहचाना गया। १६०१ ई० में सर जेम्स लैकेस्टरने जहाजरानी में काम करनेवालोंको नीबू खानेकी सलाह दी; पर रोगपर पूर्ण विचार, तो उसके भी लगभग १५० वर्ष बाद सम्भव हो सका।

इस रोगका उसके बादका दूसरा उल्लेख द' ज्वायन विलेन ने किया है। उन्होंने लिखा है कि, मसूढ़ोंके मरे चमड़ेको लोग जर्राहसे कटवाकर निकलवा देते थे ताकि वे भोजन भली प्रकार चबा सकें।

१६५० में ग्लिसनने भी वस्तुतः इसी रोगका उल्लेख किया; पर उन्होंने भूलसे इसे क्षय-रोगका नाम दिया।

पर, सचमें इस रोगका शास्त्रीय अध्ययन १८८३ ई० में सर जेम्स वालोंने किया और कहा कि, विटामिन-सी की कमीके कारण यह रोग होता है।

इस शताब्दीके प्रारम्भमें पैस्चोराइज्ड दूधके कारण बच्चोंमें एक प्रकारका रोग चला। पर विटामिन-सी को सतरेके रस आदिके रूपमें देकर

इस रोगको दबाया गया।

पेल्लागरा शब्द इटालियन शब्द पेल्ले आगरा से बना है, जिसका अर्थ हुआ रुखड़ी त्वचा। इस शब्दको चिकित्सा-जगत्में लानेका श्रेय फ्रैंसिसको फ्रयोली नामक एक इटालियन चिकित्सकको है, जिसने १९७१ ई० में इस रोगका विस्तृत विवरण प्रकाशित किया। यह रोग लोमबार्डीमें स्थानीय रोग था और वहाँ के किसानोंमें यह शब्द बड़ा प्रचलित था।

इसके कुछ वर्ष पूर्व स्पेनके राजा फिलिप पंचमके चिकित्सक कैसलने देखा था। बादमें पता चला कि, स्पेनमें भी वही रोग था, जिसे इटालियन चिकित्सकने पेल्लागरा कहा था।

१८६४ में अमेरिकी चिकित्सकोंका ध्यान इस रोगकी ओर गया। पर, तथ्य यह था कि, दक्षिणी राज्योंके नीग्रो लोगोंमें यह रोग काफी प्रचलित था। इटली तथा अमेरिका दोनों ही देशोंमें यह रोग समस्याके रूपमें था।

बेरीबेरीका उल्लेख चीनमें ईसासे १६०० वर्ष पूर्व मिलता है। पर, चिकित्सा-शास्त्रमें उसकी जानकारी १७वीं शताब्दीके मध्यमें हुई। यह सिंहली शब्दसे बना है जिसका अर्थ है, 'सम्भव नहीं है।' बेरीबेरी नाम पड़नेका कारण यह है कि, इस रोगका रोगी इतना कमजोर हो जाता है कि, उसके लिए कुछ भी कर पाना सम्भव नहीं रहता। १८८२ ई० में यह रोग इलाजके योग्य सिद्ध हुआ। इसका श्रेय तकाकी नामक चिकित्सकको है, जिसने अपने देशके एक-एक नाविकको इस रोगसे मुक्त कर डाला। जापानी पहले चावल मात्र खाते थे। उसने उन्हें सब्जी, जौ आदि भी दिलवाना शुरू किया।

बेरीबेरीसे मिलता-जुलता ही एक रोग पाली न्यूराइटिस है। १८९० ई० में ईजकमैनने यह कहा कि, चावलपर पालिश करनेसे जो पदार्थ निकल जाता है, उसमें एक पानीमें घुल जानेवाला पदार्थ है, वह इस रोगको अच्छा कर सकता है।

उसी समयके लगभग १८८८ में, लूनिनमें कुछ लोग खाद्य-पदार्थोंपर शोध कार्य कर रहे थे। वे इस निष्कर्षपर पहुँचे कि, यदि केवल विशुद्ध चिकनाई, प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, खनिज पदार्थ अथवा पानी किसी पशुको दिया जाये तो वह जीवित नहीं रह सकता।

१९०१ में ग्रिजंस ने यह कहा कि, बेरीबेरी तथा एवियन पोलीन्यूराइटिस नाड़ीमंडलके मेटाबोलिज्मके लिए अपेक्षित एक ऐसे पदार्थ के अभावका प्रतिफल है। इसी विचारने इस शताब्दीमें भोजनके पोषक-तत्त्वोंके सम्बंधमें एक क्रांति ला दी।

होल्सत और फ्रोहलिखने इस दिशामें १९०७ में काम प्रारम्भ किया। उसी समयके खोजकर्त्ताओंमें हापकिंश भी हैं। और, फुंक नामक विद्वान्ने यह पहले-पहल सिद्ध किया कि, बेरीबेरी, स्कर्वी, पेल्लागरा, सूखा आदि कुछ पोषक तत्त्वोंके न मिलनेके कारण होते हैं।

और, ४० वर्षसे कम समयमें कितने ही विटामिनोंकी खोज अनुसंधानकर्त्ताओंने कर डाली।

अंग्रेजी सेनाके एक चिकित्सक डाक्टर राबर्ट मैककैरिसनने विटामिनके पूरे सिद्धांतको इन शब्दोंमें संक्षिप्त किया है:

(१) विटामिन जीवित टिशुओंका एक निरंतर विद्यमान निर्माणतत्त्व है। यद्यपि उसकी मात्रा अत्यल्प होती है; पर स्वास्थ्यका बना रहना, बहुत-कुछ उसपर ही निर्भर है।

(२) विटामिन स्वयं शरीरको शक्ति प्रदान नहीं करते; लेकिन प्रोटीन, चिकनाई, कार्बोहाइड्रेट तथा क्षारोंका उपयोग कराकर वे शरीरको स्वस्थ और सशक्त बनाये रखते हैं।

(३) प्रोटीन, चिकनाई, कार्बोहाइड्रेट तथा क्षार बिना विटामिन के सहयोगके शरीरको स्वस्थ बनाये रखनेमें असमर्थ हैं। और इन तत्त्वोंके अभावमें विटामिन भी व्यक्तिको स्वस्थ नहीं रख सकते। विटामिनोंके अभावमें शरीर भूखा रह जाता है।

(४) प्रोटीन, चिकनाई, कार्बोहाइड्रेट तथा क्षारोंके संतुलित भोजन और विटामिनोंमें दूरका सम्बन्ध है। विटामिनकी कितनी अपेक्षा है, यह खाये गये भोजन पर निर्भर करता है।

(५) अपेक्षित विटामिन तथा मेटाबोलिक प्रक्रियाके बीच भी दूरका एक सम्बन्ध है।

(६) हर विटामिन पोषण-तत्त्वके क्षेत्रमें अपना एक निश्चित काम करते हैं।

(७) विटामिन ए तरल पदार्थों तथा कैल्सियमके मेटाबोलिज्मसे सम्बद्ध है तथा बढ़ाव और सुरक्षाकी रासायनिक प्रक्रियासे उसका सम्बन्ध है।

(८) विटामिन बी कार्बोहाइड्रेटके मेटाबोलिज्मसे सम्बद्ध है तथा हर कोषा (विशेषकर नाड़ी-कोषा) के सुचारु रूपमें काम करनेसे उसका सम्बन्ध है।

(९) विटामिन सी कैल्सियमके मेटाबोलिज्मसे सम्बद्ध है और उसका सम्बन्ध बढ़ते टिशुओंकी रासायनिक प्रक्रियासे है।

(१०) हर विटामिन निर्माणात्मक तथा विघटनात्मक प्रक्रियाके बीच संतुलन स्थापन करते हैं।

(११) एक विटामिन दूसरे विटामिनकी स्थानपूर्ति नहीं कर सकता; यद्यपि एकका प्रभाव दूसरेके कार्यमें बाधा अवश्य उपस्थित कर सकता है।

(१२) व्यक्तिको जिस विटामिनकी जितनी अधिक अपेक्षा होगी, उतना ही अधिक उस विटामिनका फल उसे मिलेगा।

(१३) हर विटामिनका एक निश्चित ग्रंथिपर अपना प्रभाव होता है। पोषण तत्त्वोंके अभावसे होनेवाले रोगोंमें इन ग्रंथियोंकी सक्रियता कारण होती है।

(१४) हारमोन तथा अन्य बाह्य स्रावके उत्पादनमें विटामिन बड़ा महत्त्वपूर्ण काम करता है।

(१५) विटामिन बाह्य आक्रमणोंसे टिशुओंके संघर्ष में सहायक होता है।

(१६) विटामिन बी आदमीमें भोजनकी इच्छा उत्पन्न करता है।

(१७) स्वस्थ कोषाओंके ठीक कामकी रासायनिक प्रक्रियाकी शृंखलामें विटामिन एक महत्त्वपूर्ण शृंखला है।

अध्याय ५

आहारोपचारमें विटामिनोंका स्थान

बहुतसे लोगोंको यह पता नहीं होता कि उनके शरीरके पोषणके लिए किन-किन तत्त्वोंकी आवश्यकता है। वे भोजनका समय होनेपर इच्छित पदार्थ खाकर संतुष्ट हो जाया करते हैं और इस प्रकार हफ्तों, महीनों और कभी-कभी वर्षों अयुक्त आहार ग्रहण करते रहते हैं, तरह-तरहके उत्तेजक पेय पीते रहते हैं और इस बातका जरा भी खयाल नहीं करते कि जो खाद्य पदार्थ और पेय वे ग्रहण कर रहे हैं उनसे उन्हें शरीरके लिए आवश्यक विटामिनोंकी प्राप्ति हो रही है या नहीं। विटामिनोंकी आवश्यकता क्यों है, अगर उनका अभाव हो तो स्वास्थ्यपर इसका कैसा प्रभाव होगा, किस तरहके खाद्य पदार्थोंसे किस प्रकारके विटामिन प्राप्त होते हैं, आदि बातोंका बहुतोंको कुछ भी ज्ञान नहीं होता।

विटामिन ए

विटामिन ए की कमी होनेपर चमड़ेकी बनावटमें काफी परिवर्तन हो जाता है, उपत्वचाके कोषाणुओंका भंजन हो जाता है जिससे चमड़ा शुष्क, रूसीदार और सिकुड़ा हुआ नजर आने लगता है। कभी-कभी बालोंमें भी खुश्की और सफेदी आ जाती है और वे गिरने लगते हैं। रोमकूपों या बालोंकी जड़में छोटी-छोटी काली गाँठें बन जाती हैं।

आंखोंपर भी इस विटामिनकी कमीका बहुत गहरा असर होता है। इससे कनीनिकामें प्रदाह उत्पन्न होकर आंखोंमें शुष्कता ला दे सकता है। जिसका अगर विटामिन ए द्वारा समुचित उपचार न हो तो आंखें अंधी हो जा सकती हैं। रतौंधी तो प्रायः हो जाया करती है।

अगर यह विटामिन पर्याप्त परिमाणमें प्राप्त होता रहे तो त्वचा स्वस्थ बनी रहेगी और पामा आदि चर्मरोगोंके होनेकी संभावना कम रहेगी। विटामिन ए की कमी होनेकी हालतमें उपर्युक्त विकारोंके प्रस्तुत होनेके अलावा श्लैष्मिक कलाकी अवस्थामें भी परिवर्तन हो जाता है जिससे वह जीवाणुओंके आक्रमणका क्षेत्र बन जाता है। और बादमें आमाशय और

फेफड़े भी संक्रमणका क्षेत्र बन जा सकते हैं।

विटामिन ए की प्राप्तिके साधन चर्बीदार मछली, दूध, पनीर, मक्खन, अंडेकी जर्दी आदि हैं। अंडेकी जर्दीमें गाजर आदि को रंग प्रदान करनेवाला रंजक भी रहता है। इस रंजकमें बेटा-कैरोटीन नामक तत्त्व भी रहता है जो शरीरमें पहुँचनेपर भंग हो जाता और जलके साथ मिलकर विटामिन ए का निर्माण कराता है।

जिस समय गायोंको ताजा चारा मिलता है उस समयके दूध और दूधसे बने हुए पदार्थोंमें अन्य समयकी अपेक्षा अधिक विटामिन ए रहता है। गाजर, शलजम आदि मूल, खजूर, किशमिश आदि भी विटामिन ए की प्राप्तिके अच्छे साधन हैं। पातगोभी और सलादकी बाहरी हरी पत्तियोंमें बेटा-कैरोटीन अधिक मात्रामें रहता है, पर अंदरकी सफेद पत्तियोंमें वह नहींके बराबर होता है। हरी पत्तियोंमें कैरोटीनका पीला रंग क्लोरोफिलसे और टोमैटोमें लाल रंजकसे ढका रहता है। इस प्रकार हमें विटामिन ए की तात्कालिक प्राप्तिके दो साधन हैं--जांतव पदार्थ और बेटा-कैरोटीन जिससे विटामिन ए तैयार कर लिया जाता है।

विटामिन बी

थकान, अनिद्रा, घबराहट, नाड़ी-प्रदाह, अग्निमांद्य, कब्ज और चर्मस्फोट आदि विकार प्रायः विटामिन बी पर्याप्त मात्रामें न मिलनेके परिणाम हुआ करते हैं। विटामिन बी की कमी व्यापक रूपमें, यहाँतक कि उन लोगोंमें भी देखनेमें आती है जो समझते हैं कि हम अच्छा खाते-पीते हैं।

शिक्षकोंका अनुभव है कि जिन बच्चोंको पोषक आहार मिलता है वे पढ़ने-लिखनेमें उन बच्चोंसे कहीं अच्छे होते हैं जिन्हें इस प्रकारका भोजन नसीब नहीं होता, इसलिए माताओंको चाहिए कि अपनी संतानको शैशवकालसे ही मैदेकी चीजें, मिलकी चीनी आदि निर्जीव पदार्थ न देकर चोकरदार आटेकी रोटी, गुड़ आदि खानेको प्रोत्साहित करें। जिन बच्चोंको पूर्णान्नकी चीजें मिलती हैं वे ज्यादा पुष्ट होते हैं, उनकी अस्थियां और दांत ज्यादा मजबूत होते हैं और इसके अलावा उनमें सादे और प्राकृतिक भोजनके प्रति रुचि भी अधिक होती है।

अभिषव (यीस्ट) के कोषाणुओंमें अठारह एमिनो एसिडों और बारह खनिज लवणोंके अलावा बी वर्गके सभी विटामिन, जिनकी संख्या दस-बारह

होगी, पाये जाते हैं।

विटामिन सी

साधारणतः लोगोंको यह ज्ञात है कि विटामिन सी की प्राप्तिके मुख्य साधन नारंगी, नीबू, चकोतरा आदि फल हैं। इनका रस निचोड़कर तुरंत पी लेना चाहिए। निचोड़कर रख छोड़ने पर उसका ओषजनीकरण हो जाता है जिससे विटामिन सी का गुण नष्ट हो जाता है।

शोधकके रूपमें, विशेषकर लघु उपवासमें, विटामिन सी का स्थान सबसे ऊंचा है। ताजे फलका रस प्राकृतिक क्षार होनेके अलावा शरीरमें रुका हुआ मल साफ किया करता है। यह पाचन और यकृतको उद्दीप्त करता, क्लोमका स्राव बढ़ाता और आंतोंसे मलका निष्कासन करनेमें सहायक होता है जिससे बड़ी आंतकी सक्रियता बढ़ती है।

विटामिन डी

प्रकृति इसे इर्गोस्टरोल नामक पदार्थसे, जो चारेपर रहनेवाले पशुओंसे प्राप्त होता है, उत्पन्न किया करती है। मानवरक्त और तंतुओंमें रहनेवाले इर्गोस्टेरोलपर सूर्यरश्मि तथा अन्य प्रभावोंकी क्रिया होती है जिससे विटामिन डी अपने प्राकृतिक और प्रभावकर रूपमें उत्पन्न हुआ करता है।

डाक्टर वर्षोंसे बच्चोंको विटामिन डी देते आ रहे हैं और ऐसा देखा गया है कि बच्चोंको आहारमें पर्याप्त रूपमें विटामिन डी न मिले तो उनकी अस्थियोंका साधारण रूपमें विकास नहीं हो पाता। हालमें ही यह भी पता लगा है कि बच्चोंकी अस्थिवक्रताकी रोकथामके लिए और तरुणोंकी अस्थियोंमें कैलसियम और फास्फोरसका संग्रह करनेके लिए विटामिन डी अनिवार्य रूपमें आवश्यक है।

पित्ताम्ल और यौनग्रंथियोंके रसोंका, जो खाद्य पदार्थोंके पाचन और मानसिक संतुलन बनाये रखने में विशेष सहायक होते हैं, विटामिन डी के कार्योंसे घनिष्ठ संबंध होता है। कैलसियमके समवर्त (मेटाबोलिज्म) पर इसका विषेष प्रभाव होनेके कारण रक्तके जमनेसे भी इसका संबंध होता है।

आज प्रत्येक सभ्य देशमें जनताका स्वास्थ्य ठीक रखने और

तरह-तरहके संक्रामक रोगोंसे उसकी रक्षा करनेके लिए लाखों-करोड़ों रुपये हर साल खर्च किये जा रहे हैं, पर रोगके मूल कारण--बेमेल और निर्जीव आहारको ठीक करनेकी ओर जरा भी ध्यान नहीं दिया जाता । अगर खान-पान-संबंधी दोषोंका सुधार हो जाये तो न इतने डाक्टरोंकी जरूरत रह जाय और न इतने अस्पतालोंकी ।

अभावजन्य क्लांति

अभी कुछ ही दिन पहले अमेरिकाके सात स्वस्थ डाक्टरोंने क्लांति और विटामिन बी के अभावका संबंध निश्चित करनेके लिए ऐसे खाद्य पदार्थोंपर रहना शुरू किया जिनमें इस विटामिनका पूर्ण अभाव था । इस प्रकारका आहार आरंभ करनेके तीन ही चार सप्ताह बाद वे क्लांति, उत्साहहीनता, शक्ति-ह्रास आदिके शिकार हो गये ।

विटामिन के अभावसे होनेवाली क्लांति, रोगका कोई प्रकट लक्षण न होते हुए भी मनुष्यको काम करनेमें असमर्थ बना देती है । विटामिनकी उचित प्राप्ति न होनेकी हालतमें बहुतसे वायुयान-चालक, बस-ड्राइवर मशीन-मैन तथा अन्य बहुतसे इस प्रकारका जोर डालने वाला काम करने वाले इस बातको नहीं समझ पाते कि क्लांतिसे उनकी शक्ति बिलकुल क्षीण हो जायगी और इसका परिणाम घातक तक हो सकता है ।

क्लांतिका मानसिक प्रक्रियापर भी बहुत असर पड़ता है और वह भेजेकी रासायनिक प्रक्रियाको अस्तव्यस्त कर मनुष्यमें चिड़चिड़ापन, बदमिजाजी और अपनी भूलोंके लिए दूसरोंको दोषी बनानेकी प्रवृत्ति उत्पन्न कर देती है ।

रोगोंका निराकरण करनेमें आहारका बहुत कुछ हाथ रहता है । एक विशेषज्ञका कहना है कि 'प्रत्येक रोगके मूलमें कोई कारण होता है और उस कारणकी जड़तक दवा कभी नहीं पहुंच सकती' इसलिए तर्कसंगत प्रक्रिया यह होगी कि रोगका कारण ढूंढकर उसे दूर करनेका प्रयत्न किया जाय । दवाएं उस कारणतक नहीं पहुंच सकतीं, पर प्राकृतिक उपचार पहुंच सकता है जिसके प्रमाण रोज ही मिल रहे हैं ।

अध्याय ६

मानसिक स्वास्थ्यके लिए विटामिन

आधि अथवा मानसिक रोग--ये शब्द सुननेमें कितने भयंकर ज्ञात होते हैं। संसारमें मानसिक रोगियोंकी संख्या इतनी अधिक है कि अस्पतालोंमें आधेसे अधिक बिस्तर इन्हींसे भरे होते हैं। हम लोगोंमें से इक्के-दुक्के ही ऐसे होंगे जो पूर्ण विश्वासपूर्वक यह कह सकें कि उनके संबंधियों या परिवारोंमें किसीको भी मानसिक रोग नहीं हुआ है। पाठकोंको बतानेकी जरूरत नहीं है कि मानसिक रोगोंका बहुत अधिक संबंध अस्वास्थ्यकर भोजनसे है। ज्यों-ज्यों हमारे जीवनमें विकृत खाद्य पदार्थोंका उपयोग बढ़ता जाता है त्यों-त्यों मानसिक रोगियोंकी संख्या बढ़ती जाती है। आजकल विज्ञानने ऐसे उपाय ढूंढ़ निकाले हैं जिनका सहारा लेकर अप्राकृतिक ढंगसे वनस्पतियां पैदा की जा रही हैं। बाजारमें बिकनेवाली चीजोंकी शुद्धताके संबंधमें तो कहना ही क्या ? घी-दूध, आटा, तेल आदि सभी जीवनोपयोगी खाद्य पदार्थोंमें मिलावट रहती है। इसका परिणाम यह हुआ है कि शहरोंमें मानसिक रोगियोंकी संख्या बढ़ती जाती है और जो नयी पीढ़ी पनप रही है वह तनसे क्षीण और मनसे असक्त है। इस संबंधमें हमारे देशमें कभी कोई छानबीन नहीं की गयी है। समाचार-पत्रोंमें आये दिन विकृत भोजनके फलस्वरूप होनेवाले दुष्प्रभावोंकी छिटपुट चर्चा पढ़नेको मिल जाती है, किंतु निश्चित लक्ष्यको लेकर किसी प्रकारका अनुसंधान अभीतक नहीं किया गया है। पश्चिमके देशोंमें भोजनकी समस्याने काफी पहलेसे लोगोंका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया है। अमेरिकाके दो प्रसिद्ध भोजनशास्त्रियों और मनोविज्ञानविदोंने इस संबंधमें हमें पर्याप्त जानकारी दी है। लोगोंमें यह धारणा फैली हुई है कि मानसिक रोगोंका शारीरिक चिकित्सासे कोई संबंध नहीं होता। ऐसे लोग समझते हैं मानसिक रोगोंका इलाज मानसशास्त्री ही कर सकते हैं; किंतु यह धारणा निश्चय ही अधूरी है।

यह बात अब निश्चयपूर्वक जान ली गयी है कि मानसिक रोगोंका एक प्रमुख कारण अपर्याप्त भोजन अथवा अस्वास्थ्यकर भोजन भी हो सकता है। वे रोगी जो वल्क-चर्मसे जिसे अंग्रेजीमें 'पिलैग्रा' कहते हैं, पीड़ित होते हैं,

मानसिक विकृतियोंसे भी ग्रस्त रहते हैं। पिलैग्राका मूल कारण होता है विटामिन बी का अभाव।

इन भोजन एवं मनोविज्ञानशास्त्रियोंने जो प्रयोग किये वे अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। जिन रोगियोंपर प्रयोग किये गये उनमेंसे कोई भी बुभुक्षाग्रस्त नहीं था। वे वह भोजन ले रहे थे जो अमेरिकामें सामान्य लोग प्रायः लिया करते हैं। इसलिए इन प्रयोगशास्त्रियोंने उन्हें अधिक भोजन देनेकी आवश्यकता नहीं समझी। और, न उनके भोजनमें कैलोरियोंकी संख्या बढ़ायी। उन्होंने केवल भोजनको अधिक गुणपूर्ण और समृद्धिशाली बना दिया अर्थात् उन्होंने उन रोगियोंके वजनमें ऐसी वस्तुओंकी प्रधानता कर दी जो विटामिनों और धातु-लवणोंसे परिपूर्ण थीं। उन्होंने पूरकके रूपमें ऐसे पदार्थोंका प्रयोग किया जिनमें ५४ प्रकारके भोजन-तत्त्व सम्मिलित थे--ये भोजन-तत्त्व थे विटामिन ए, विटामिन बी। विटामिन बी के अनेक भेद विटामिन ई के एफ, लेसीथिन, रियुटिन, खमीर, जिगर आदि। उन्होंने उन्हीं पदार्थोंकी बहुलताकी ओर ध्यान दिया जो मनुष्यके पोषणके लिए आवश्यक माने गये हैं। इन लोगोंने एक काम और किया--अपने रोगियोंको दो भागोंमें बांट दिया। एक दलके रोगियोंको पूरक भोजनवाली असली गोलियां मिलतीं और दूसरे दलके लोगोंको भी एक गोली मिला करती थी जिसमें कहनेके लिए तो सभी पूरक भोजनवाले तत्त्व विद्यमान थे; किंतु जिनका कोई खाद्य मूल्य नहीं था। नकली गोली खानेवाले ग्यारह रोगियोंमेंसे नौको कोई लाभ नहीं हुआ। एकको दो महीनेके सुधारके बाद फिर मूल स्थितिने आ घेरा और एकको लगता कि शायद वह अच्छा हो रहा है। यह सोचा गया था कि कुछ रोगी आत्म-सुझावके कारण संभवतः स्वयंको अच्छा अनुभव करने लगें। किसी भी रोगीको यह पता नहीं था कि असली गोली किसे मिल रही है और नकली किसे।

चिकित्सकोंको उन ३२ रोगियोंमेंसे जो विटामिन पूरित असली गोलियां ले रहे थे १३ में साफ-साफ सुधारके लक्षण दिखे। १५ में कुछ-कुछ सुधार दिखायी पड़ा। यहां पर आप संभवतः यह पूछें कि इस साफ-साफ या कुछ-कुछ सुधारसे क्या मतलब है? इसके लिए हमें कुछ रोगियोंका इतिहास बताना होगा। ७५ सालकी एक वृद्धा जो दो वर्षोंसे शैयाग्रस्त थी, प्रायः अवसादग्रस्त रहा करती थी। वह प्रायः रोती रहती थी और उसका चित्त

ठिकाने नहीं रहता था। एक महीनेकी भोजन चिकित्सासे ही वह शैयासे उठनेमें समर्थ हो गयी और बागबानी करने लगी। उसका मानसिक अवसाद और चित्तविभ्रम दूर हो गया। दूसरा मामला एक अठारह सालके लड़केका है। उसे मस्तिष्कशोथ था। वह स्कूल नहीं जा सकता था। वह लोगोंसे अपने संबंध ठीक नहीं रख पाता था। अपने बारेमें उसे कोई होश-हवास नहीं रहता था। चिकित्साके उपरान्त वह बिल्कुल ठीक हो गया और घर तथा बाहर उसका आचरण सामान्य व्यक्तियोंका-सा हो गया। एक महिला १५ वर्षोंसे मानसिक रूपसे अस्वस्थ्य थी, उसने बहुत चिकित्सा की; किंतु लाभ नहीं हुआ। जब उसने विटामिन पूरित खाद्य पदार्थ लेना प्रारंभ किया, उस समय वह अत्यंत अनियंत्रित, अस्तव्यस्त और आत्मघातक प्रवृत्तियोंसे पीड़ित थी। दो महीनेके खाद्य प्रयोगोंके बाद वह सर्तक रहने लगी। वह अपने वेश-विन्यासके प्रति सावधान रहने लगी और मानसिक रूपसे अधिक आत्मविश्वासमयी बन गयी। इस बीच उसे नौकरी मिल गयी और वह चली गयी। उसने उस बीच संशोधित खाद्य लेना बंदकर दिया। उसकी अवस्था फिर बिगड़ गयी। वह अच्छी तभी हुई जब उसने फिरसे सुधरा हुआ भोजन लेना प्रारंभ किया।

इन प्रयोगोंके आधारपर इतनी बात तो निश्चयपूर्वक कही जा सकती है कि सारे मानसिक रोग मनोवैज्ञानिक ही नहीं होते। इनका कारण शारीरिक भी हो सकता है। अतः ऐसे मानसिक रोगोंकी चिकित्सा करनेके लिए मनोवैज्ञानिक निदान जरूरी नही होता। ये रोग शरीरशोधनसे अच्छे किये जा सकते हैं। इन प्रयोगोंसे एक बात यह सिद्ध होती है कि बहुत दिनोंतक भोजन-संबंधी असावधानी बरतनेका परिणाम घातक हो सकता है। हमको यह भलीभांति जान लेना चाहिए कि रोग किसी प्रकारका हो मानसिक या शारीरिक, उसका कारण और सुधार हमारे खाद्य पदार्थोंके चुनावमें दिया हुआ है।

अध्याय ७

विटामिनोंकी कमीका प्रभाव

अगर आपको किसी विटामिनकी कमी हो रही हो तो आप इस अवस्थाकी पहचान कैसे करेंगे ? क्या ऐसा कोई चिन्ह या लक्षण है जिससे इस अवस्थाकी आसानीसे पहचान हो जाय ? क्या ऐसा संदेह करनेका कोई कारण है कि सारा परिवार चर्मविकार, बालोंकी खुश्की, अग्निमंदता आदिसे क्यों ग्रस्त है ?

विटामिनों की कमीके ऐसे बहुतसे हलके या गंभीर चिह्न हैं जो आसानीसे पहचानमें आ जाते हैं । आप भी अपना या अपने स्वास्थ्यका निरीक्षण कर यह निश्चय कर सकते हैं कि आपको कोई विटामिन अधिक मात्रामें प्राप्त करनेकी जरूरत है या नहीं । किसी एक विटामिनकी कमी होनेकी बात कहना भी गलत ही होगा क्योंकि प्रायः ऐसा होता नहीं । अगर आपमें किसी एक विटामिनकी कमीके लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं तो यह निश्चितप्राय है कि आपको और विटामिनोंकी भी कमी हो रही है । इसका कारण यह है कि साधारणतः एक ही पदार्थमें प्रायः सभी विटामिन रहते हैं। अगर आपके आहारमें अच्छे खाद्य पदार्थ रहें तो आपको विटामिनोंकी कमी होनेकी बहुत कम संभावना रहेगी; पर अगर आप ऐसा कोई खाद्य पदार्थ ग्रहण करते हैं जिसमें उदाहरणार्थ विटामिन ए की कमी हो तो यह लगभग निश्चित है कि आपको विटामिन बी की कमी होगी और शायद विटामिन सी ई और के भी नहीं प्राप्त होंगे । इसलिए केवल एक विटामिनवाला खाद्य पदार्थ लेनेका कभी खयाल मत कीजिए ।

विटामिन ए

विटामिन ए की कमी होनेका एक स्पष्ट लक्षण देखनेमें आता है । अगर आपको यह लक्षण अपनेमें नहीं देख पड़ा होगा तो आपके परिवार या मित्रों-परिचितोंमें अवश्य देखनेमें आया होगा । यह लक्षण है रतौंधी या रातमें नजर न आना । इसका कारण है तेज रोशनी या अंधकारसे मेल बैठानेकी अयोग्यता । अगर आप अंधकारसे तेज प्रकाशमें आनेपर या

सामने एकाएक कार वगैरहकी तेज रोशनी पड़ जानेपर कुछ देरतक देखनेमें असमर्थ हों तो यह निश्चित जानिए कि आपको विटामिन ए की कमी है।

अगर तेज धूपमें बिना रंगीन चश्मा लगाये कहीं जानेमें तकलीफ होती है तो आपको विटामिन ए की कमी है। जरा यह भी गौरसे देखिए कि आपके कितने मित्र धूपमें निकलनेपर वक्रदृष्टिसे देखते हैं। जिन लोगोंको काफी विटामिन ए मिलता है उन्हें तेज धूपमें आंखें पूरी खुली रखनेमें कोई कठिनाई नहीं होगी। विटामिन ए का एक कार्य मुख, श्वाससंस्थान, लाला ग्रंथियों, पाचन-प्रणाली, प्रजननसंबंधी अंगों और त्वचाकी सतहकी रक्षा करना है। विटामिन ए का अभाव इनमेंसे किसीमें अस्त-व्यस्तता ला सकता है और उसकी थोड़ी भी कमी इनमेंसे एक या सबको इतना निःशक्त बना दे सकती है कि वे रोग-संक्रमणके क्षेत्र बन जा सकते हैं।

उदाहरणार्थ, यह निश्चित रूपमें ज्ञात है कि विटामिन ए की कमीवाले व्यक्तिका कंठ और फेफड़े सर्दीके कीटाणुओंको आमंत्रित किया करते हैं क्योंकि इन भागोंके कोशाणुओंमें विटामिन ए की कमी होनेपर सर्दीके कीटाणुओंका, जो हमेशा मौजूद रहते हैं, निरोध करनेकी शक्ति नहीं रहती। बदन रुखड़ा हो, विशेषकर कुहनी, घुटनेके ऊपर और नितंबों तथा बाहुओंपर दाने-जैसे निकले हों, बाल रूखे और तुनुक हों और प्रायः रूसीसे भरे रहते हों तो ये सब विटामिन ए की कमीके ही सूचक होंगे। शायद आप इस विटामिनकी पूर्तिके लिए कुछ ले भी रहे होंगे, पर क्या आपको पता है कि अगर आपका यकृत खराब हो तो शायद आप विटामिन ए का उपयोग कर भी नहीं सकेंगे। यह इस बातका संकेत करता है कि आप अधिक मात्रामें विटामिन लें और इस बातका निश्चय कर लें कि यकृतके लिए आवश्यक अन्य विटामिन आपके आहारमें काफी रहें।

विटामिन बी

बी वर्गमें कई विटामिन हैं और अच्छा तो यह होता कि हर एककी कमीसे उत्पन्न होनेवाले लक्षण बतलाये जाते। पर कठिनाई यह है कि इस वर्गका कोई विटामिन खाद्य पदार्थोंमें अकेले न रहकर अपने वर्गके अन्य विटामिनोंके साथ ही रहता है। कारखानोंमें ये विटामिन अलग-अलग अवश्य तैयार किये जाते हैं, पर उन्हें ग्रहण करनेसे लाभ के बजाय हानि ही अधिक होनेकी संभावना रहती है, इसलिए आपको उन्हें स्वास्थ्यकर

पदार्थोंके साथ ही ग्रहण करनेका प्रयत्न करना चाहिए। इस वर्गके कुछ विटामिनोंका तो अभी आविष्कार भी नहीं हो सका है, पर इतना ज्ञात है कि इस वर्गके अन्य विटामिनोंवाले खाद्य पदार्थोंमें वे भी अवश्य पाये जाते हैं।

अब जरा बी वर्गके विटामिनों--थियामिन, रिबोफ्लेविन, नियासिन, पायरी डाक्सिन, बायोटीन, कोलीन आदि--की कमीसे होनेवाले लक्षणोंपर दृष्टिपात कीजिए। क्या कभी आपकी जीभ, ओंठ या मुंहके कोनेका भाग फटा है जो जल्द अच्छा नहीं होता था? क्या कभी मुंहके अंदर जलन मालूम होती थी? क्या आपकी जीभ हमेशा चमकीली, लाल और चिकनी रहती है या उसमें कभी गड्ढे भी बन जाते हैं और रंग कुछ धूमिल या बैंगनी हो जाता है? क्या जीभमें कभी सूजन जान पड़ती है? ये सभी विटामिन बी की कमीके इतने निश्चित लक्षण हैं कि अगर यह विटामिन काफी मात्रामें लिया जाय तो बात-की-बातमें दूर हो जा सकते हैं।

इन विटामिनोंकी कमीके कुछ और भी लक्षण हैं जो मनुष्यों और जानवरोंमें परिलक्षित हुआ करते हैं। स्वेदग्रंथियोंका असाधारण स्राव, दम फूलना, घबराहट, नाड़ी-प्रदाह, स्मृतिविकार, आंखोंके सामने धब्बे, दस्त आना, बृहदंत्र-प्रदाह, अनिद्रा, चक्कर, सिरदर्द, मंदाग्नि, पैरोंमें कमजोरी और जलन, सुस्ती आदि इसीकी कमी होनेके परिणाम हैं। इसका यह भी अर्थ नहीं है कि प्रत्येक बृहदंत्र-प्रदाह या सिरदर्द सिर्फ विटामिन बी की कमीका परिणाम है, अन्य कारण भी हो सकते हैं। आपमें मौजूद लक्षण विटामिन बी की कमीके परिणाम हैं या नहीं--इसका निश्चय तो तभी हो सकता है जब आप काफी विटामिन बी लें और देखें कि इसका क्या प्रभाव होता है।

विटामिन सी

आजकल विटामिन सी की कमी व्यापक रूपमें होनेका एक कारण यह है कि हममेंसे प्रत्येकको अपने जीवनमें तरह-तरहके विषों--कार्बन मोनोक्साइड, खाद्य पदार्थोंमें मिले हुए कीटनाशक द्रव्यों, तंबाकूके धुएं, दवाओंके विषों आदिसे निबटना पड़ता है। शरीरमें पहुंचे हुए विषोंको निरपेक्ष बनाना विटामिन सी का ही काम है और इस प्रक्रियामें इस विटामिनका नाश भी हो जाता है। इसलिए साल-ब-साल हमारा वातावरण जितना अधिक विषाक्त होता जा रहा है उतनी ही अधिक मात्रामें

हमें विटामिन सी की आवश्यकता बढ़ती जा रही है ।

विटामिन सी की कमीका एक निश्चित लक्षण आसानीसे अंगोंका फटना या कटना है । अगर आपको यह विटामिन अच्छी मात्रामें प्राप्त हो रहा है तो हल्की दुर्घटनामें कटने-फटनेकी घटना नहीं होगी; फिर भी औसत दर्जेके लोगोंके अंगोंको इधर-उधर ठोकर लगते हुए भी कटना नहीं चाहिए। कटनेका अर्थ है किसी रक्त-नलिकाका नष्ट हो जाना और उससे निकले हुए रक्तका पार्श्ववर्ती तंतुओंमें पहुँचना । अगर आपको पर्याप्त रूपमें विटामिन सी प्राप्त हो रहा है तो आपकी रक्त-नलिकाएं बड़ी मजबूत होंगी और साधारण चोट या ठोकरसे नहीं फटेंगी । अगर आप खेती या बढ़ईका काम करते, लकड़ी चीरते, कुर्सी आदि सामान ढोते हैं तो भी कटने-फटनेकी बात नहीं होनी चाहिए ।

स्कर्वी (शीतांग) रोगके संबंधमें आप जानते होंगे कि यह रोग उन्हीं लोगोंको होता है जिन्हें विटामिन सी पर्याप्त मात्रामें नहीं मिला करता । कमजोरी, जल्द थकान मालूम होना, अम्लकी प्रधानता, हलकी सांस, अस्थियों और पेशियोंमें दर्द, रुखड़ा और सूखा चर्म, पैरका फटना जो क्रमशः ऊपर बढ़ता जाता है, मसूढ़ोंकी सूजन और उनसे रक्तका निकलना तथा उनका पिलपिला होना, दांतोंका ढीला होना, पुराने व्रण और व्रणके चिह्नोंका फिर बहने लगना, नये घावोंका जल्द न सूखना आदि स्कर्वीके मुख्य लक्षण हैं ।

यह बात तो जरूर है कि हमारे देशमें कम ही लोग इस रोगसे ग्रस्त होते हैं, पर यह भी निश्चितप्राय है कि विटामिन सी हममेंसे बहुतोंको इतना कम तो नहीं मिलता कि वे खाट पकड़ लें, पर उपर्युक्त लक्षणोंमेंसे कुछ लक्षण अवश्य देखनेमें आते हैं । क्या आपने मसूड़ोंसे खून निकलनेकी हालतमें कभी विटामिन सी की आजमाइश की है ?

शेष विटामिन

विटामिन डी, जैसा कि हम जानते हैं, बच्चोंके लिए विशेष रूपसे आवश्यक है, क्योंकि अस्थियोंके सीधे बढ़नेके लिए इसका मिलना बहुत जरूरी है । पर कैलसियम और फास्फोरसके उपयोगके लिए प्रौढ़ोंके लिए भी इसकी कम जरूरत नहीं है । अस्थियोंका कोमल और तनक होना बुढ़ापेका रोग है जिसका एक कारण है आहारसे कैलशियमका समुचित रूपमें प्राप्त न

होना। क्या इसका एक कारण विटामिन डी का अभाव नहीं हो सकता, जिससे शरीर आहारसे मिलनेवाले कैलसियमका उपयोग न कर पाता हो?

विटामिन ई पेशियों और प्रजनन-प्रणालियोंके ठीक तरहसे काम करनेके लिए बहुत आवश्यक है। गर्भपात, वंध्यात्व, मासिक स्रावकी अस्तव्यस्तता आदि विकार आमतौरसे देखनेमें आते हैं जो आहारसे विटामिन ई की अच्छी प्राप्ति न होनेके ही परिणाम हैं। अगर पशुओंको यह विटामिन देना बंद कर दिया जाय तो उनकी पेशियां कभी पुष्ट नहीं रहेंगी। यह विटामिन, जो हमें और हमारे बच्चोंको समान रूपमें मिलना चाहिए, खाद्य पदार्थोंको बारीक बनानेके फेरमें नष्ट कर दिया जाता है।

विटामिन के खाद्य पदार्थोंमें व्यापक रूपमें वितरित रहता है। रक्तके उचित रूपमें जमनेके लिए इसकी प्राप्ति आवश्यक है। अगर रक्तमें क्षरणकी या अधिक निकलनेकी प्रवृत्ति हो तो विटामिन के आहारसे पर्याप्त रूपमें प्राप्त नहीं हो रहा है।

विटामिन पी ताजे फलोंमें विटामिन सी के साथ पाया जाता है और उसीके साथ मिलकर कार्य भी करता है।

प्राप्तिके साधन

नीचे कुछ खाद्य पदार्थोंके नाम दिये जाते हैं जो विभिन्न प्रकारके विटामिनोंकी प्राप्तिके अच्छे साधन हैं।

विटामिन ए--गाजर, हरे पत्रशाक, अंडेकी जर्दी, मछलीके यकृतका तेल और ताजे फल।

विटामिन बी--सेम, हरे पत्रशाक, पूर्णान्न, अंडेकी जर्दी, गाजर गिरी, यकृत, गेहूँका अंखुवा और सोयाबीन।

विटामिन सी--ताजे पत्रशाक, नीबूकी जातिके फल, टोमैटो, ताजे फल और आलू।

विटामिन डी--मछलीके यकृतका तेल, समुद्री खाद्य पदार्थ, अंडेकी जर्दी, समुद्री मछली और सूर्य-रश्मि या धूप-स्नान।

विटामिन ई--गेहूंका अंखुवा, अंडा, हरे पत्रशाक, वानस्पतिक तेल, पूर्णान्न और गुड़।

विटामिन के--अंडा, हरे पत्रशाक, सोयाबीनका तेल, टोमैटो, मूंगफली और समुद्री पौधा।

अध्याय ८

विटामिनों और खनिज लवणोंके कार्य

विटामिनोंके प्रयोगके आरम्भिक दिनोंमें यह खयाल किया जाता रहा कि एक विटामिन एक ही तरहका कार्य करता है, पर कुछ ही दिनोंके अंदर यह पता चल गया कि एक ही कार्य पर कई विटामिनोंका असर होता है और हर एक विटामिनका कार्य विशेष प्रकारका न होकर साधारण रूपमें हुआ करता है--दरअसल एक विटामिन दूसरे विटामिनों और खनिज लवणोंके कार्यका पूरक हुआ करता है। चूँकि कई विटामिन आपसमें मिलकर कार्य करते हैं इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि कोई एक विटामिन दूसरेसे अधिक प्रभावकर होता है। अगर अन्य विटामिनोंको छोड़कर किसी एक विटामिनका उपयोग किया जाय तो उससे उतना अधिक लाभ नहीं होगा। अब यह निश्चयात्मक रूपमें, प्रमाणित हो गया है कि विटामिनों और खनिज लवणोंकी परस्पर क्रिया-प्रतिक्रिया हुआ करती है।

एक प्रसिद्ध वैज्ञानिकका कहना है कि अनेकानेक प्रमाणोंसे यह स्पष्ट होता है कि विटामिनोंका कार्य एक-दूसरेसे इस कदर संबद्ध है कि अगर एक विटामिन पर्याप्त रूपमें न मिले तो दूसरेकी उपयोगितामें कमी आ जायेगी और इसके कारण कार्यमें जो अस्तव्यस्तता आयेगी उसके संबंधमें यह निश्चय नहीं किया जा सकता कि यह अमुक विटामिनके ही अभावका परिणाम है। यही कारण है जिससे कई तरहके विटामिनों और खनिज लवणोंका उपयोग करनेकी राय दी जाती है।

परस्पर क्रिया-प्रतिक्रिया और एक दूसरेकी कमी पूरी करनेवाले कुछ विटामिनों और खनिज लवणोंका यहां उदाहरणके रूपमें नामोल्लेख किया जा सकता है। लोहा, कोबाल्ट, तांबा और मैंगनीज रक्तके लोहित वर्णके निर्माणके लिए आवश्यक हैं। नाड़ी-संस्थानोंके लिए बी कम्प्लेक्सके महत्त्वपर बहुत जोर दिया जाता है, पर इसके लिए तांबेका होना परमावश्यक है। कैरोटीनका उपयोगमें आना विटामिन ई की विद्यमानतापर निर्भर है। विटामिन ए की प्रजननके लिए विटामिन ई की ही तरह नितांत आवश्यक है। विटामिन ए, सी और ई अस्थिके निर्माणके

लिए भी आवश्यक हैं और कार्बोजके समुचित उपयोगके लिए फास्फोरस, बी वर्गके विटामिन और मैंगनीसियम आवश्यक होते हैं। विटामिन डी कैलसियम और फास्फोरसके उपयोगमें सहायक होता है।

अभाव क्यों ?

कई प्रकारके विटामिनोंके उपयोगकी आवश्यकता कई अवसरोंपर देखी जा चुकी है। इनकी आवश्यकताके कुछ कारण हैं खान-पानकी बुरी आदतें, खाद्य पदार्थोंका गलत चुनाव, असंतुलित आहार, पुराना पड़ा हुआ खाद्य पदार्थ, पाकक्रियाद्वारा निर्जीव बनाया हुआ खाद्य पदार्थ, मिलमें बारीक बनाया हुआ पदार्थ आदि। इन अवस्थाओंमें हममें विटामिनोंकी आवश्यकता प्रस्तुत हो जायगी और विभिन्न प्रकारके खाद्य पदार्थोंद्वारा उनकी पूर्ति करनी पड़ेगी।

हमारी धरतीमें बहुतसे महत्त्वके तत्त्वों और खनिज लवणोंका बहुत कुछ अभाव हो गया है जिनका उपयोग कर पौधे विटामिनोंका निर्माण करते हैं। इस तरहकी धरतीमें उपजाये हुए खाद्य पदार्थोंमें विटामिनोंका अभाव होना बिल्कुल स्वाभाविक है। प्राकृतिक रूपमें प्राप्त होनेवाले विटामिनोंमें अन्य विटामिन भी मिले रहते हैं। इस तरहके मिश्रणमें विटामिन, खनिज लवण, एनजाइम, हारमोन आदि बहुतसे ज्ञात और अज्ञात तत्त्व रहते हैं जो सब मिल-जुलकर पोषणके उपयोगमें आनेमें सहायता प्रदान करते हैं।

संश्लिष्ट विटामिन

मिश्र या संश्लिष्ट रूपमें प्राप्त होनेवाले कार्बनिक विटामिन एक दूसरेसे पृथक् भी किये जा सकते हैं, पर उनका प्राकृतिक रूपमें रहनेवाला यह संबंध समाप्त हो जायगा और विटामिनोंके प्रभावमें भी फर्क पड़ जायगा। उन विटामिनोंको आपसमें मिलाकर फिर उनका वैसा ही संयोग प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। प्रयोगमें देखा गया है कि प्राकृतिक रूपमें प्राप्त विटामिन ई की शक्ति प्राकृतिक संयोगसे अलग होनेपर ९९ प्रतिशत नष्ट हो जाती है। इसलिए प्रयोगशालामें तैयार किये गये ये विटामिन चाहे जितनी भी अधिक शक्तिवाले क्यों न हों, पर जबतक उनका उचित संयोग नहीं होगा, वे कभी उतने प्रभावकारी नहीं होंगे। प्राकृतिक रूपमें पाये जानेवाले विटामिन अन्य तत्त्वोंके साथ संतुलित रूपमें मिले हुए पाये जाते हैं और वे

उसी रूपमें हमारे शरीरमें पहुंचनेपर समुचित रूपमें अपना कार्य कर सकते हैं, और यही कारण है जिससे उसकी अल्प मात्रा भी शरीरमें आश्चर्यजनक कार्य कर दिखलाती है।

अज्ञात तत्त्व

इस विषयके आधुनिक साहित्यमें प्रायः यह बात देखनेमें आती है कि और भी कई विटामिन और तत्त्व हैं जिनका पता लगाना अभी बाकी है। ये अनाविष्कृत तत्त्व कार्बनिक रूपमें इन विटामिनों के साथ मिले रहते हैं। ये तत्त्व अबतक ज्ञात विटामिनों और तत्त्वोंके समान ही या अधिक महत्त्वके भी हो सकते हैं, पर प्रयोगशालामें तैयार किये गये विटामिनोंमें केवल ज्ञात विटामिन मिलाये जा सकते हैं, अज्ञात कभी नहीं मिलाये जा सकते।

विटामिनोंके संबंधमें जो अनुभव प्राप्त हुए हैं उनसे यही पता चलता है कि विटामिनों आदिके साथ रहनेवाले अज्ञात तत्त्वोंकी प्राप्ति बहुत आवश्यक है। बायोफ्लोबोनिक नामक तत्त्व, जिसका महत्त्व अब स्पष्ट हो गया है, आविष्कृत होनेके पहले संयोगमें ही रहा करता था। इसी प्रकार बी कम्प्लेक्सके संबंधमें समझा जाता था कि उसमें केवल बी १ और बी २ रहते हैं, पर कुछ ही दिनोंके बाद यह पता चला कि उसमें बहुतसे महत्त्वके तत्त्व रहते हैं जो यकृत और खमीरमें पाये जाते हैं। ये सारे तत्त्व आविष्कृत होनेके पहले बी कम्प्लेक्समें मौजूद रहते थे, पर कारखानेमें तैयार किये गये उक्त विटामिनमें इनका अभाव रहता था।

इसलिए स्वभावतः यह परिणाम निकलता है कि मिश्र या संश्लिष्ट विटामिनमें बहुतसे खाद्य तत्त्व मौजूद रहते हैं और उन तत्वोंकी पहचान होनेके पहले वे अज्ञात रूपमें ही हमें लाभान्वित किया करते हैं। इससे यह स्पष्ट है कि विटामिनोंके संबंधमें अभी बहुत-सी बातोंका निश्चय होगा और आशा है कि अभी बहुतसे अज्ञात विटामिनोंका पता लगेगा और जिनका पता लग चुका है उनके संबंधमें भी नयी बातें ज्ञात होंगी। इस दृष्टिसे प्राकृतिक रूपमें प्राप्त होनेवाले विटामिनों और खनिज लवणोंका उनके ज्ञात लाभोंके विचारसे ही नहीं, बल्कि अज्ञात बातोंके विचारसे भी बहुत अधिक महत्त्व है। यह भी संभव है कि ये अज्ञात तत्त्व ज्ञात तत्वोंके समान ही या उससे भी अधिक महत्त्वके हों।

कार्बनिक विटामिन

प्राकृतिक रूपमें प्राप्त होनेवाले विटामिनोंका महत्त्व बहुत अधिक है। यक्ष्मामें बहुत दिनोंसे लोग कॉड लीवर आयल देते रहे हैं। यह तेल विटामिन डी की प्राप्तिके लिए दिया जाता है। हो सकता है कि इसके प्रभावकारी होनेका कारण विटामिन डी के अलावा उसमें मौजूद रहनेवाले अन्य तत्त्व हों। कृत्रिमरूपसे तैयार विटामिन डी में अन्य तत्त्वोंका विल्कुल अभाव होता है।

एक वैज्ञानिकका कहना है कि बी कम्प्लेक्सके अभावके कारण होनेवाली क्लांति, शारीरिक शक्तिका ह्रास, पेशियोंका दर्द, मंदाग्नि और कब्ज केवल बी १ के प्रयोगसे दूर न होनेपर जौ आदिके खमीरसे जल्द चले जाते हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि उक्त खमीरमें जो तत्त्व रहते हैं वे विटामिन बी १ में नहीं रहते।

चिकित्सक रोगियोंके लिए विशेष प्रकारका आहार-क्रम रखा करते हैं, पर यह आहार प्रायः कई महत्त्वके खाद्य तत्त्वोंसे वंचित रहता है। इसका एक कारण यह होता है कि कुछ विशेष प्रकारके खाद्य पदार्थ किसी खास रोगमें वर्जित होते हैं। बूढ़े लोग भी प्रायः अजीर्ण, दाँतोंके अभाव या कुछ अन्य कारणोंसे बहुत-सी महत्त्वकी चीजें खाना बंद कर देते हैं जिससे वे कुछ खास महत्त्वोंसे बराबर वंचित रहा करते हैं, पर बहुत दिनोंतक चलनेवाला यह अभाव उनमें अस्वस्थता प्रस्तुत कर देता है। बराबर चलनेवाले इस प्रकारके आहारका प्रभाव संभव है वर्षों प्रत्यक्ष न हो सके, पर कमजोरी लानेवाला यह प्रभाव क्रमशः बढ़ता रहता है और एक दिन व्यक्तिको रोगी बनाकर ही दम लेता है।

अभावजन्य लक्षण

विटामिनों और खनिज लवणोंके अभावके कुछ लक्षण हैं--क्लांति, सुस्ती, निर्बलता, शक्तिकी कमी, धड़कन, हृदयकी पेशियोंका विकार, पेशियोंकी क्षीणता, यौनांगोंकी क्षीणता, त्वक्-प्रदाह, रातमें कम देख पड़ना, पाचनकी गड़बड़ी, मानसिक निर्बलता, वजनकी कमी, दांतोंमें गड्ढोंका पैदा होना, चक्कर, कब्ज, क्षुधाका अभाव, त्वचा और बालोंकी शुष्कता, अनिद्रा, जीभकी सूजन और लाली, रक्ताल्पता, बाढ़की कमी,

रोगकी निरोध-शक्तिका ह्रास, रक्त-संचालनकी गड़बड़ी, तंतुओंमें ठीक तरहसे ओषजनीकरण न होना, रसोंके स्रावमें कमी आदि।

कुछ लोगोंका कहना है कि बहुतोंके संबंधमें आर्थिक अवस्था इस स्थितिका कारण हुआ करती है, पर दरअसल यह बात पूर्णतः सत्य नहीं है। बहुतोंके संबंधमें इस विषयका ज्ञान न होना ही मुख्य कारण हुआ करता है। यह अभाव रातों-रात प्रस्तुत नहीं हो जाता। इसकी मात्रा रोज-रोज कुछ बढ़ती रहती है। इस अभावमें मुख्य बात आहारकी मात्राकी कमी नहीं, बल्कि आहारका ही उपयुक्त न होना है।

औसत दरजेके लोगोंमें लगभग ९० प्रतिशतका आहार अनुपयुक्त होता है और पर्याप्त विटामिन तो कम-से-कम ५० प्रतिशत लोगोंको नहीं मिला करता। सच पूछिए तो विटामिनवाले अच्छे खाद्य पदार्थोंके चुनावकी ओर लोगोंका उतना ध्यान भी नहीं रहता।

इन विटामिनोंके अभावके कारण ही हममें तीव्र और जीर्ण रोगोंके निवारण और निरोधकी शक्ति कम हो जाती है। शरीरके रक्षक तत्त्वोंके निर्माणपर विटामिनोंका बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है, उनकी कमी होनेपर उनका कम निर्माण होता है जिससे हमारी प्राकृतिक निरोधशक्ति कम हो जाती है।

अभावकी अवस्थाका आरंभमें ठीक-ठीक ज्ञान नहीं हो पाता और यही कारण है जिससे उनके सुधारकी ओर हमारा ध्यान नहीं जाता और हम आहार संबंधी इस त्रुटिको अस्वस्थता और रोगका कारण न मानकर अन्य बातोंको ही कारण माना करते हैं।

अध्याय ९

शरीरके लिए खनिज द्रव्योंका महत्त्व

भारत-जैसे कृषिप्रधान और उर्वरा भूमिवाले देशके निवासियोंको खनिज द्रव्योंकी न्यूनताका शिकार नहीं होना चाहिए, फिर भी बहुतसे लोगोंमें इसका अभाव देख पड़ता है जिसका अर्थ यह हुआ कि उनका शरीर और स्वास्थ्य जैसा होना चाहिए, वैसा नहीं है। इन मूल्यवान् द्रव्योंको कामचलाऊ नहीं; बल्कि पर्याप्त मात्रामें ग्रहण करनेपर ही अच्छे स्वास्थ्यकी आशाकी जा सकती है। इसके साथ ही यह भी जानना आवश्यक है कि शरीरका निर्माण किन मुख्य द्रव्योंसे होता है और वे किस प्रकार निर्माण तथा अन्य कार्य करते हैं।

वास्तविक धन

अमेरिका-निवासी अपने देशको सबसे धनी मानते हैं। यह सत्य है कि उनके पास बहुमूल्य खनिज द्रव्य--सोना, चांदी, प्लैटिनम और संसारको त्रस्त करनेवाले अणुबमका जनक यूरेनियम--बहुत अधिक परिमाणमें मौजूद हैं, पर हम पूछते हैं कि क्या ये ही उनके लिए बहुमूल्य खनिज द्रव्य हैं? नहीं, बहुमूल्य खनिज द्रव्योंसे हमारा अभिप्राय कैलसियम, लौह, आयोडिन, फास्फोरस आदि अदने खनिज तत्त्वोंसे है जो साधारण खाद्य पदार्थोंमें पाये जाते हैं, पर मानव-शरीरके लिए उनका इतना अधिक मूल्य है कि उसका अनुमान भी नहीं किया जा सकता। वे उन द्रव्योंसे भी अधिक मूल्यवान् हैं जो किसी देशकी सांपत्तिक अवस्थाके परिचायक माने जाते हैं।

संसारकी सारी स्वर्णराशि शरीरमें वर्तमान कैलसियमको नहीं बदल सकती, फिर भी हर छह वर्षपर शरीर उसे बदल दिया करता है। यूरेनियमकी थोड़ी-थोड़ी-सी मात्राके लिए राष्ट्र आपसमें युद्ध करते हैं, पर सेर-दो-सेर कौन कहे, दस टन यूरेनियम भी लोहाभावसे उत्पन्न रक्ताल्पतासे शरीरको नहीं बचा सकता। संसारमें ऐसी कोई बहुमूल्य धातु नहीं जो शरीरके स्वास्थ्यकी ही नहीं, बल्कि जीवनकी रक्षा करनेवाले इन तुच्छ खनिज द्रव्योंके सामने हतप्रभ न हो जाय।

अभाव क्यों ?

फिर ऐसा कौन-सा कारण है जिससे ऐसी शस्य श्यामला भूमिके निवासियोंको ये परमावश्यक खनिज द्रव्य पर्याप्त मात्रामें नहीं प्राप्त हो रहे हैं ? इसके कई कारण हैं। एक कारण तो है खाद्य पदार्थोंको तरह-तरहकी पाक क्रियाओं द्वारा स्वादिष्ट बनानेका प्रयत्न, जिससे उनमेंके ये द्रव्य बहुत कुछ नष्ट हो जाते हैं। दूसरा कारण है धरतीका दिनोंदिन निःसत्त्व होते जाना, जिससे हमारे खाद्य पदार्थ इन आवश्यक द्रव्योंसे बहुत कुछ वंचित हो जाते हैं। इनके अलावा एक कारण खाद्य पदार्थोंका गलत चुनाव भी है।

धरती और उनमें उत्पन्न होनेवाले खाद्य पदार्थोंकी अवस्थासे परिचित कृषिशास्त्रियोंका कहना है कि हम प्रतिवर्ष धरतीसे इन पदार्थोंको जिस परिमाणमें ग्रहण करते हैं उससे बहुत कम उसे लौटा रहे हैं और यही धरती या खाद्य पदार्थोंकी वर्तमान शोचनीय अवस्थाका कारण है। ऐसी स्थितिमें जबतक हमारे कृषक और जनता धरतीकी इस बुभुक्षासे परिचित होकर उसे ये खनिज द्रव्य, जो उसमें पहले वर्तमान थे, पुनः प्रदान नहीं करती तबतक खाद्य पदार्थोंकी यही अवस्था बनी रहेगी और लोगोंको इनकी कमीकी पूर्तिकर अपनी रक्षा करनेके लिए अन्य उपायोंका सहारा लेना पड़ेगा।

लौह-तत्त्व

मानव-शरीरमें लौह बहुत कम मात्रामें--शरीरके वजनका केवल पचीस हजारवां भाग--रहता है, फिर भी अगर यह द्रव्य शरीरमें वर्तमान न हो तो हमारा जीना असंभव हो जायगा। यह शरीरके ढांचेके लिए ही नहीं, बल्कि अच्छे रक्त और उसके अंदर पाये जाने वाले रंजक तत्त्वके उत्पादनके लिए भी परमावश्यक है। यही रंजक तत्त्व प्राणद अम्लजनको अपने साथ लेकर रक्तप्रवाहमें पहुंचाता है जिससे हमें गतिशील होने, खाने-पीने तथा जीवन-धारणसंबंधी अन्य क्रियाएं करनेकी शक्ति प्राप्त होती है।

शरीरके लिए आवश्यक लौह प्राप्त करनेके लिए एक अंडा, डेढ़ पाव दूध, आध पाव आटेकी रोटी, तरकारियां, फल, दाल आदि खाना आवश्यक बतलाया जाता है। इस बातका ख्याल कर यह आसानीसे समझा जा सकता है कि यह अत्यल्प मात्रा भी प्राप्त करना कितना कठिन है। हर छह

सालपर बदलनेवाले कैलसियमकी भी हालत बहुत कुछ ऐसी ही है । विशेषज्ञोंका कहना है कि आजकल लोगोंमें इसकी बहुत कमी देख पड़ती है जिसके कारण लोगोंमें वह बल और जीव-शक्ति नहीं रह गयी है जो उनमें रहनी चाहिए थी ।

कैलसियमका महत्त्व

शरीरके लिए इस द्रव्यका बहुत अधिक महत्त्व है । यही अच्छी अस्थियों और दांतोंका निर्माण करता है, पेशियोंकी सक्रियताका नियंत्रण करता है, नाड़ी-तंतुओंकी रक्षा करता है, शरीरके किसी भागके कट जानेपर रक्त जमाकर उसका क्षरण बंद करता है, बाढ़ तथा विकासमें सहायक होता है, कोशाणुओंको अम्लता प्रदान करता है, कोशाणुओं तथा कोषिकाओंमें रक्तादिके प्रवेश और निष्क्रमणका नियंत्रण करता है जो एक प्रकारसे जीवन ही है और जलका संतुलन बनाये रखकर हृदयकी क्रिया ठीक तरहसे चलनेमें सहायक होता है जिन पेशियोंके कारण हृदयका स्पंदन होता है उनको धोते रहनेवाले रक्तमें भी इसका पर्याप्त मात्रामें रहना आवश्यक होता है । इसमें एक विशेषता यह है कि दैनिक आवश्यकतासे अधिक मात्रामें मौजूद रहनेपर भोजनसे कम मात्रामें मिलनेवाले अन्य आवश्यक द्रव्योंकी पूर्ति भी करता है । अगर हमारे शरीरमें कैलसियम आवश्यकतासे कम हो तो शरीरके तंतु मुलायम पड़कर ढीले हो जायेंगे । एक विशेषज्ञका यह भी कहना है कि अगर मनुष्य शरीरके लिए आवश्यक दैनिक मात्रासे अधिक कैलसियम ग्रहण किया करे तो उसकी जीव-शक्ति और क्रिया-शक्ति बहुत बढ़ जायगी ।

शक्ति प्राप्त करनेके उद्देश्यसे हम आहार ग्रहण करते हैं, पर हममेंसे बहुतेरे इतना अधिक खाते हैं कि वह शक्ति प्रदान करनेके बजाय शरीरमें मल एकत्र करने लगता है । फलों और तरकारियोंमें शक्ति प्रदान करनेवाले द्रव्य काफी मात्रामें वर्तमान रहते हैं, इसलिए हमारे आहारमें तरकारियां और फल कम-से-कम चालीस प्रतिशत अवश्य रहने चाहिए ।

लौहाभावका प्रभाव

जीवशास्त्रियोंका कहना है कि पुरुषमें पचपन लाख और स्त्रीमें चौवालीस लाख रक्तकण होने चाहिए । रक्ताल्पताके रोगियोंमें ये कण इस तादादमें नहीं होते । ये ही कण शरीरके कोशाणुओंमें अम्लजन पहुंचाकर

मल जलाया करते हैं, इसलिए अगर आपके शरीरमें ये कण पर्याप्त संख्यामें न हों तो इसका अर्थ यह होगा कि आपको काफी अम्लजन नहीं मिल रहा है और शरीरमें मल जमा हो रहा है। इसका परिणाम यह होगा कि क्लांति बनी रहेगी और देरतक सोनेपर भी वह दूर न होगी। अगर यही स्थिति बनी रही तो वह बढ़ती जायगी और खतरनाक हो जायगी। इस हालतमें स्वास्थ्य गिर जायगा, जीव-शक्ति कम पड़ जायगी, मस्तिष्क शिथिल हो जायगा और शरीर निःशक्त हो जायगा।

नवयुवकोंमे रक्ताल्पताका होना अफसोसकी बात है, विशेषकर उस हालतमें जब कि इसका आसानीसे निवारण किया जा सकता है। चाहे जिस दृष्टिसे आप विचार करें, इस विकारके मूलमें लौहका ही अभाव होता है जो अयुक्त आहारका परिणाम है। इसलिए हमें ऐसा ही आहार ग्रहण करना चाहिए जिसमें यह द्रव्य अधिक हो।

जरा गलगंड रोगपर ध्यान दीजिए। यह खाद्य पदार्थोंमें आयोडिनकी कमीसे होता है। खयाल करनेकी बात है कि एक छोटा-सा खनिज तत्त्व --इतना छोटा कि नंगी आंखोंसे शरीरमें यह देखा भी नहीं जा सकता--कम मात्रामें मिलनेपर हजारोंको रोग और असीम कष्टका भागी बनाया करता है।

परिपाककी समस्या

किंतु इन खनिज द्रव्योंका महत्त्व समझ लेने और यह भी जान जानेसे कि इनकी प्राप्ति कैसे होगी, समस्या हल नहीं हो जाती। सबसे बड़ा और महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या हमारा शरीर इन खनिज द्रव्योंका अभिशोषण या परिपाक कर सकता है? उदाहरणके तौरपर कैलसियमको ही ले लीजिए। अगर कोई चाहे कि मैं अधिक कैलसियम खाकर शरीर ठीक कर लूं, तो यह संभव नहीं है, इसका अभिशोषण नहीं हो सकेगा। इसे शरीरमें वितरित करनेके लिए विटामिन डी और परिपाकके लिए फास्फोरस आवश्यक होगा। इधर एक बात यह मालूम हुई है कि इसके परिपाकके लिए विटामिन सी भी आवश्यक है।

विटामिन सी ही कोलांजन (लेई जैसा एक पदार्थ जो अस्थिका पूर्ण रूप है) और कोमलास्थिका निर्माण करता पाया गया है। विटामिन डी,

फास्फोरस आदिको इनका निर्माण करनेमें सहायता देता है। यही दांतके रदिन (डेंटिन) और शरीरके ढांचेके निर्माणमें भी सहायक होता है। इससे स्पष्ट है कि विटामिन सी के अभावमें कैलसियम अपना कार्य सुचारु रूपमें नहीं कर सकता और विटामिन डी. और फास्फोरसके अभावमें इसका परिपाक भी नहीं हो सकता।

हमें अब यह भी ज्ञात है कि रक्तप्रवाहमें लौह और आयोडिनका अभाव होनेपर रक्त ऐसा स्वस्थ और अच्छा नहीं होगा कि वह कैलसियमको हृदय, तंतुओं, अस्थियों तथा अन्य भागोंमें पहुंचा सके जहां वह जीवन और स्वास्थ्यसंबंधी आवश्यक निर्माण-कार्य करता है।

अध्याय १०

भोजनमें अपेक्षित खनिज पदार्थ

प्रकृतिमें ९० से अधिक तत्त्व हैं; पर जहाँतक पोषणशास्त्रका प्रश्न है, पोषणमें मात्र १६ आवश्यक होनेसे शेष पोषणशास्त्रीके क्षेत्रके बाहर हैं। हमारा शरीर भी १६ खनिज पदार्थों अथवा रासायनिक तत्त्वोंद्वारा निर्मित है। अतः हमें अपने पोषणके लिए हमारे भोजनमें भी उनका होना आवश्यक है। स्वस्थ बने रहनेके लिए इन तत्त्वोंको शरीरको उपलब्ध होते रहना चाहिए। शरीर-निर्माणके अनुपातमें ही, हमें उनमेंसे कुछ अधिक और कुछ कम मात्रामें चाहिए।

जब इसमेंसे किसी एक या अधिक तत्त्वकी कमी होती है, तो कष्ट होता है। सभी खनिज पदार्थ शरीरको मिलते रहें, इसके लिए अपेक्षित है कि, नाना फल-सब्जी उचित मात्रामें खाये जायें। उदाहरणके लिए कहें--लोहा पालकमें भी है और पातगोभीमें भी। दोनों भिन्न स्वादकी सब्जियाँ हैं। अतः सभी खनिज पदार्थ पाते रहनेके लिए अपेक्षित यह है कि, खानेके पदार्थोंमें नित्य परिवर्तन किया जाता रहे। एक ही चीज बराबर खाते रहना स्वास्थ्यके लिए अच्छा नहीं है।

१६ तत्त्व--जिनसे हमारा सम्बंध है--ये हैं : --

१. कैल्सियम, २. पोटासियम, ३. फासफोरस, ४. सोडियम, ५. क्लोरीन, ६. सिलिकोन, ७. आक्सीजन, ८. नाइट्रोजन, ९. कार्बन, १०. हाइड्रोजन, ११. सल्फर, १२. लौह, १३. आयोडीन, १४. मैंगनीज, १५. मैग्नीसियम, १६. फ्लोरीन। इनमें कैल्सियम सबसे आवश्यक है। अतः हम उसीसे प्रारम्भ करेंगे।

कैल्सियम

कैल्सियम अति महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यह भोजनको इस रूपमें प्रभावित करता है कि, हमारी प्रणाली उसके तत्त्वका पूर्ण उपयोग कर सके। अन्य तत्त्वोंसे मिलकर कैल्सियम हमारे अस्थिपंजर और दाँतोंका निर्माण और उनकी रक्षा करता है। इस महत्त्वपूर्ण तत्त्वकी कमीके फलस्वरूप, हमारे दाँत

खराब होंगे और पोषण-तत्त्व हमें न मिल पायेंगे। स्वस्थ बने रहनेके लिए हमें इसकी नितांत आवश्यकता है। दूध, पनीर, नारंगी, नींबू, पातगोभी, मूली, मटर, शलजम, बादाम आदि इसे प्राप्त करनेके अच्छे साधन हैं।

पोटासियम

जिस व्यक्तिके शरीरमें पोटासियमका कोटा पूरा होगा, वह व्यक्ति परम स्वस्थ होगा। पोटासियम दोषोंको घटाने, अल्कलाइन तत्त्वोंकी वृद्धि करनेवाला है और ऐंटीसेप्टिक है। यह तत्त्व शरीरमें रोगमुक्त रहनेकी क्षमता देता है तथा उसे रोगनिवारण करनेके लिए सक्षम बनाता है, जो अच्छे स्वास्थ्यके लिए अत्यावश्यक हैं। सेब, नारंगी, नींबू, टमाटर, प्याज आदि पोटासियम-प्राप्तिके अच्छे साधन हैं।

फासफोरस

उच्च बौद्धिक सक्रियताके लिए तथा स्पर्श, स्वाद आदि इन्द्रियोंके सम्यक् कार्यके लिए इस तत्त्वकी आवश्यकता होती है। यह नाड़ी-मंडलकी कोषाओंका पोषण करता है तथा शरीरके अस्थिपंजरको दृढ़ भी करता है और उसमें एक लचीलापन भी रखता है। फासफोरसका ज्ञानेन्द्रियोंपर खासा प्रभाव पड़ता है तथा 'सेंसरी नर्व' और 'सिम्पैथटिक नर्व' प्रणालीके लिए यह हितकर है। हृदयकी क्रियाको प्रभावित करनेवाली नाड़ीके लिए यह बहुत ही आवश्यक है।

चोकरसमेत आटा, कनयुक्त--हाथका कुटा चावल, बादाम, चीज, संतरा, गोभी, शलजम, सेब, अंजीर, मुनक्का, गाजर, तरबूज आदि इसे प्राप्त करनेके साधन हैं।

सोडियम

सोडियमका अभाव हमारी पाचन-प्रणालीमें गड़बड़ी उत्पन्न करता है इस रासायनिक तत्त्वका प्रभाव रक्तप्रवाह, शरीरके श्रवण, गला, पेटकी दीवालों, प्लीहा तथा पैंक्रियाज (पाचक रसप्रदायक उदर समीपस्थ ग्रंथिविशेष) पर विशेष रूपसे पड़ता है। साधारण पाचनपर और शरीरद्वारा पोषणके चोषणपर इसका बड़ा प्रभाव है। भोजनमें इस पदार्थका किंचित् अभाव न होना चाहिए। पूरे मानव-शरीरमें ०.१ प्रतिशत

सोडियम है ।

क्लोरीन

यह शरीरको साफ करनेवाला पदार्थ है । इसे लोग 'शरीरका धोवी' कहते हैं। यह शरीरमें नमी सोखता है और इस रूपमें शरीरकी गंदगी सोखकर कोषाको स्वच्छ बनाता है । क्लोरीनका मांसपेशियोंपर भी खासा प्रभाव पड़ता है । भोजनमें इसे खानेका प्रभाव रक्तपर भी पड़ता है । यह मोटापा नहीं आने देता और मद्य-प्रभाव-नाशक है ।

गाजर, कचुम्बर, टमाटर, नारियल, केला, खजूर तथा नींबू इसे प्राप्त करनेके अच्छे स्रोत हैं ।

सिलिकोन

खनिज पदार्थोंमें यह एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तत्त्व है । यह शरीरको रोगमुक्त रहनेकी अधिक क्षमता प्रदान करता है तथा नाड़ीकी कोषा और दिमागको प्रभावित करता है । इसे प्राप्त होनेसे मांसपेशियाँ अधिक सुदृढ़, रक्त अधिक गरम, आँखें अच्छी, बाल चिकने तथा चेहरा चमकता होता है।

गेहूँका चोकरदार आटा, कनसमेत बिना पालिश किया चावल, जौ, पातगोभी, बादाम, अंजीर, चुकन्दर आदिमें यह पर्याप्त मिलता है ।

आक्सीजन

यदि औसत आदमीका वजन १६० पौंड हो, तो उसके कोषाणुमें ९० पौंड आक्सीजन होगा । यह आनन्दवृद्धि करनेवाला, उत्साहवर्द्धक, आशान्वितावर्द्धक है और शरीरके डाइनमोंके रूपमें काम करता है, आक्सीजन रक्तप्रवाह बढ़ाता है, मांसपेशी-प्रणालीमें उत्तेजना लाता है और मस्तिष्क अधिक काम करनेका उत्साह भरता है ।

ताजे फल, रसदार सब्जियाँ, सब्जियोंके स्वरस, तरबूज आदिके द्वारा इसे प्राप्त किया जा सकता है ।

नाइट्रोजन

हम जो हवा सांसमें लेते हैं, उसमें ४/५ नाइट्रोजन होता है । इसके

सर्वथा अभावमें जीवन ही समाप्त हो जायेगा। अकेले नाइट्रोजन सशक्त अंगोंको कमजोर बनाता है; पर यह आक्सीजन से मिला होता है और उसे ग्राह्य बनता है। यह सशक्त कोषा निर्माता तथा 'विटेलाइजर' है। चीज, बादाम, फलियोंमें यह उपलब्ध है।

कार्बन

यद्यपि यह शरीरके लिए अत्यावश्यक है; पर इसका आधिक्य शरीरको स्वतः रोगमुक्त रहनेकी क्षमता कम करता है। जितना अधिक कार्बन लिया जायेगा, उतना ही अधिक आक्सीजनकी अपेक्षा होगी। यदि कार्बन अधिक मिले और आक्सीजन कम, तो मांसपेशियाँ ढीली और कमजोर होंगी। मांशपेशियाँ गर्मी और शक्तिके लिए शर्कराकी अपेक्षा करती है, पर कार्बनको भस्म करनेके लिए मांसपेशियोंमें शक्ति उत्पादनके लिए आक्सीजनकी अपेक्षा होगी।

चीज, गिरियाँ, अंजीर, कन-समेत चावल, चोकर-समेत गेहूँका आटा आदि इसके अच्छे स्रोत हैं।

हाइड्रोजन

यह एक ऐसा तत्त्व है, जिसकी अपेक्षा हर कोषा, नाड़ी, टिशू और रक्तकी हर बूंदको है। पर, ध्यानमें रखनेकी एक बात यह है कि, हाइड्रोजनकी कमी और आधिक्य दोनों ही स्थितियाँ शरीरकी कार्यप्रणालीमें गड़बड़ी उत्पन्न करती हैं। हाइड्रोजन रक्तमें गैसोंके कारण हुई उत्तेजना शांत करता है, पसीनेवाली ग्रंथियोंको क्रियाशील बनाता है।

सब्जियोंका रस, नारंगी, संतरा, नींबू, टमाटर आदि इसके साधन हैं।

सल्फर

चिकने बाल, सौंदर्य, गुलाब-सा चेहरा प्राप्त करनेके लिए प्रचुर मात्रामें सल्फर प्राप्त करना आवश्यक है। यह शरीरको शुद्ध करता है, शरीरके क्षत भागकी मरम्मत करता है, और सक्रिय बनाकर कोषाको विजातीय पदार्थ निकाल फेंकनेको बाध्य करता है। सल्फर नाड़ीमें नयी शक्ति देता है और रीढ़की हड्डी, यकृत, गुर्दा, आँख और नाड़ीमंडल ठीकसे

काम करें इसके लिए अपेक्षित तत्त्व पहुँचाया करता है ।

पातगोभी, प्याज, गाजर, आदि इसे प्राप्त करनेके साधन हैं ।

आयोडीन

आयोडीन ग्रंथियोंके कामको ठीक करनेवाला पदार्थ है । घेघा वस्तुतः इसके अभावका द्योतक है ।

टमाटर, चुकंदर, प्याज, लहसुन, कसेरू आदिके द्वारा यह प्राप्त किया जा सकता है ।

शरीरके खनिज लवणोंमें यह नितांत आवश्यक है; क्योंकि रक्तमें आक्सीजनके लिए यही एक साधन है । रक्तमें इसकी उपस्थिति रक्तको सजीव और लाल कणोंसे युक्त बनाता है । जिस व्यक्तिके रक्तमें जितना लौह होता है, वह उतना ही सजीव और सप्राण व्यक्ति होता है । रोगोंसे संघर्षकी उसमें शक्ति होती है । रक्तमें इसका अभाव ही 'अनीमिया' (रक्ताल्पता) है।

राब, मुनक्का, खजूर, अंजीर, चुकन्दर, गेहूँका चोकर, पालक आदि इसके मुख्य साधन हैं ।

मैंगनीज

यद्यपि इसकी अपेक्षा अत्यल्प है; पर है यह महत्त्वपूर्ण । शरीरमें इसका अस्तित्व रोगमुक्त रहनेमें सहायक होता है ।

मैग्नीसियम

भोजनमें इसकी उपस्थितिसे व्यक्तिका नाड़ीमंडलपर अच्छा नियंत्रण रहता है । यह ताजगी लानेवाला है तथा 'अल्कलाइन' है । जिस पदार्थमें यह हो उसे खानेसे दस्त साफ आता है ।

फ्लोरीन

स्वस्थ रहनेके इच्छुक व्यक्तिके लिए यह भी आवश्यक है । यह भी शरीरको अत्यल्प मात्रामें अपेक्षित है ।

अध्याय ११

विटामिन और खनिज लवणोंकी गोलियाँ धोखा मात्र

'शरीरको स्वस्थ बने रहनेके लिए विटामिनों और खनिज लवणोंकी आवश्यकता है', यह बात इतने स्पष्ट रूपमें सिद्ध हो चुकी है कि, पास्त्योर, लिस्टर और कोचके अंध भक्त लोग भी यह माननेको वाध्य हो जाते हैं कि कीटाणुओंके अतिरिक्त रोगोंका कारण इन पोषक तत्त्वों अभाव भी है। आज खाद्य-पदार्थोंमें मिलावट चल पड़ी है। खाद्य-पदार्थ अधिक समयतक खराव न हों, इसके लिए विशिष्ट संस्कार किये जाने लगे हैं। खाद्य पदार्थोंकी अधिक सफाई होने लगी है। इन सबके फलस्वरूप हम खाद्य-पदार्थोंके स्वभावगत गुणोंको नष्ट कर देते हैं। इसके फलस्वरूप, यह बात भी आज सर्वमान्य-सी हो गयी है कि इस युगमें गर्भवती नारी, वीमार, शय्याग्रस्त और ४० से अधिक उम्रके लोगोंको शुद्ध रूपमें खाद्य पदार्थ न मिलनेके फलस्वरूप पूरा पोषण नहीं प्राप्त हो पाता। अतः उस क्षतिकी पूर्तिकी दृष्टिसे वहुत-से लोग विटामिनों और खनिज लवणोंकी गोलियाँ खाते हैं या इंजेक्शन लेते हैं।

और, इन गोलियोंके बनानेवाले नाना प्रकारसे आत्मप्रचार कर स्वास्थ्यार्थीकी जेबें खाली करते हैं। एक कम्पनीवाला रेडियोपर अपनी गोलियोंका विज्ञापन करते हुए कहता है:

"फूड ऐंड ड्रग ऐडमिनिस्ट्रेशन तथा विटामिनों और खनिज लवणोंका स्तरीकरण निर्धारित करनेवाली सरकारको धन्यवाद! अमुक विटामिनकी ५० एम्० जी० की टिकियामें वे ही तत्त्व हैं, जो दूसरी ५० एम्० जी० की टिकियामें----- चाहे वे भिन्न कम्पनीकी हों और भिन्न प्रकारसे बनायी गयी हों। तो फिर आप अधिक दाम क्यों देते हैं। हम उसी चीजको आधे दाममें बेचते हैं। आप भी वही करें जो आज डाक्टर और अस्पताल कर रहे हैं। अपने लिए अपेक्षित पोषक तत्त्व हमसे खरीदें।

तर्क अकाट्य लगता है। जो वस्तु १ पैसेमें मिल रही हो, उसके लिए

दो पैसे क्यों खर्च किये जायँ ? यदि दोनों एक ही चीज हैं, तो एकके बजाय दो पैसे देनेवाला मूर्ख होगा। पर, फूड ऐंड ड्रग एडमिनिस्ट्रेशन, फेडरल ट्रेड कमीशन, डाक्टरों तथा अस्पतालोंके कहनेपर भी यह बात नहीं मानी जा सकती कि, एक पैसे और दो पैसे दोनों दामोंमें एक ही चीज मिलेगी।

अब यहाँ यह समझ लेना चाहिए कि, विटामिनोंका स्तर निर्धारित करनेका अर्थ क्या होता है ? यह वस्तुतः प्रयोगशालामें पशुओंपर प्रयोग करके दवा या विटामिनका स्तर निर्धारण है। इस स्तर-निर्धारणमें एक विटामिन अथवा दवाके मात्र एक प्रभावकी जाँच की जाती है यथा चूहों और मुर्गियोंपर विटामिन डी का सूखा-निरोधी प्रभाव। इस परीक्षणमें दो गोलियोंके इतर प्रभावोंकी ओर ध्यान ही नहीं दिया जाता है। यहाँ इस बातकी ओर भी ध्यान आकृष्ट कर देना आवश्यक है कि, एक दृष्टिसे यदि चूहे या मुर्गियोंमें विटामिन डी की दो गोलियोंका एक-सा प्रभाव दीख भी पड़े, तो यह आवश्यक नहीं माना जा सकता कि, आदमीमें भी उन दोनोंका एक-सा प्रभाव होगा। इस दृष्टिसे हम यहाँ कैथरीन एच्० काऊआर्ड लिखित 'द' बायोलाजिकल स्टैंडर्डाइजेशन आव 'द' 'विटामिंस' (द्वितीय संस्करण, प्रकाशक : टिंडल ऐंड काक्स, लंदन, १९४७) का उद्धरण देना चाहेंगे।

"प्रयोगशालाओंमें जो पशु रखे जाते हैं, वे प्रायः सभी प्रयोगशालाओं में एक ही वातावरणमें रखे जाते हैं। प्रकाश, गर्मी, भोजनकी एक-सी व्यवस्था सर्वत्र रहती है। अतः इस परिवर्तनहीन अवस्थामें सही प्रभावका अनुभव असम्भव-सा है।"

उसी ग्रंथमें कहा गया है कि,

"जितनी अधिक दक्षतासे विटामिनोंका निश्चयीकरण बढ़ता जा रहा है, उतना ही यह स्पष्ट होता जा रहा है, कि, एक-से उपचारका विभिन्न पशुओंपर भिन्न-भिन्न प्रभाव पड़ता है। और, यह वैभिन्य नियंत्रणसे परे है।"

जिस भी व्यक्तिको परीक्षण-विधिका पूरा-पूरा ज्ञान होता है, वह यह जानता है कि, प्रतिफलमें कितना वैभिन्य आता है। वे यह जानते, हैं कि, एक परीक्षणमें एक 'पोटेंसी' प्रकट होगी, तो दूसरे प्रयोगमें दूसरी पोटेंसी दिखेगी। यह वैभिन्य यह सिद्ध करता है कि, दो भिन्न प्रयोग दो भिन्न तत्वोंका

परीक्षण करते हैं। प्राणिशास्त्रका हमारा ज्ञान जितना बढ़ता जाता है, और परीक्षण-विधिकी जितनी सूक्ष्म प्रक्रियासे हम परिचित होते जाते हैं तथा प्राकृतिक पदार्थोंके छिपे तत्त्व जितना ज्ञात होते जाते हैं, उसी रूपमें पुराने परीक्षणोंकी त्रुटियाँ प्रकाशमें आती जाती हैं।

इन विटामिनोंकी स्तर-निर्धारण-विधिमें कितना अंतर आया है, इसकी कहानी सुनिए। उदाहरणके लिए विटामिन ए का स्तर-निर्धारण लीजिए। १९३१ में विटामिन ए के 'यूनिट' निर्धारणकी एक विधि थी।

इस सम्बंधमें उपर्युक्त ग्रन्थमें कहा गया है कि,

"जिस निर्माणको लियोथोम्सके रसायनके ज्ञानसे पूर्व स्तरका माना जाता था, उसके सम्बंधमें नयी जानकारीके बाद यह ज्ञात हो गया कि, वह विशुद्ध पदार्थ न होकर मिश्रण है।"

फिर, १९३४ में कैटोटोनको स्टैंडर्ड माना गया, फिर, १९५० में विश्व-स्वास्थ्य-संघटनने घोषित किया :

"अबतक कैरोटीन विटामिन ए के स्टैंडर्ड-निर्धारणके लिए आदर्श माना जाता रहा है; पर १९३४ में जब कैरोटीन स्टैंडर्ड निर्माण माना गया, उस समय अंतिम सम्मेलनतक कोई संतोषजनक निर्माण न हो सका था।" (देखिए वर्ल्ड हेल्थ आर्गनाइजेशन, टेकनिकल रिपोर्ट, सिरीज ३, फरवरी १९५०, पृष्ठ ३)

अतः १९५० में वर्ल्ड हेल्थ आर्गनाइजेशनने नये स्टैंडर्डकी सिफारिश की। पर, क्या उससे बात समाप्त हो गयी? बात समाप्त होना दूरकी बात थी। फरवरी १९५७ में 'न्यूट्रिशन रिब्यूज' में 'आइसोमेरिज्म आव विटामिन ए' शीर्षकसे एक लेख प्रकाशित हुआ। उसमें कहा गया था :

"यद्यपि विटामिन ए और उसके प्रीकर्सरोंका सम्बंध कुछ समयसे हमें ज्ञात है, पर स्वतः विटामिनकी बहु-प्रकृति आधुनिक तकनीकोंसे पूर्व पूरी तरह समझा नहीं गया था। आधुनिक तकनीकके बाद अति घनिष्ठ रूपमें सम्बंधित मिश्रणोंका बिलगाव सम्भव हो सका। अतः यद्यपि कृत्रिम विटामिन ए स्वाभाविक रूपमें मान लिया गया; पर यह शीघ्र ही स्पष्ट हो गया कि, उस प्राकृतिक मूल वस्तुमें मात्र विटामिन ए नहीं था। उदाहरणके लिए विटामिन ए मछलीके यकृतके तेलमें है। उसमें सम्पूर्णकी ८५ प्रतिशत

पोटेंसी है। पर, आशंका यह की जाती है कि, प्रकृत्या उसमें अन्य 'आइसोमर' भी है। प्राणिशास्त्रीय परीक्षणसे यह बात स्पष्ट नहीं होती।...

हमने ऊपर 'प्रीकर्सर' शब्दका प्रयोग किया है। उसका अर्थ भी यहाँ स्पष्ट कर दूँ। प्रीकर्सर, विटामिनका पूर्व रूप है, जो बादमें शरीरमें जलनेपर विटामिनके रूपमें बदल जाता है। उदाहरणके लिए कैरोटीन लीजिए। सब्जियोंमें उपलब्ध विटामिन ए का यही रूप है। पर, आँतें और यकृत उस कैरोटीनको विटामिन ए में परिवर्तित कर देते हैं।

अतः यह बात स्पष्ट है कि, कृत्रिम रूपमें विटामिन ए बनानेवाली कोई कम्पनी, उस रूपमें वह विटामिन नहीं दे सकती, जिस रूपमें आप ताजी सब्जियों और फलोंसे प्राप्त कर सकते हैं।

विटामिन डी तथा अन्य विटामिनोंकी भी यही स्थिति है। १९३१ में राष्ट्र-संघके स्वास्थ्य-संघटनके प्राणिशास्त्रीय स्तरीकरणके लिए स्थायी आयोग नियुक्त किया। उसने विटामिन डी के स्तर-निर्धारणके लिए 'एर्गोस्टेरोल' निश्चित किया। पर, १९५० में विश्व-स्वास्थ्य-संघटनने घोषित किया कि एर्गोस्टेरोल विटामिन डीका ठीक प्रतिनिधित्व नही करता। और, विश्व-स्वास्थ्य-संघटनके 'क्रिस्टेलाइन' को विटामिन डी का आदर्श माना।

फिर, १९५६ में यू० राओडल और उनके सहयोगियोंने लाल ट्यूना लिवर आयलमें 'कीटोन २५०' की खोज की जनवरी १९५७ के 'न्यूट्रिशन रिव्यू' में 'अन्यू ऐंटीरिकेटिक कम्पाउंड' शीर्षकसे एक लेख प्रकाशित हुआ। उक्त लेखमें कहा गया था कि,

"कुछ समयसे विटामिन डी ३ मुख्य प्राकृतिक सूखा-निरोधी माना जाता रहा है। पर, उसकी 'पोटेंसी' की मात्रा-निर्धारणमें त्रुटियाँ आती थीं और भिन्न मात्रामें विटामिन मिलता था। अतः यह आशंका हुई कि, इसमें कोई अन्य मिश्रण मिला है।"

और, उक्त लेखमें ही 'कीटोन २५०' की उपस्थितिकी पुष्टि की गयी थी।

"यद्यपि 'कीटोन २५०' में विटामिन डी की तुलनामें चूहों और मुर्गियोंमें सूखा-निरोधी गुण दशमांश मात्रामें था; पर तेलमें उसकी

उपस्थिति विटामिनसे ५ से ६ गुना अधिक थी। अतः तेलकी क्रियामें उसकी क्रिया महत्त्वपूर्ण थी।

अतः इससे भी स्पष्ट हो गया कि, १९३१ में कृत्रिम विटामिन डीका प्रयोग करनेवाला वह नहीं प्राप्त करता था, जिसकी उसे अपेक्षा थी।

इतनी बातसे यह स्पष्ट हो गया होगा कि, विटामिनका जो स्टैंडर्ड माना जाता है, वह साल-साल कैसे बदला करता है और कितना भ्रामक है। इन विटामिन निर्माताओंकी चाहे जितनी भी आस्था फूड ऐंड ड्रग ऐडमिनिस्ट्रेशनमें हो; पर स्वतः 'स्टैंडर्ड' निर्धारित करनेवालोंको ही 'स्टैंडर्ड' पर आस्था नहीं होती। वे ही एकमात्र ऐसे लोग हैं, जो अपनी कसौटीकी खामियोंसे अभिज्ञ माने जा सकते हैं। और, यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि, एक विटामिन-निर्माता चाहे जितने अहंसे कहे कि, उसकी कम्पनीकी गोलियाँ और दूसरी कम्पनीकी गोलियाँ समान ही हैं; पर उनका कथन मात्र भ्रम है। कोई भी विटामिन निर्माता कम्पनी अपनी गोलियोंको प्राकृतिक रूपमें प्राप्त विटामिनकी तुलनामें नहीं रख सकता; क्योंकि प्राकृतिक रूपमें जहाँ विटामिन उपलब्ध है, वहाँ वह निश्चित मात्रामें और शुद्ध रूपमें उपलब्ध है तथा उसके साथ ही खानेवालेको अनेक ऐसी चीजें भी प्राप्त हो जाती हैं, जो स्वास्थ्यके लिए हितकर और आवश्यक हैं तथा गोलियाँ जिसे दे पानेमें असमर्थ हैं। प्राकृतिक रूपमें खाद्य अथवा फल-सब्जीके साथ, बहुत सम्भव है, ऐसी चीजें भी मिलती हों, जिनकी अभी हमें जानकारी भी नहीं हो पायी है। विटामिनके सिद्धान्तका जिस रूपमें ज्ञान हुआ, वह बात ही हमारी धारणाकी पुष्टिके लिए काफी है।

१७५३ में जेम्सलिंड-नामक एक स्काटिश नाविक-डाक्टरने भोजनमें ताजे फल आदिकी मात्रा बढ़ाकर स्कर्वीकी रोकथाम की। १८८२ में एक अन्य तकाकी-नामक जापानी नाविक चिकित्सकने भोजनमें मछली, मांस तथा सब्जियाँ बढ़ा कर बेरीबेरीपर नियंत्रण प्राप्त किया। १८६५ में चूसो-नामक एक फ्रांसीसीने काड-लिवर-आयलसे 'रिकेट' का इलाज किया और १८८९ में ब्लैंड सट्टनने लंदनकी पशुशालामें शेरके बच्चोंका इलाज काड लिवर आयलसे किया और उन्हें 'रिकेट' से मुक्त किया। १८९७ में ईज्कमैन नामक एक डचने चिकित्सा-जगत्के सम्मुख यह प्रदर्शित किया कि, पालिश किया चावल खिलाकर वह चिड़ियोंमें बेरीबेरीके समान रोग उत्पन्न कर सकते हैं और फिर कनसमेत हाथका कूटा चावल खिलाकर

वह उन चिड़ियोंको रोग-मुक्त कर सकते हैं। लेकिन, अपने समयकी विचारधाराके अनुरूप ईज्कमैनका विचार था कि, पालिश किये चावलमें कोई विषाक्त तत्त्व था और कनमें उस विषाक्त तत्त्वकी निवारक ओषधि थी। १९०० तक मानव-पोषणमें मात्र चिकनाई, कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन ही अपेक्षित तत्त्व माने जाते थे। १९०१ में ग्रिज्स नामक एक डचने ही 'पोषणाभावसे रोग हो सकते हैं' की बात कही। उसने ईज्कमैनके कथनकी तो पुष्टि की; पर कहा कि, चावलके कनमें कोई ऐसी चीज है, जो पालिश किये चावलमें नहीं है और उसका अभाव ही रोगका कारण है। १९०६ में ईज्कमैनने अपने प्रयोग प्रकाशित किये और ग्रिज्सके विचारों की पुष्टि की। उसी समय लगभग इंग्लैंडमें फ्रेडरिक काऊलैंड हापकिंस नामक एक सज्जनने अपने प्रयोग प्रकाशित किये और कहा कि, चूहोंको उन्होंने 'विशुद्ध' प्रोटीन, चिकनाई, कार्बोहाइड्रेट तथा खनिज लवणोंसे युक्त भोजनपर रखकर देखा और वह इस निश्चयपर पहुँचे कि, इनके अतिरिक्त खाद्यमें कोई और भी अपेक्षित पदार्थ हैं। (लगभग २० वर्ष बाद इस कामके लिए हापकिंसको 'सर' की उपाधि मिली)।

१९१२ में इस अज्ञात पोषक पदार्थका नामकरण हुआ। कैसीमीर फंकने अबतककी समस्त उपलब्धियोंका लेखा-जोखा तैयार किया और इस मतपर पहुँचे कि, पोषणाभावके रोगका कारण कोई अज्ञात पदार्थ है, जो उचित पोषणके लिए अत्यावश्यक है। उनका विचार था कि, यह पदार्थ 'एनीस' है और उसी आधार पर उसका नाम 'विटामिंस' रखा गया।

१९१५ में विसकांसिंन विश्वविद्यालयके दो विशेषज्ञोंने जिनके नाम मैक कालम तथा गेविस' थे यह निश्चित किया कि, कम-मे-कम २ पदार्थ पोषणमें आवश्यक हैं--एक तेलमें घुलने वाला और दूसरा पानीमें। तेलमें घुलनेवाली चीज 'ए' कहलायी और पानीमें घुलनशीलको 'बी' कहा गया। 'ए' मक्खन और अन्य चिकनाइयोंमें मिला और 'बी' चिकनाईहीन खाद्योंमें। तभीसे विटामिनोंके नाम अंग्रेजी अक्षरोंपर रखे जाने लगे, बादमें मैक कालम तथा मेलन ने यह सिद्ध किया कि, तेलमें घुलनेवाले दो विटामिन हैं। एकका नाम 'ए' था। दूसरेका नाम 'डी' रखा गया। लिंडकी प्रथम घोषणाके १३६ वर्ष बाद १९१९ में ब्रिटिश मेडिकल रिसर्च कौंसिल इस निष्कर्षपर पहुँची कि, बीमारीका कारण खाद्यमें पोषण-तत्त्वोंका अभाव होता है--किसी कीटाणु, वायरस या विषाक्त तत्वका होना मात्र ही रोगका

कारण नहीं है। और, आज भी इस बातकी पूरी सम्भावना है कि, कोई नया विटामिन भी मिल सकता है।

पानीमें घुलनेवाला विटामिन बी १९२७ में २ खंडोंमें विभाजित हुआ--विटामिन बी१ तया बी२। विटामिन बी१ बेरीबेरी-निरोधी था और बी२ पैलेगरा-निरोधी। शीघ्र ही यह बात ज्ञात हुई कि, विटामिन बी स्वतः मिश्रण है। उससे १९२८ मे आइनोसिटोल निकाला गया, १९३० में पैंटोथेनिक ऐसिड निकाला गया; १९३१ मे बायोटीन निकला, जिसे विटामिन एच भी कहते हैं; १९३३ में रिबोफ्लेविन निकला जो अब आधिकारिक रूपमें विटामिन बी२ कहा जाता है; १९३४ में विटामिन बी६ निकला, जिसका शास्त्रीय नाम 'पाइरीडाक्सीन' है; १९३७ में निकोटिनामाइड निकला (जो पैलेगरा-निरोधी है) १९४३ में फोलिक एसिड निकला। जिसका अपरनाम फोलासिन है; १९४८ में विटामिन बी१२ निकला (और फिर बी-काम्प्लेक्सकी कल्पना पूरी हुई)।

नैशनल रिसर्च कौंसिलने मात्र ए, बी सी, डी तथा बी-काम्प्लेक्स जातिके ३ सदस्यों थियामिन, रिबोफ्लेविन और नियासीनकी अल्पतम दैनिक आवश्यकता निर्धारित कर रखी है।

विटामिन बी६ की आदमीको कितनी दैनिक अपेक्षा है, इस सम्बंधमें १९५३ में कुछ बातें उन बच्चोंको दृष्टिमें रखकर प्रकाशित की गयी, जिन्हें डब्बोंका दूध पिलाया जाता था और जिसमें विटामिन बी६ का अभाव होता था। ओटो एबेसीने अपने शोध-निबंध रोल आव विटामिन इन मेटाबेलिज्म आव एमिनो ऐसिड्स (रिपोर्ट टू 'द' कौंसिल आन फूड्स एण्ड न्यूट्रिशन--जर्नल आव अमेरिकन मेडिकल असोसिएशन ९ जुलाई १९५७) में कहा कि,

अनेक विटामिनोंके सम्बन्धमें सिद्धान्त निर्धारित किये जा चुके हैं। पर, विटामिन बी६ की कितनी अपेक्षा है, यह बात अज्ञात होनेसे, इसके अभावग्रस्त रोगोंकी रिपोर्ट नहीं बन सकी। दूध पीनेसे यह विटामिन जितना प्राप्त होता है उतना ही पर्याप्त माना जा सकता है। यह देखा गया कि, चीज गरम करनेसे विटामिन तत्त्व घट जाता है।

पर, अभी भी अनेक तत्त्वोंकी जानकारी प्राप्त करना बाकी है। 'लेडरले बुलेटिन' में कहा गया है कि,

"अतीतके अनुभवके आधारपर, यह कल्पना कर लेनेके लिए अनेक कारण हैं कि, विटामिन-परिवारके सदस्योंकी संख्या भविष्यमें और भी बढ़ सकती है।

हमारे कहनेका तात्पर्य स्पष्ट है।

मानव-शरीरको किसी विटामिन अथवा खनिज लवणकी अपेक्षा उसके आविष्कार, पहचान तथा दैनिक मात्रा-निर्धारणके बाद नहीं होती। पोषणतत्त्व और शरीर द्वारा उसका उपयोग सदा-सदा की बात है। जो व्यक्ति ताजे फल और ताजी सब्जियोंके द्वारा विटामिनों और खनिज लवणोंकी अपनी आवश्यकता पूरा करते हैं, ये उन समस्त ज्ञात तथा अज्ञात पोषण पदार्थोंका लाभ उठाते हैं, जो उस फल अथवा सब्जीमें प्राप्य हैं। वे उनसे अधिक बुद्धिमान् हैं, जो विटामिनोंकी खोज होने, पहचाने जाने और मात्रा-निर्धारणके बाद प्रयोग करनेकी बात सोचते हैं।

अमेरिकी सेनाके 'न्युट्रिशनल मैनुअल' में कहा गया है :

"जहाँ भी सम्भव हो सके पोषक तत्त्व कृत्रिम दवाओंके स्थानपर प्राकृतिक खाद्य पदार्थोंसे प्राप्त करना चाहिए। यह बात विटामिनोंके सम्बंधमें अधिक लागू है। कृत्रिम विटामिनकी गोलियोंमें समस्त पोषक तत्त्व नहीं भी हो सकते हैं। उन गोलियोंमें उन अज्ञात अथवा अल्पज्ञात पदार्थोंका तो अभाव ही होता है, जो प्राकृतिक खाद्योंमें उपलब्ध हैं।"

प्राकृतिक रूपमें जो भी खाद्य पदार्थ है, उनके द्वारा प्राकृतिक रूपमें व्यक्तिको पोषण प्राप्त होता है। वे विटामिनों और खनिज लवणोंको प्राप्त करनेके सर्वष्ठ साधन हैं। और, उनको खाकर आप केवल ज्ञात विटामिनों और पोषक तत्त्वोंको ही नहीं प्राप्त करते; बल्कि अज्ञात पोषक तत्त्व भी प्राप्त करते हैं।

प्राकृतिक रूपमें खाद्य लेनेकी सिफारिश करते हुए, अमेरिकाकी सेनाके 'न्यूट्रिशन मैनुअल' में कहा गया है :

"इस बातकी पूरी आशंका माननी चाहिए कि, कृत्रिम विटामिन, गोलियों आदिमें सभी पोषक तत्त्व न हों। या यदि उनसे पोषक तत्त्व मिल भी सकें तो उनका परस्पर अनुपात ठीक न हो।"

और, जहाँ तक अज्ञात विटामिनोंका सम्बंध है, उनका पारस्परिक अनुपात अभी तो निश्चित नहीं है। इतिहासने यह प्रमाणित कर दिया

है कि, ये आश्रित तथा परस्पर सम्बंधित मिश्रण प्राकृतिक रूपमें ही सही रूपमें उपलब्ध हैं, न कि, कृत्रिम पदार्थोंमें।

पोषक पदार्थोंका यह पारस्परिक सम्बंध अपनेमें बहुत ही महत्त्वपूर्ण वस्तु है। ब्रिटिश मेडिकल जर्नल (१९४५) में रिचार्ड्सने यह दिखानेका प्रयास किया है कि, थियामीन अत्यधिक खानेसे पाइरीडाक्सीनकी कमी हो जाती है। जर्नल आव अमेरिकन मेडिकल (१९३९) में स्पीस, विल्टर तथा ऐशने यह प्रदर्शित करनेका प्रयास किया है कि, पेलाग्राके रोगीका इलाज यदि भोजनमें अन्य परिवर्तन न करके मात्र ऊँची पोटेंसीके नियासीनसे किया जाये, तो या तो उसे बेरीबेरी हो जाता है या रिबोफ्लेवीनकी कमी हो जाती हैं, या दोनों हो जाते हैं। यदि प्राकृतिक रूपमें उसे खाद्य-पदार्थोंके द्वारा विटामिन पहुँचाया जाये, तो यह जटिलता न होगी। व्यक्तिको बी जातिके हर विटामिन मिलते रहेंगे।

फूड ऐंड ड्रग ऐडमिनिस्ट्रेशनने अप्रैल १९५७ में एक पुस्तिका प्रकाशित की थी। उसका नाम था--"फूड फैक्ट्स वर्सेज फूड फैलिसीज''। उसका कुछ अंश पढ़िए--आँखें खोल देनेवाला है।

"अमेरिकामें जो खाद्य-पदार्थ उपलब्ध हैं, वे पोषणकी मात्रा तथा किस्मोंकी दृष्टिसे कहीं अच्छे हैं। सही खाद्य बाजारमें बिकवाकर हम नागरिकोंको पूर्ण पोषण प्राप्त करा देनेमें समर्थ हैं।"

"बाजारकी खाद्य सामग्रीकी विपुलता और स्तरके ध्यानमें न रखकर नागरिकोंकी आस्था खाद्य पदार्थोंमें कम करनेका दुष्प्रयास किया जा रहा है। विटामिनों और खनिज लवणोंके निर्माता तथा भोजनशास्त्रके कुछ तथाकथित विशेषज्ञ नागरिकोंकी आस्था प्राकृतिक भोजनपरसे डिगानेकी चेष्टा कर रहे हैं। प्रायः विटामिनों और खनिज लवणोंके निर्माता अपनी गोलियोंको रोगोंका इलाज बताते हैं। ऐसा प्रचार गलत है और उनके कारण लोग सही इलाजसे वंचित रह जाते हैं।"

"भोजनशास्त्री इस बातपर एक मत हैं कि, विटामिन और खनिज लवणोंका सही, रूपमें प्राप्त करनेका तरीका सही फल-सब्जी, चोकरदार आटा आदि खरीदना है।"

अध्याय १२

शर्करा

मनुष्य सदासे मीठेका प्रेमी रहा है। ईखसे परिचय न होनेतक वह बांस, तरबूजे, शकरकंद एवं अनेक प्रकारकी जड़ों, पत्तियों और डालोंसे चीनी बनाता था। पर आज जितनी मात्रामें चीनी बनती है उसकी तो उस वक्त कल्पना भी नहीं की जाती होगी। चीनीकी उपज और खपत बढ़ जानेपर भी कितने हैं जो चीनीके गुण-दोषपर ध्यान देते हैं? और कितनोंको यह मालूम है कि फलमें, गन्नेमे, दूध एवं अन्नमें मिलानेवाले मीठेमें बड़ी भिन्नता है ?

यों आप किसी रसायनज्ञसे पूछिए तो वह आपको चीनीके अनेक प्रकार बतायेगा पर साधारणतः हमारे भोजनमें सिर्फ पाँच प्रकारकी शर्करा उपयोगमें आती है : --

१--ईख-शर्करा--गन्नेसे बनी चीनी।

२--दुग्ध-शर्करा--दूधमें मिलनेवाली चीनी।

३--द्राक्ष-शर्करा--अंगूरमें पाई जानेवाली चीनी।

४--फल-शर्करा--फलोंका मीठा।

५--अन्न-शर्करा--अन्नके पाचनसे बनी चीनी।

अंगूर भी फल ही है पर अंगूरकी शर्करा साधारणतः फलोंमें पाई जानेवाली शर्करासे भिन्न जातीय है।

अन्न कच्चा खानेपर उतना मीठा नहीं प्रतीत होता पर पकाये जानेपर श्वेतसार* शर्करामें परिणत होकर मिठासमें वृद्धि हो जाती है। और

---

* श्वेतसार विशेषतया गेहूं, चावल, बाजरा, मकईके कणों एवं और भी सभी अन्नों, फल-तरकारियोंमें विशेषतया कच्चे केले-आलूमें एवं थोड़ी-बहुत मात्रामें सभी फल-तरकारियोंमें मिलता है। अंग्रेजीमें श्वेतसारको 'स्टार्च' कहते हैं।

चबानेपर तो उसकी मिठास और भी बढ़ जाती है, वह इसीलिए कि चबाते समय उसमें मुँहकी लार मिलनेसे उसका पचना आरंभ हो जाता है। वह मिठास अन्नके आमाशय एवं छोटी आंतोंमें पहुँचनेपर और भी तेज हो जाती है एवं श्वेतसारके पूर्णतया शर्करामें बदल जानेपर ही शरीर उसका उपयोग कर पाता है। मुँह और आमाशयमें अन्नका जो पाचन होता है मशीनोंद्वारा वह कार्य बाहर ही पूरा किया जाता है, इस प्रकार अन्नजनित शर्करा तैयार होती है।

इन पाँच शर्कराओंमें हम ईख-शर्करासे अधिक परिचित हैं। यह शर्करा ईख, चुकंदर आदि कई प्रकारके पौधों और कंदोंमें तथा कुछ फलोंमें विशेषतया निम्न कोटिके खजूरमें अल्पमात्रामें मिलती है। ईख-शर्कराका उपयोग हमारा शरीर सीधे-सीधे नहीं कर सकता। पेटमें पचकर फल-शर्करामें परिणत हो जानेपर ही यह शरीरके काम आती है। ईख-शर्कराका यह पाचन श्वेतसारकी तरह मुंहमें आरंभ नहीं होता। फल-शर्करामें इसका परिवर्तन छोटी आंतें ही कर पाती हैं, अतः जब इसका उपयोग भोजनके साथ किया जाता है तब यह अन्य खाद्योंके आमाशयमें न पचनेतक यों ही पड़ी रहती है और सड़ती रहती हैं।

यदि यह कहा जाय कि सफेद, निर्मल निर्दोष-सी दिखाई पड़नेवाली ईख-शर्करा, जिसे या जिसकी बनी मिठाइयोंको हम बेखौफ खाते हैं और अपने बच्चोंको भी बड़े प्यार-दुलारसे खिलाते हैं, एक विषकी पुड़िया है, तो कम लोग इस बातपर विश्वास करेंगे, लेकिन जब आप उसके शरीरपर होनेवाले परिणामोंको समझ लेंगे तो आपको मेरे कथनका समर्थन करनेमें कोई आपत्ति न रह जायगी।

एचिसन राबर्टसन नामी वैज्ञानिकने चीनीपर कितने ही प्रयोग किये हैं। उन्होंने एक वायु और आंवसे पीड़ित रोगीको एक छटांक ईख-शर्करा पाव भर पानीमें मिलाकर पिला दी। नतीजा यह हुआ कि थोड़ी देर बाद रोगीकी तबियत बिगड़ गयी और उसे बहुत खट्टी कै हुई जिससे रोगीके दांत कोट (खट्टे) हो गये, छातीमें जलन और पेटमें दर्द होने लगा, हवा खुलने लगी। इसी रोगीको इतनी ही फल-शर्करा पिलाकर देखी गयी। इससे उसे कोई उपाधि अथवा कष्ट नहीं हुआ। श्रीराबर्टसनने अग्निमंदता और पेटके अनेक रोगियोंको फल-शर्कराका प्रयोग कराकर देखा कि किसीकी तकलीफ बढ़ी नहीं। अनुसंधान करते हुए उन्होंने देखा कि तोले-सवा तोलेसे अधिक

ईख-शर्करा सवेरे नाश्तेके साथ लेनेपर आमाशयकी श्लैष्मिक कलाएं इतनी अधिक श्लेष्मा निकालती हैं कि उसके कारण पाचन-क्रिया कई घंटेके लिए स्थगित हो जाती है।

बैंडिल नामक एक जर्मन रसायनशास्त्रीने ईख-शर्कराके प्रयोग कुत्तोंपर किये। वे कहते हैं कि सात प्रतिशत ईख-शर्कराके मिले जलका इंजेक्शन देनेपर कुत्तेके शरीरकी सारी श्लैष्मिक कलाओंमें जलन पैदा हो गयी, वे सुर्ख हो गयीं। उस शर्कराकी मात्रा दस प्रतिशत कर देनेपर उनका रंग अधिक सुर्ख हो गया, जलन भी ज्यादा हो गयी और चीनीकी मात्रा बीस प्रतिशत कर देनेपर तो कुत्तेकी छटपटाहट इतनी बढ़ गयी कि प्रयोग ही बंद कर देना पड़ा। पेटकी अनेक तरहकी बीमारियोंसे पीड़ित ऐसे अनेक रोगी मुझे बराबर देखनेको मिले हैं जिनके रोगका कारण मिठाई, शर्बत या किसी-न-किसी रूपमें केवल ईख-शर्कराका अधिक व्यवहार होता है।

ओगटा नामक डाक्टरने कुत्तोंपर ईख-शर्कराका प्रयोग करके बताया है कि उनके मांसके भोजनके साथ तोलाभर चीनी मिला देनेपर उनके भोजनके पाचनकी गति चौथाई घट जाती थी।

जर्मन लोग घोड़ों तथा सिपाहियोंसे अधिक काम लेनेके लिए उन्हें ईख-शर्करा देते रहे हैं। उनके इस प्रयोगसे पता चला है कि शर्कराके प्रयोगसे काम कुछ अधिक देरतक अवश्य होता है, पर शर्करा थोड़ी हो तभी, क्योंकि अधिक शर्कराके व्यवहारसे पेटमें जलन पैदा हो जाती है जिससे श्लैष्मिक कलाको नुकसान पहुँचता है।

हिन्दुस्तानकी गरीब जनता चीनीकी जगह अधिकतर गुड़ ही बर्तती है और अमीर लोग अपने घोड़े और गायोंको भी गुड़ खिलाते हैं। ईख-शर्करा खानी हो तो चीनीकी अपेक्षा साफ गुड़ कहीं अच्छा है, क्योंकि गुड़में चीनीकी अपेक्षा चूना और लोहा अधिक होता है जिनकी अधिकता हमारे स्वास्थ्यके लिए आवश्यक है।

ईख चूसने अथवा उसका ताजा रस पीनेसे किसी शर्कराका मुकाबला नहीं किया जा सकता। इससे सफेद चीनी बनानेमें मिठासके अलावा उसके सभी उपयोगी तत्त्व नष्ट हो जाते हैं। स्वस्थ अवस्थामें तो गन्नेका रस एक बढ़िया पेय है। कई रोगोंमें भी यह उपयोगी सिद्ध होता है, पर मीठे फलोंके रसकी तुलनामें भारी होनेके कारण तीव्र रोगोंमें अथवा कमजोर पाचन

शक्तिवाले रोगियोंके लिए उतने कामका नहीं है ।

द्राक्ष-शर्करा

यह विशेषतः अंगूर में मिलती है, दूसरे फलोंमें यह लगभग फल-शर्करा जितनी ही होती है । श्वेतसार एवं ईख-शर्करा पचकर द्राक्ष-शर्करामें परिणत होनेके बाद शरीरके उपयोगमें आते हैं । शरीरको शक्ति विशेषतः द्राक्ष-शर्करासे ही मिलती है । शहदमें फल शर्करा एवं द्राक्ष-शर्करा समभागमें होती है । मधुमेहके अनेक रोगियोंको ईख-शर्करासे चीनी आने लगती है, पर फल-शर्करा उन्हें कोई नुकसान नहीं पहुँचाती । मधुमेहकी चिकित्सामें फल बहुत बार बहुत उपयोगी सिद्ध होते हैं ।

ग्लूकोज (जो डिब्बोंमें भरकर आता है एवं रोगियोंको दिया जाता है) अन्नको एक खटाई के साथ उबालनेसे बनता है । उबालनेकी क्रिया अन्नके श्वेतसारको जैसा कि अन्न का आमाशयमें पाचनके बाद होता है, द्राक्ष-शर्करामें परिणत कर देती है । यह अन्नसे बनी चीनी (ग्लूकोज) हिसाबसे सस्ती चीज है, पर नफाखोरी इसे महँगे दामों बिकवाती है । ईख-शर्करासे यह आधी मीठी होती है ।

दुग्ध-शर्करा

यह केवल पशुओंके दूधमें मिलती हैं । अन्य सभी शर्कराएं किसी-न-किसी मात्रामें अनेक वनस्पति वर्गीय खाद्योंमें मिल जाती हैं पर दुग्ध-शर्कराके संबंधमें यह बात नहीं है । अन्य शर्कराओंके मुकाबलेमें इसका पाचन एवं समीकरण बड़ी कठिनाईसे होता है एवं उनकी तुलनामें इसमें सड़न भी बड़ी देरीसे पैदा होती है । पर एक प्रकारके ऐसे कृमियोंके संपर्कमें, जो दूधको खट्टी बना देते हैं, आते ही इसमें खमीर पैदा हो जाता है। वे कृमि तो आमाशयमें हमेशा मौजूद मिलते हैं ।

अन्न-शर्करा से दुग्ध-शर्कराके पाचनमें चौगुना वक्त लगता है । इस वजहसे इसका कुछ हिस्सा बे-पचे ही बड़ी आंतोंतक पहुँच जाता है और वहाँ इसकी उपस्थितिके कारण बड़ी आंतोंमें स्थित शत्रु कृमि जिनके कारण अनेक रोग होते हैं, नष्ट होने लगते हैं, एवं मित्र कृमियोंकी संख्या बढ़ जाती है । इस प्रक्रियाके फलस्वरूप मलकी दुर्गंध नष्ट हो जाती है, वायु शांत हो जाती है एवं कब्ज चला जाता है । यह नतीजा चार-पांच दिनतक लगातार नौ-दस

औंस दुग्ध-शर्करा दिनभरमें तीन बारमें लेनेसे निकल सकता है ।

ईख-शर्कराके बदलेमें

अब आप पूछेंगे कि तो फिर चीनी न खायें ? तो बदलें में क्या खायें ? चीनीके बदलेमें आप खजूर, मुनक्का, अंजीर, छुहारे एवं शहदका उपयोग कर सकते हैं । इनसे आपकी चीनीसे प्राप्त होनेवाली तृप्ति तो होगी; पर संभवतः आप इनकी मिठाई न बना सकेंगे या बहुत कम तरहकी बना सकेंगे। पर यदि आप स्वस्थ रहना चाहते हैं तब तो आपको मिठाई का मोह छोड़ना ही पड़ेगा । इन मीठे फलोंसे सिर्फ आपकी चीनीकी ही माँग पूरी नहीं होगी, आपको इनसे कुछ प्रोटीन भी मिलेगी, जो मांस-पेशियोंको बढ़ानेके लिए आवश्यक है । लोहा मिलेगा जो खूनको लाली देता है; चूना मिलेगा जो शरीरकी हड्डियोंको मजबूत बनाता है; विटामिन मिलेंगे, जिनका रोगोंसे बचनेके लिए हमारे भोजनमें होना आवश्यक है । ईख-शर्करामें ये सब तत्त्व जरा भी नहीं होते । अतः जो ईख-शर्करा का व्यवहार करता है उसके शरीरमें लोहे और विटामिनोंकी कमी पड़ जाती है, जिसके फलस्वरूप उसे रक्ताल्पता रोग हो जाता है, उसकी मांसपेशियाँ अशक्त रहती हैं, शरीरकी हड्डियाँ कमजोर हो जाती हैं एवं दाँत खराब हो जाते हैं ।

अतः ईख-शर्कराका फल-शर्करासे कोई मुकाबला नहीं है । ईख-शर्कराको यदि अधिक पानी मिलाकर न लिया जाय तो वह आंतोंमें जलन उत्पन्न करती है एवं वहाँ दाने पैदा हो जाते हैं, जो कभी-कभी जीभ पर भी दिखाई देते हैं । मधुमेह का कारण तो यह होती ही है । अतः इस शर्कराका उपयोग न करना ही अच्छा है ।

चीनी खानेकी आदत भी तंबाकू या शराब पीनेकी आदतके समान ही है । बहुतसे लोग हैं जो चीनी नहीं खाते । पुराने जमानेमें चीनीका बहुत ही कम व्यवहार होता था । जिन्हें चीनी खानेकी बुरी आदत पड़ गयी है, उन्हें चाहे जैसे इस पर विजय पानी चाहिए ।

ईख-शर्कराके बदले मीठे फलोंका उपयोग स्वास्थ्यदायक है । इन्हें, विशेषतया खजूर यदि भोजनकी जगह भरपेट खाया जाय तो भी नुकसानदेह नहीं है । केवल मीठे फलों एवं दूधके आहारद्वारा अनेक रोगोंसे मुक्ति मिलती है ।

मीठेके रूपमें विष

कोलतारसे अनेक द्रव्योंकी तरह एक सैक्रिन नामक द्रव्य भी निकलता है। यह ईख-शर्करासे २८० गुना अधिक मीठा होता है। कई डाक्टर इसे मधुमेहके रोगीको चीनीके बदलेमें देते हैं। शहरके बड़े-बड़े शर्बत, लेमोनेड, चायवाले, अपने शर्बतको पतला बनाने एवं चीनीका खर्च बचानेके लिए चोरी-चोरी इसका उपयोग करते हैं। अन्वेषणद्वारा ज्ञात हुआ है कि ईख-शर्करा हृदयकी गतिको बढ़ाती है। पर सैक्रिन हृदयकी गतिको मंद करती है एवं उसे कमजोर बनाती है। कोलतारमें कई ऐसी चीजें होती हैं जो हृदयके लिए जहरका काम करती हैं, अतः सैक्रिन हृदयको कमजोर बनाती हो तो कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। आश्चर्य है कि डाक्टर इसे अपने रोगीको चीनीके बदलेमें देते हैं। यदि ईख-शर्कराका व्यवहार भाड़में गिरना है तो सैक्रिनका व्यवहार भाड़में से निकलकर भट्टीमें पड़नेसे कम नहीं है।

अध्याय १३

नमकका स्वास्थ्यपर प्रभाव

प्राकृतिक और खनिज नमक

मैं शुरूमें ही यह मान कर चलता हूँ कि नमककी, उस नमककी जो हम खाते हैं हमें जरूरत नहीं है। वह खनिज है, अतः त्याज्य है। पर नमककी--सोडियम क्लोराइडकी--शरीरको उसी प्रकार आवश्यकता होती है जिस प्रकार लोहे, चूने, आयोडीन और ताँबे आदिकी। जिन तत्त्वोंसे नमक बना है उसकी मात्रा हमारे शरीरके द्रव पदार्थोंमें उल्लेखनीय रूपसे पायी जाती है। और यह नमक प्रकृतिकी ओरसे प्रायः सभी खाद्योंमें प्रस्तुत है। देखिए--

पदार्थों के नाम	प्रतिशत नमक
मक्खन	.०२
अंडेकी जर्दी	.०२
फल	.०६
तरकारियां	.१०
पत्तीदार तरकारियां	.१५
अन्न	.०१ से .१० तक
दूध	.१५ से .१८ तक
मांस	.१०
अंडेकी सफेदी	.१९

हमारे भोजनमें यदि ऐसे ही खाद्य हों जिनमें प्राकृतिक नमककी मात्रा कम हो तो हम नमक छोड़नेकी इच्छा करनेपर भी उसे न छोड़ पायेंगे। शरीरकी नमककी भूख, उसकी कमी, हमें हमेशा परेशान करती रहेगी, हमें कुछ खोया-खोया-सा लगेगा और यदि हमने हठसे शरीरकी इस

जरूरतकी ओर ध्यान न दिया तो जरूर नुकसान उठायेंगे।

नमकके बारेमें अनेक प्राकृतिक चिकित्सक बहुत कालसे तजुर्बा करते आ रहे हैं। डा० जी० एच० केलागने इस तजुर्बेके लिए हिरनोंका झुंड पाला और उन्हें नमक खिलाने लगे। फल यह हुआ कि कुछ ही महीनोंमें उनके सारे हिरन बीमार पड़ गये। और, यह तो होना ही था। उनकी हरी घासमें तो काफी नमक था ही। शरीरमें गये इस अधिक नमककी गर्मीसे वे बहुत अधिक पानी पीने लगे और उनके गुर्दे इस खनिज नमककी जलनसे खराब हो गये। पर जैसे यह कहानी सही है, वहाँ यह भी देखा जाता है कि नमक-विहीन जमीनकी हरी घास चरनेवाले पशु भी आसानीसे भोजन मिलनेके सुखको छोड़कर ऊसरकी फुनगा-फुनगीको चबाने दूर निकल जाते हैं। कितने ही तो अपनी नैसर्गिक बुद्धिसे प्रेरित होकर नमककी झीलोंके किनारेतक नमक चाटने चले जाते हैं।

हमारा आजका नमकका मोह तो हमारे बने स्वादके कारण ही है। आज भी अनेक जंगली जातियां नमकका उपयोग नहीं करतीं। मनुष्य-भक्षी जातिके चंगुलमें पड़े एक साहब बहादुरने तो नमकसे वह काम लिया जो बंदूक भी नहीं दे सकती। साहबको यह मालूम था कि ये लोग नमक नहीं खाते वरन् उससे घृणा करते हैं; अतः वे जब उन्हें खानेको तैयार हुए तो उन्होंने आँख बचाकर अपने शरीरपर नमककी शीशी उड़ेल ली। इस तरह अभक्ष्य हो जानेके कारण वे वहाँसे मार भगाये गये। क्या इस घटनासे यह निष्कर्ष नहीं निकलता कि मांसमें नमककी अधिकताके कारण इन मनुष्य-भक्षियोंको नमककी आवश्यकता प्रतीत नहीं होती, अतः वे सदा अलोना खानेवाले बने रहे? क्या फल-तरकारी न खानेवालों या कम खानेवालोंकी नमककी चाटका रहस्य इससे समझमें नहीं आता? तालिकामें देखिये, फल-तरकारियों और मांसमें नमककी मात्रा ज्यादा है।

नमक करता क्या है?

हठयोगमें एक क्रिया है शंखप्रक्षालन, अर्थात् शंखकी तरह शरीरको धोना। पानी मुख-द्वारा पिया जाता है और वह आमाशय, आंतोंको धोता हुआ गुदाद्वारा निकल जाता है। इस क्रियाकी सफलताका रहस्य है नमक। यदि पिये जानेवाले पानीमें नमक न मिलाया जाय तो आप पीकर हजार 'न्यौली', कीजिए पानी पेटमें पड़ा रहेगा। अगर नमककी मात्राके अंदाज

करनेमें चूक हुई और कहीं नमक ज्यादा पड़ गया तो फिर न्यौली करनेकी भी जरूरत नहीं रहेगी। पशुओंको नमक खिलाकर जो जुलाब कराया जाता है उसका यही रहस्य है। नमक खाकर आत्महत्या करने और नवजात शिशुको नमक चटाकर उसकी हत्या करनेकी प्रथा पुरानी है।

इसका रहस्य

जलमें नमकका एक खास अनुपात हलका-सा होनेपर हमारे शरीरकी कोषा जलको सोखती और फूलती हैं। जब इस नमककी मात्रा अधिक हो जाती है तब वे सिकुड़ जाती हैं और उनका द्रव निकल जाता है, इसलिए मांसको सुखानेके लिए और सूखे मांसको नमीसे बचानेके लिए नमकमें रखा जाता है। जब शरीरमें पानीद्वारा अधिक नमक जाता है तब हमारी आँत आदिकी कोषा अपना पानी निकालती है और आंतोंमें लगा मल इस द्रवाधिक्यके कारण छूट जाता है और पानीमें मिलकर निकल जाता है। पर, जब नमक अधिक खा लिया जाता है तो कोषोंका जल इतना निकल जाता है कि नलिकायें अवरुद्ध हो जाती हैं और मृत्यु हो जाती है। रक्त-चापका आधिक्य रक्त-नलिकाओंका अवरोध ही है और नमक न खानेसे यह अवरोध कम होता है। रक्तचापके रोगीके भोजनमेंसे नमक निकाल देना इसीलिए लाभकारक बताया गया है। और, जलोदर रोगमें भी, जिसमें कोषोंमें पानी भर जाता है, नमक बंद करनेसे लाभ होता है, क्योंकि कोषोंकी पानी रखनेकी शक्ति चली जाती है। मोटे आदमीको अलोना भोजन करानेसे उसका वजन कुछ कम हो जाता है, क्योंकि कोषोंको अपना पानी बनाये रखनेके लिए कुछ नमक चाहिए ही। उसके न मिलनेसे वे बेपानी हो जाती हैं; अतः शरीरका वजन कम हो जाता है।

मंदाग्नि

कुछ लोगोंको भोजन करते ही खट्टी डकारें आने लगती हैं। गलेतक खट्टा रस पहुँच जाता है। उन्हें अपचके सारे लक्षण प्रतीत होने लगते हैं और धीरे-धीरे उन्हें पेटकी कई तरहकी खराबियां आ घेरती हैं। यदि ऐसे लोग नमक खाना छोड़ दें या बहुत कम कर दें तो वे देखेंगे कि उनका रोग जादूकी तरह गायब हो गया है। कारण यह है कि पाचनके लिए आवश्यक

आमाशयिक रसमें हाइड्रोक्लोरिक एसिडका--जो खट्टी होती है, भाग बहुत अधिक होता है। इस एसिडकी उत्पत्ति नमकसे ही होती है। नमक न खानेपर यह बढ़ी खटाई कम होकर पेटकी तज्जनित सारी शिकायतें कम पड़ जाती हैं।

खाज और दूसरे रोग

खाज-खुजलीमें भी नमक नहीं दिया जाता; पर नमक न देकर रोगीको दाल-भात खिलाकर नहीं रखा जाता। कहा जाता है कि नमक छोड़ दो और फलाहार तथा शाकाहार करो। नमक छोड़नेसे अधिक लाभ इस रोगमें फल-तरकारियां करती हैं। वे रक्तका क्षार-तत्त्व बढ़ाती हैं और स्वास्थ्यके माने ही हैं रक्तका क्षार-प्रधान होना। फल, दूध तथा तरकारियोंमें कितना नमक होता है यह आप देख ही आये हैं। फिर फलाहारीको नमककी क्या जरूरत? गठियाके रोगमें भी रक्तमें खटाईकी प्रधानता हो जाती है; अतः ऐसे रोगियोंको भी फलाहार पर ही रखनेकी राय दी जाती है।

दमा, मिरगी, उपदंश, मधुमेह, सुजाक, नये-पुराने आँव और नासूरमें भी नमक नहीं दिया जाता और अभी-अभी पता चला है कि क्षयके रोगीको नमक न देनेसे लाभ होता है।

शहद--उसके गुण तथा उपयोग

जिस सफेद चीनीका व्यवहार आज हम अपने भोजनको सुस्वादु बनानेके लिए करते हैं, उसका आविष्कार और प्रयोग अपेक्षाकृत हालकी चीज है। सौभाग्यवश कहिए अथवा दुर्भाग्यवश प्राचीन समयके लोगोंको इसका ज्ञान न था। वे एक दूसरे प्रकारकी प्राकृतिक चीनीका व्यवहार करते थे और उसके गुणकारी प्रभावसे भी अपरिचित न थे। आज हम इस प्राकृतिक चीनीको मधु अथवा शहदके नामसे जानते हैं। प्राचीन हिंदुओंने इसकी गणना बहुत पवित्र पदार्थोमें की है। देवताओंको स्नान करानेके लिए पंचामृतमें इसका व्यवहार होता था। पुराण आदिमें जिन सात सागरोंकी कल्पना है उनमेंसे एक दूधका और एक मधुका है! इसीसे ज्ञात होता है कि वे इन दोनों पदार्थोंकी महत्तासे भलीभांति परिचित थे। अन्य देशों और जातियोंमें भी ये दोनों पदार्थ मनुष्यके लिए परम अभीष्ट कहे गये हैं। ईसाइयोंका अभीष्ट स्वर्ग--जहाँ पहुँचनेकी कामना प्रत्येक ईसाई रखता है--दूध और शहदसे भरा हुआ है। मुसलमानोंके बहिश्तमें भी पानीकी जगह शहद ही मिलेगा। प्रायः बहुतसे रोगोंमें और बहुत-सी ओषधियोंके साथ मधु सानुपात प्रयुक्त होता है। यह बात भी सिद्ध करती है कि इसमें बहुतसे रोगोंको दूर करनेकी स्वाभाविक शक्ति वर्तमान है।

दैनिक भोजनमें शहदका स्थान

पर खेदकी बात है कि साधारणतः लोग शहदको मानव-भोजनका एक आवश्यक अंग न मानकर दवाके साथ खानेकी वस्तुमात्र मानते हैं। सच पूछिए तो यह धारणा पूर्णतया भ्रांतिमूलक है। फूलोंमें जो पुष्परस अथवा पराग उत्पन्न होता है उसे मधुमक्खियाँ पान करती हैं और कुछ समयतक उदरमें रखनेके उपरांत अपने छत्तेमें ले जाकर संग्रह करनेलगती हैं। हिसाब लगाकर देखा गया है कि एक सेर मधु एकत्रित करनेके लिए मक्खियोंको ७५ लाख फूलोंका मकरंद पान करना पड़ता है। फूलोंके जिस अंशसे सुगंध फैलती है वही मधुमें भी प्रधान होता है। फूलोंका रस पहले तो जलके समान पतला रहता है पर मक्खियोंके मुँहकी मधुवाली थैलीमें जानेपर उसमें कई प्रकारके

रासायनिक परिवर्तन होते हैं जिसके फलस्वरूप वह गाढ़ा और अधिक मीठा हो जाता है। पर, अब भी उसमें जलांश काफी रहता है और मक्खियां उसे अपने छत्तेमें जमा करके और रस लाने चली जाती हैं। दूसरी मक्खियां उसे अपने परोंद्वारा सुखाकर कुछ और गाढ़ा कर देती हैं। इस शहदमें १६ से २० प्रतिशत पानी होता है। जिस शहदमें जितना ही कम पानी होगा उतने ही अधिक दिनोंतक उसे रखा जा सकेगा और वह बिगड़ने न पायगा।

साधारण चीनीको पाचनके योग्य बनानेके लिए हमारी लारका उसमें मिलना अत्यंत आवश्यक है और बिना लारके मिले चीनी विषके समान भयंकर भी हो सकती है। परंतु शहदके लिए यह आवश्यक नहीं है कि उसमें मुँहकी लार मिले ही। इसका कारण यह है कि जब मधुमक्खियां फूलोंसे पराग एकत्र करती हैं तभी उनके मुँह की लार उसमें मिल जाती है। इस प्रक्रियाके फलस्वरूप शहदमें अनेक प्रकारके गुण उत्पन्न हो जाते हैं। उनमें एक गुण यह भी है कि शहदको चाहे जितने दिनोंतक रखा जाय उसमें किसी प्रकारका विकार उत्पन्न नहीं होता। यह गुण उसमें फार्मिक एसिड पैदा होनेके कारण होता है जो शहदको बिगड़नेसे बचाता है और अनेक रोगोंको दूर करनेमें भी सहायक होता है।

शहद क्या है ?

रासायनिक दृष्टिसे विश्लेषण करनेपर शहद बड़ी साधारण-सी चीज जान पड़ेगी। यह केवल दो प्रकारकी चीनियोंसे बना हुआ यौगिक पदार्थ है। एकको अंग्रेजीमें ड्रेक्सट्रोज और दूसरीको लेवुलोज कहते हैं। पहली अंगूरकी चीनी और दूसरी फलोंकी चीनी है। शहदका ७७ प्रतिशत भाग इन्हीं दो प्रकारकी चीनियोंद्वारा बना हुआ है। किसी पदार्थको पचानेके लिए उदरकी जिन क्रियाओंकी आवश्यकता होती हैं उनमेंसे अधिकांश तो स्वयं मक्खियोंके पेटमें ही समाप्त हो जाती हैं अतएव शहद हमारे लिए सुपाच्य हो जाता है।

सफेद चीनी और शहद

दिन-प्रति-दिन हमारे भोजनमें सफेद चीनीका प्रयोग बढ़ता जा रहा है। देखनेमें तो अवश्य ही चीनी गुड़से अधिक साफ और सुंदर प्रतीत होती है। सभ्यताकी उन्नतिके साथ अधिकाधिक स्वच्छताकी मांग स्वाभाविक और स्तुत्य है। पर हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि मैलकी सफाईके साथ कहीं

वस्तु का नाम १ छटांकमें	प्रोटीन माशे	चिकनाई माशे	श्वेतसार माशे	गर्मी कैलोरीमें	चूना माशे	लोहा माशे	विटामिन ए. बी. सी. डी.
अंजीर	२.५८	.१८	४०.३८	१७३.५	.६६२	.१३१	
किशमिश	१.४४	१.०२	३८.५२	१६६.०	.५०२	.०१०	
खजूर	१.८२	.१०	४०.३६	१३६.७	.३२३	.०५०८	++
मुनक्का	१.१८	.११	४६.४५	१६१.५४	.४८५	.०१६१	
गुड़	.२२	.०४	५७.०२	२२६.३	.३६०	.०५४७	+
चीनी	.०	.०	५७.००	२२८.०	.०	.०	+
शहद	.२४	.०	४८.७२	१६५.८	.२४	.००३१	

जीवनोपयोगी तत्त्वोंका सफाया न हो जाय। गुड़के सारे प्राकृतिक लवणोंको नष्ट करके सफेद चीनी तैयार की जाती है (नीचे दिया हुआ चार्ट देखिए) सफेद चीनी सारहीन तो होती ही है उसके पचानेके लिए अधिक शक्तिकी भी आवश्यकता होती है। शहद और अन्य मीठे फलों (जैसे खजूर, किशमिश, अंजीर आदि) में जो चीनी है वह आसानीसे पच जाती है, क्योंकि हमारे रक्तकी चीनी और इन फलोंकी चीनीमें वस्तुतः कोई भेद नहीं है और वह तुरंत पेटकी गिल्टियोंके द्वारा सोख ली जाती है। पर, सफेद चीनी और हमारे रक्तकी चीनी दो भिन्न वस्तुएं हैं। इसलिए सफेद चीनी सरल प्रकारकी चीनियोंमें परिवर्तित हुए बिना पचनेके योग्य नहीं बन जाती। दूसरे शहदमें प्राकृतिक लवण भी काफी मात्रामें सुरक्षित रहते हैं। तीसरे, शहद चीनीसे बहुत अधिक मीठा होता है, अतएव, उतनी ही मिठास उससे बहुत थोड़ी मात्रामें मिल जाती है। इन सब बातोंको देखते हुए अगर हम यह कहें कि आर्थिक दृष्टिसे भी शहद चीनीसे बहुत महंगा न पड़ेगा या कम-से-कम उतना महँगा न पड़ेगा जितना प्रथम दृष्टिमें प्रतीत होता है तो अनुचित न होगा। नीचे हम एक चार्ट देते हैं, जिससे पाठकोंको विभिन्न प्रकारकी चीनियोंका आहार-तत्त्व मालूम हो जायगा--

शहदका पाचन

शहदके पचानेमें केवल ५ मिनटका समय लगता है और वह सर्वांशमें पच जाता है। संसारमें ऐसी वस्तुओंकी संख्या इनी-गिनी ही होगी जो मनुष्यको इनती जल्दी और इतनी सरलतापूर्वक शक्ति दे सकें। एक बोतल शहद जीवनशक्तिका भंडार है। इसकी थोड़ी मात्रामें इतनी अधिक जीवनशक्ति संचित है कि उसका बहुत अधिक मात्रामें प्रयोग हानिकर होगा। कब्ज, सर्दी आदि रोगोमें शहदकी चाय बहुत चमत्कारिक गुण दिखलाती है। पहले पावभर ताजा पानी लेकर गरम करना चाहिए और तब उसमें १ चम्मच (२ तोला) शुद्ध तथा बढ़िया शहद डालना चाहिए। पानी बहुत अधिक गरम न होना चाहिए, साधारण गुनगुना और पीने योग्य पानी लेना चाहिए। यह पानी एकदमसे और जल्दी-जल्दी नहीं पीना चाहिए, बल्कि धीरे-धीरे और घूंट-घूंट करके उसी तरह पीना चाहिए जैसे लोग गरम दूध अथवा चाय पीते हैं। भोजनके साथ चाय या कहवा पीनेके बदले इसका व्यवहार किया जाय तो आश्चर्यजनक लाभ होगा। कब्जके रोगी पानीको

थोड़ा गरम करके उसमें एक चम्मच साफ गेहूँका चोकर डाल दें और फिर पानी के जरा ठंडा होनेपर शहद मिलाकर पीयें तो कब्ज दूर होनेमें सहायता मिलेगी। जिन्हें नीबूकी सुगंध पसंद है वे शहदकी 'चाय' में एक कागज़ी नींबूका रस भी ले सकते हैं। यह 'चाय' सुबह खाली पेट पीनेसे विशेष लाभकी आशा की जा सकती है।

जिस समय बालकका जन्म होता है उस समय भिन्न-भिन्न देशोंमें उसे तरह-तरहकी घुट्टियां दी जाती हैं। इन घुट्टियोंसे उसकी अतड़ियां और पेट साफ हो जाते हैं। माताके पहले दिनके दूधमें भी यही गुण होता है। यदि बालकोंको इस प्रकारकी घुट्टी देनेके बदले इसी प्रकार थोड़े गुनगुने पानीमें मिलाकर शहद दिया जाय तो बहुत लाभकारी होगा। बालकोंके दूधमें जो चीनी दी जाती है वह तो निश्चित रूपसे हानिकर ही सिद्ध होती है। अगर दूधके साथ कोई मीठी वस्तु मिलाना आवश्यक ही हो तो शहदसे अच्छी वस्तु बताना कठिन होगा।

शहद और मिश्री

हमारे यहां के वैद्यों और साधारण लोगोंमें यह अजीब भ्रम फैला हुआ है कि मिश्री चीनीके दोषोंसे मुक्त है। अतएव रोगियोंको लोग चीनीके बदले मिश्री ही दिया करते हैं। जैसे गुड़की सफाई करनेसे चीनी तैयार होती है, उसी प्रकार चीनीको साफ करके रवे बना देनेसे मिश्री तैयार हो जाती है। रोगियोंके लिए तो मिश्री सोनेकी तलवारकी चोट जैसी ही काम करती है। रुग्णावस्थामें वह मिश्री पचानेके सर्वथा अयोग्य रहता है और इसका मतलब केवल शरीरमें उन विजातीय द्रव्योंकी वृद्धि करना है जिनको असाधारण प्रकारसे निकलनेको हम रोगके नामसे पुकारा करते हैं। ऐसी अवस्थामें अत्यंत आवश्यक होनेपर शहदका व्यवहार लाभप्रद होगा।

बालकोंको शहद दें

बालकोंको मीठी चीजें बहुत पसंद होती हैं और अधिकांश बालक मीठे पदार्थ बड़े चावसे खाते हैं। माता-पिता प्रायः बालकोंको चीनीसे बनी हुई चीजें खानेको देते हैं। पर, अनेक अवस्थाओंमें यह चीनी अत्यंत हानिकर प्रमाणित होती है। यह ठीक है कि बालकोंके बढ़ते हुए शरीरके पोषण और वर्धनके लिए किसी मीठे पदार्थकी बहुत आवश्यकता रहती है और इसलिए

उनकी प्रवृत्ति भी उस ओर रहती है। इसलिए सभी बच्चोंको शहद खानेको देना चाहिए। सबसे अच्छा समय सुबहके भोजनके साथ होगा। यह ध्यान रखना चाहिए कि दो भोजनोंके बीच शहद या ऐसी कोई वस्तु न खायी जाय।

हम कह चुके हैं कि मक्खियोंकी लार मिलनेके फलस्वरूप शहदमें फार्मिक एसिड उत्पन्न हो जाता है। इससे शहदमें कृमिनाशक गुण होते हैं और रोगोंके कीटाणु अधिक कालतक शहदमें जीवित नहीं रह सकते। इसलिए विशेष तौरपर आगसे जल जानेपर शरीरमें जो घाव होता है उसमें तथा अन्य प्रकारके घावोंपर भी शहद लगानेसे लाभ होता है। पानीमें शहद मिलाकर कुल्ले करनेसे मुँहके अनेक रोग दूर होते हैं।

शहदसे सौंदर्य-वृद्धि

जो लोग अपने शरीरको सुंदर और चमड़ेको अधिक चिकना और सुकोमल बनाना चाहते हैं, उन्हें सफेद चीनीसे बनी मिठाइयोंकी जगह शहदका व्यवहार करना चाहिए। आजकल चमड़ेको सुंदर बनानेके लिए जो सैकड़ों प्रकारके रोगन आदि मिलते हैं उनमें शहद काफी मात्रामें प्रयुक्त होता है। तो शरीरको चमड़ेके रास्ते शहद खिलानेसे बहुत अच्छा है कि मुँहसे सीधे शहद खाया जाय। ऐसा करना अधिक लाभकर और आर्थिक दृष्टिसे अधिक सस्ता पड़ेगा।

अन्य उपयोग

इसके अतिरिक्त शहदके और भी अनेक उपयोग तथा लाभ हैं। इससे कंठका स्वर मधुर और सुरीला होता है, शरीरका रंग निखरता है, सौंदर्यकी वृद्धि होती है, भोजन शीघ्र पचता है, खुजली, खसरा आदि रोग शीघ्र दूर होते हैं तथा इसी प्रकारके अन्य लाभ होते हैं। यदि रोटी बनाते समय आटेकी लोईमें थोड़ा शहद लगा लिया जाय तो वह रोटी अपेक्षाकृत अधिक समयतक रखी जा सकती है और जल्दी पचती है। इसी प्रकार यदि आँवले, बेल, आम आदिका मुरब्बा शहदमें डाला जाय तो उससे जो हानियाँ होती हैं वे कम हो जायंगी। सभी अवस्थाओंमें शहद गुणकारी और बलवर्धक ही सिद्ध होगा--केवल जिन लोगोंको मधुमेह रोग है अथवा जो किसी विशेष प्रकारका भोजन करते हैं उन्हें सावधानीसे काम लेना चाहिए। उन्हें शहदका प्रयोग प्रारंभ करनेके पहले किसी विशेषज्ञसे सलाह लेनी चाहिए।

अध्याय १५

फलोंका शरीरपर प्रभाव

प्रकृति फलोंको खाने योग्य रूपमें स्वयं प्रस्तुत किया करती है और वे पुरुष-स्त्री, बाल-वृद्ध--सबके लिए समान रूपमें लाभदायक और स्वास्थ्यकर होते हैं। वे मलका निष्कासन, शरीरका शोधन और कोशाणुओंका निर्माण--इन तीनों कार्योंको बड़ी खूबीके साथ करते हैं और इसका प्रभाव तीन अंगों--आमाशय, यकृत और वृक्कों--पर स्पष्ट रूपमें पड़ता हुआ देख पड़ता है। वे आमाशयमें उत्पन्न अतिरिक्त अम्लका नाश करते, वृक्कोंकी सफाईकर स्रावकी क्रिया ठीक करते और यकृत को बल प्रदान करते हैं। इन कार्योंके कारण शरीरके शेष अंग भी अपनी क्रियाएं ठीक तरहसे करने लगते हैं।

फल किसे कहेंगे ?

व्यापक रूपमें तो जानवरों और मनुष्योंके खाद्यके रूपमें काम आनेवाले पौधोंद्वारा उत्पादित बीजरूप अंश--तरकारियां, अन्न सभी फलकी श्रेणीमें आ जाते हैं, पर साधारण प्रयोगमें वृक्षादिका बीजाधाररूप वही अंश फल कहलाता है जो आप-ही-आप परिपक्व होकर मनुष्यके खाने योग्य हो जाता है, उसे आँचपर पकाने या उबालनेकी जरूरत नहीं पड़ती। इस प्रकार सेब, नाशपाती, संतरा, अंगूर, आम, केला, अमरूद आदि फल हैं। पर, कुम्हड़ा, नेनुआ, भंटा, परवल आदि फलोंमें परिगणित न होकर तरकारी और गेहूँ, चना, ज्वार, जौ आदि अन्न कहे जाते हैं।

निहित तत्त्व

फलोंमें मुख्य रूपमें प्यास बुझानेवाला छना रस और उसके अलावा अच्छी मात्रामें फल-शर्करा, विटामिन, फलाम्लयुक्त खनिज-लवण, प्रोटीन आदि होते हैं। उसमें खास तरहकी मीठी गंध और जायका कुछ खनिज द्रव्योंके कारण होता है जो उनमें मौजूद रहते हैं। प्राकृतिक रूपमें फलोंमें प्राणदायक तत्त्व अच्छी मात्रामें रहते हैं, इसलिए आप-ही-आप पके हुए फलोंको ही खाना चाहिए और नियमपूर्वक किये जानेवाले कार्योंकी ही तरह

रोज फल खानेका भी नियम होना चाहिए।

खानेसे लाभ

रोज नियमपूर्वक फल खानेसे शरीरकी बहुत-सी खराबियां दूर हो जाती हैं। कब्जके संबंधमें तो, जिससे बहुत कम लोग बच पाते हैं, यह बात विशेष रूपमें देखी जाती है। फलोंसे आंतोंको रेशे प्राप्त होते हैं जो मलके उचित विसर्जनके लिए बहुत आवश्यक हैं। ये आंतोंमें जलको रोक रखते हैं जो उनकी क्रियामें सहायक होता है। संतरा, चकोतरा आदि कुछ फल अम्लप्रधान होते हैं, पर पेटमें पहुँचनेपर वे क्षारप्रधान हो जाते हैं। वैज्ञानिकोंका कहना है कि पहलेसे ही परिपक्व होनेके कारण फलोंके पाचनमें सहायता पहुँचानेके लिए लाला रसकी आवश्यकता नहीं होती, ओषजन फलके रसका सफाई करनेवाला प्रभाव कम कर देता है इसलिए फलके रसमें देरतक हवा नहीं लगनी चाहिए, निचोड़कर निकालनेके साथ ही उसे पी जाना चाहिए।

बुढ़ापेका निवारण

अपने धोने और घोलनेवाले प्रभावके कारण फल बुढ़ापेका निवारण करता है। बुढ़ापा भी एक रोग ही है जो शरीरमें विकारके एकत्र हो जानेसे प्रस्तुत होता है। फल इस एकत्र हुए विकारको धोकर बाहर निकाल देता और नये कोशाणुओंसे शरीर का नवनिर्माण करता है। संतरा, चकोतरा, नींबू और अंगूर, जो सब-के-सब अम्लप्रधान हैं, अच्छे घोलक हैं। एक-दो महीने केवल फलोंपर रहनेका परिणाम बहुत अच्छा होता देखा गया है। मेरे एक परिचितकी अवस्था ६० से कमकी नहीं है, पर देखनेमें वे ३५ से अधिकके नहीं जान पड़ते और कहते हैं कि मैं तो २५ वर्षके तरुणों-जैसा ही अनुभव करता हूँ। वे हर साल तीन-चार सप्ताह केवल एक फल--संतरा, अंगूर या इस तरहका कोई मौसमी फल--खाकर रहते हैं और फलपर रहते समय वे फल या फलका रस इच्छा भर ग्रहण करते हैं। मनुष्य बुढ़ापेका निवारण कर सकता है, इसके वे ज्वलंत उदाहरण हैं।

मिठाइयोंके बदले फल

चीनीकी खपतमें इधर काफी बढ़ती हुई है। नाश्तेमें मिठाई खानेकी आम चाल-सी हो गयी है और सूर्योदय होते ही बच्चे हलवाईकी दुकानपर पहुँचने लगते हैं। अगर उनके अभिभावक यह जानते होते कि इन

मिठाइयोंसे क्या हानि होती है तो शायद वे उन्हें मिठाइयां खिलाना फौरन बंद कर देते। बच्चे को प्रभावित कर स्वास्थ्यके मार्गपर आसानीसे लगाये जा सकते हैं और उनमें मिठाईके बदले फल खानेकी प्रवृत्ति उत्पन्न की जा सकती है। संतरा, सेव, खजूर, किशमिश, अंजीर आदि फल मीठे होनेके साथ ही स्वास्थ्यकर भी होते हैं और ये सब आसानीसे मिठाइयोंका स्थान ग्रहण कर सकते हैं।

पाचनका सुधार

जिन बच्चोंकी पाचन-शक्ति अच्छी नहीं है उन्हें फलका प्रयोग अवश्य कराना चाहिए। छः सालके एक बच्चेको पाचन खराब होनेके कारण पूरा पोषण नहीं मिल रहा था। वह दो महीने केवल फलोंपर रखा गया। उसे एक केला और छह संतरे रोज दिये जाते थे और वह इतनेसे ही संतुष्ट हो जाता था, कभी अधिककी मांग नहीं करता था। इस आहारसे उसकी कमजोरी तो दूर हो ही गयी, उसका वजन भी बढ़ गया। अब उसकी अवस्था बारह सालकी हो गयी है और इस अरसेमें उसे कभी पाचनकी शिकायत नहीं हुई है।

संधि-प्रदाहका निवारण

एक स्त्री वर्षोंसे संधि-प्रदाहसे ग्रस्त थी। गत वर्ष वह सिर्फ खरबूजेपर लगभग तीन महीने रखी गयी और इसके परिणामस्वरूप वह बिना किसीका सहारा लिये चलने-फिरनेमें समर्थ हो गयी। वह भूखकी शांतिके लिये खरबूजा खा लेती थी और इसके अलावा और कुछ भी नहीं खाती थी। वह बिलकुल अच्छी तो नहीं हुई, पर तीन महीनेके इस आहारसे वह अपने शरीरके अंगका संचालन मजेमें करने लग गयी जो इस आहारके पहले उसके लिए बिलकुल असंभव था।

अनन्नासके ताजा रसमें पेप्सिन नामक तत्त्व होता है जिसे कंठक्षतवाले कई रोगियोंको अच्छा लाभ हुआ है। खाली पेट लेनेपर यह पाचनमें भी अच्छी सहायता करता है। जबतक कंठक्षत बिलकुल अच्छा न हो जाय, इसका रस इच्छाभर पीते रहिए।

रक्ताभाव और स्नायविक विकारमें

जिनमें रक्ताभाव या स्नायविक विकार है या जिनका स्वास्थ्य गिर गया है वे अगर संतरे या टोमैटोके रसपर रहें तो उन्हें बहुत लाभ होगा; क्योंकि इन

दोनोंके रसमें विटामिन सी अच्छी मात्रामें पाया जाता है। यह विटामिन रक्तकोशाणुओंका निर्माण करता है, जिनकी उक्त विकारोंमें कमी रहा करती है। इन विकारोंमें अंगूर भी बहुत लाभदायक सिद्ध होता है; क्योंकि उससे रक्तको लोहा अच्छी मात्रामें प्राप्त होता है जिसकी रक्तको शरीरके प्रत्येक भागमें ओषजन पहुंचानेके लिए बहुत अधिक आवश्यकता रहती है। किशमिश और झड़बेरीमें भी लोहा अच्छी मात्रामें पाया जाता है। यों तो सभी फल न्यूनाधिक रूपमें रक्तका शोधन करते हैं, पर उनमें अम्लफलोंका स्थान सर्वोपरि है। फलोंसे यह उद्देश्य सिद्ध करनेके लिए उन्हें किसी अन्य पदार्थके साथ मिलाकर नहीं खाना चाहिए। अगर सुबहमें बासी मुँह फल खाये जायँ तो अधिक लाभ होनेकी आशा की जा सकती है। फल खानेके बाद कम-से-कम एक घंटेतक कुछ भी न खाया जाय।

वातरोगमें

अगर रोज सुबह एक गिलास पानीमें एक नीबूका रस मिलाकर पिया जाय तो इससे वातरोगसे छुटकारा पानेमें बड़ी सहायता मिलती है। इससे यकृतको भी बल मिलता है। अगर नाश्ता करनेके पहले एक गिलास अनन्नासका रस पी लिया जाय तो इससे भी वातरोगमें लाभ होता है। ऐसे रोगीके शरीरकी सफाईमें अंगूरका रस भी, जो खमीर न बना हो, बहुत प्रभावकर होता है।

अंग्रेजीमें एक सूक्ति है--'ऐन एप्पल ए डे--कीप्स दि डाक्टर अवे' (एक सेब जो खाये रोज--वह क्यों करे वैद्यकी खोज)। यह सूक्ति मैंने प्रायः सुनी थी, पर यह पता नहीं था कि ऐसा क्यों कहा जाता है। इसका रहस्य उस समय खुला जब मुझे यह मालूम हुआ कि सेवमें सेविक नामक एक अम्ल (मेलिक एसिड) होता है जो आंतों, यकृत और मस्तिष्कके लिए बहुत गुणकारी है। सेबमें फास्फोरस--एक तरहका क्षार--भी होता है जो पेटको साफ ही नहीं करता, उसकी शक्ति भी बढ़ाता है।

रक्त का शोधन

फल रक्तको बहुत जल्द शुद्ध करता है और कुछ लोगोंमें चर्मस्फोटके रूपमें इसकी प्रतिक्रिया भी हो सकती है, पर इससे डरना नहीं चाहिए; क्योंकि शरीरका अम्ल बाहर निकलनेके कारण ही ऐसा होता है और स्फोट जल्द ही गायब हो जाता है। अगर फलके आहारके साथ व्यायाम, भीतर और बाहरकी सफाई आदि अन्य प्राकृतिक उपाय भी साथ-साथ चलाये जायं तो फलपर रहनेका प्रभाव और भी जल्द देख पड़ेगा।

अध्याय १६

फल तथा उनके रसका उपयोग

आदि कालसे मनुष्यके भोजनमें फलोंका भाग अधिक रहा है । फल तथा कंदमूलके भोजनका वर्णन अनेक वैदिक ग्रन्थोंमें मिलता है । और, इसमें कोई संदेह नहीं है कि फल और मेवों पर मनुष्य अनिश्चित कालतक रह सकता है, तथा अपने स्वास्थ्यको अच्छी-से-अच्छी दशामें रख सकता है । वैद्यक ग्रंथोंमें भी फलोंके उपयोग तथा उनके गुणदोषका विवेचन किया गया है । फल अपने रुचिकर स्वादके कारण सबको पसंद आते हैं उनके सिवा कि जिनकी जबान बिगड़ नहीं गयी है ।

फल पुष्टिकारक तो कम होते हैं पर उनमें विटामिन और प्राकृतिक लवण भरे रहते हैं जो हमारे स्वास्थ्यके लिए बहुत उपयोगी हैं । इनके अभावमें शरीर रुग्ण हो जाता है । कच्चे फल और तरकारियोंमें कोई अंतर नहीं है । पकते वक्त ही फलोंमें मिठास पैदा होती है जो उन्हें तरकारियोंकी तुलनामें विशेषता प्रदान करता है ।

फलोंमें न श्वेतसार होता है न चिकनाई, प्रोटीनकी मात्रा बहुत कम होती है पर उनमें मिठासकी प्रधानता होती है । इस मिठासके कारण ही फल पचा हुआ भोजन कहलाता है अर्थात् फलोंको पचानेमें हमारी पाचन प्रणालीको विशेष श्रम नहीं करना पड़ता ।

लोगोंमें यह एक बड़ा भ्रम फैला हुआ है कि फल शाम और सबेरे नहीं खाना चाहिए । कहते हैं, इससे सर्दी लग जाती है और पेट चलने लगता है। सच पूछिए तो पेटकी गड़बड़ी ठीक करनेके लिए फलसे अच्छे किसी दूसरे भोजनकी कल्पना भी नहीं की जा सकती । फलोंके रसके प्रयोगसे तो लाभ और भी जल्द होता है । कई तरहके फलोंका रस एक साथ मिलाकर भी दिया जा सकता है । स्वादके लिए खट्टे रसोंमें शहद, किशमिश, मुनक्का, अंजीर आदिका रस भी मिलाया जा सकता है । फलोंके प्रयोगसे उन्हींको गड़बड़ी होती है जो उन्हें विविध प्रकारके खाद्य पदार्थोंके साथ मिलाकर खाते हैं । संध्याके लिए फलोंसे उत्तम भोजन दूसरा नहीं हो सकता ।

गठियाके रोगीको भी फल खानेको नहीं दिये जाते । गठिया ठंडकसे

होती है और फलकी तासीर भी ठंडी होती है, यह गलत खयाल इस दैवी भोजनसे इन रोगियोंको दूर रखता है। अनुभवके आधारपर कहा जा सकता है कि केवल फलाहारसे अनेक गठियाके रोगी अच्छे हो सकते हैं।

फलोंमें जो पचा हुआ भोजन रहता है उसके कारण फल खाते ही या उनका रस पीते ही सुस्ती और थकावट दूर होकर ताजगी और ताकत मालूम होती है; क्योंकि फलके आमाशयमें पहुँचते ही शरीर उसका उपयोग शुरू कर देता है। फलोंके उपयोगसे दूसरे भोजन भी आसानीसे पचते हैं। बहुतसे फलोंमें पेप्सिन नामक एक खाद्य पदार्थ रहता है जो भोजनके पाचनमें सहायक होता है। फलोंकी उपस्थितिके कारण आमाशयके पाचक रस भी अधिक स्रवित होता है।

फलोंका कृमिनाशक प्रभाव

फलोंके रस कृमिनाशक होते हैं। उनके उपयोगसे हमारे शरीरमें स्थित रोग कीटाणु नष्ट हो जाते हैं; क्योंकि फलोमें जो साइट्रिक एसिड और मालिक एसिड होता है उनके संपर्कमें आकर कीटाणु एक क्षणके लिए भी ठहर नहीं सकते। नीबू और खट्टे सेबका रस तो इस कामको और तेजीसे करता है। यही कारण है कि अब घावोंपर नीबूका हलका रस लगा देनेके बाद उनको खुला छोड़ देनेका रिवाज बढ़ रहा है। अपने कृमिनाशक प्रभावके कारण पायरिया रोगमें नीबूका रस मुंह और दाँत साफ करनेके लिए अधिक व्यवहृत होता है। दादपर जो नीबू लगानेसे अच्छे हो जाते हैं वह इसका कृमिनाशक प्रभाव ही है। कृमिके डरसे जो लोग पानी उबालकर पीते हैं यदि वे पानीमें नीबूका रस निचोड़ कर पीयें तो वही काम निकल सकता है।

रोगोंमें रसाहार

मोटापा और पित्तदोष फलाहारसे जाते हैं। मोटापेके रोगीको यदि तीन-चार दिनका फलाहार करा दिया जाय, तो इस अवधिमें दो किलोके लगभग वजन घट जाय। फलाहारसे पेट भरता है, भोजनकी चाह कम होती है और उसमें पुष्टिकारक पदार्थ कम होनेके कारण उपवासका-सा लाभ होता है और रोगी भी नहीं घबराता। मोटे आदमीको अधिकतर फलोंपर ही रहना चाहिए और पित्त विकारवालेको शामको केवल फल खाना चाहिए। यदि ऐसे रोगी अपना भोजन पाँच-छः बजेतक समाप्त कर लें तो अधिक

लाभ होगा। ज्वरके रोगीको तो यदि कोई भोजन दिया जा सकता है तो वह फलोंका रस ही है। जर्मनीमें ऐसे रोगियोंको किशमिश, मुनक्का आदि फलोंको उबालकर उसका पानी छानकर पिलानेका आम रिवाज रहा है। अनन्नास, अनार, नीबू, नारंगी, सेब, अंगूर, मकोय, मुनक्का आदिके रसको पानीमें मिलाकर ज्वरके रोगीको बेखटके पिलाया जाता है, इस विधिसे रोगी पानी अधिक पी सकेगा और फलोंका रस भी शरीर-शुद्धिमें सहायक होगा। गुर्दे आदिकी बीमारीमें, जिसमें अधिक पेशाब लानेकी जरूरत होती है, इस विधिसे पानी अधिक पिलाया जा सकता है।

कब्ज दूर करनेके लिए फलसे अच्छा सहायक मिलना कठिन है। इस रोगको दूर करने के लिए फल भोजनसे तुरंत पहले या थोड़ा पहले खाना चाहिए। यदि नाश्तेके लिए ऐसे रोगी केवल फलका व्यवहार करें तो अधिक लाभ होगा। भोजनके साथ फलका व्यवहार करते समय यह अवश्य ख्याल रखना चाहिए कि फल खट्टे न हों। श्वेतसार मुँहके लारसे पचता है और खटाईके व्यवहारसे मुँहसे लारका निकलना कम हो जाता है। अतः यदि खट्टे ही फलोंका व्यवहार करना हो तो उन्हें भोजनके अंतमें करना चाहिए।

गठिया, अनिद्रा, पुराने सिरदर्दके रोगी यदि अधिकतर फलोंका व्यवहार करें तो वे धीरे-धीरे कुछ दिनोंमें अच्छे हो जायेंगे।

जिनकी जबान हमेशा गंदी रहती है, मुँहसे बदबू आया करती है, यदि वे कुछ दिनोंतक केवल फल या फल और गेहूँके आटेकी रोटी खाकर रह जायँ तो उनकी जबान साफ हो जाय। ऐसे रोगीके लिए अच्छा होगा कि वे सबेरे फल, दोपहरको रोटी और फल और शामको फलके साथ कुछ मेवे भी लें। इस भोजनसे ताकत बनी रहेगी और उनका रोग भी चला जायगा।

फल कैसे खायँ ?

फलोंको खूब चबा-चबाकर खाना चाहिए अन्यथा फल वायु कर सकते हैं। उनको तबतक कुचलना चाहिए जबतक मुँहसे उनका रस न बन जाय। जिनके दाँत मजबूत न हों उन्हें सेब, नाशपाती-सरीखे कड़े फलोंको चाकूसे खूब छोटा-छोटा काटकर या पीसकर खाना चाहिए। पके सेबके पचनेमें तो केवल घंटे-दो-घंटे लगते हैं। पर कच्चा सेब कभी नहीं पचता। आंतोंको उसे बाहर निकालनेमें बड़ी कठिनाई होती है। कभी-कभी ऐसी गलतीसे पेटमें दर्द पैदा हो जाता है तथा कई कष्ट हो सकते हैं।

बच्चोंको फल दें

फलोंका रस सुपाच्य होनेके कारण बच्चोंके लिए बहुत ही उपयोगी भोजन है। टमाटर या संतरेका रस दूधके साथ पिलाया जाय तो बहुत लाभ हो। जो लोग बच्चोंको दूध गरम करके पिलाते हैं उन्हें तो फलोंके रसका प्रयोग अवश्य करना चाहिए। जो चीजें दूधमेंसे गरम करते समय जल जाती हैं उनकी पूर्ति फलोंके रसमें पाये जानेवाले लवणोंसे ही हो सकती है। यों भी रसमें अनेक रोगोंसे बचावके गुण होते हैं। सूखा रोगकी तो संतरेका रस और कच्चा दूध अचूक दवा है। केवल इसी भोजनपर रखकर बच्चोंको कुछ ही सप्ताहमें रोग-मुक्त किया जा सकता है। जो लोग अपने बच्चोंको स्वस्थ और सुपुष्ट देखना चाहते हैं वे अपने बच्चोंको फलोंके रसका उपयोग अवश्य करावें।

तरकारीके रस भी फलोंके समान ही गुण रखते हैं, केवल उनमें फलोंकी नैसर्गिक मिठास नहीं होती। रोगकी हालतमें उनका फलोंके समान ही उपयोग किया जा सकता है। गाजरके रसमें जो कैरोटिन नामक लवण पाया जाता है उसमें विटामिन ए की मात्रा अधिक होती है। इसके सेवनसे कंठकी नालियां, फेफड़ा और उदर शक्ति प्राप्त करते हैं। गाजरके रसमें विटामिन सी भी होता है। जो संक्रामक रोगोंके कीटाणुओंसे शरीरकी रक्षा करता है और रक्त बढ़ाता है। चुकंदरका रस गाजरके समान ही गुणकारी होता है। शलजमका रस तीक्ष्ण होता है, अतः आवश्यक है कि उसे अन्य फलोंके रसके साथ लिया जाय। टमाटरका ताजा रस बड़ा बलवर्धक और स्फूर्तिदायक होता है। इसमें विटामिन ए और सी के साथ ही विटामिन बी भी होता है जिससे यह भूख बढ़ाता है और शक्ति भी प्रदान करता है। ककड़ीका रस भी बहुत लाभदायक होता है। इसमें विटामिन सी होता है। इसके सेवनसे चर्मरोग आसानीसे जाते हैं। पत्तीदार सब्जियोंका रस बेचैनी, रक्तहीनता और थकावटका अनुभव करनेवालोंके लिए संजीवनीका काम करता है।

फलका मेल

फलका रोटी और दूधके साथ बहुत अच्छा मेल है। तरकारियोंके साथ सेवन करनेसे यह किसी-किसीको वायु करता है। फल भोजनके आरंभ, अंत और बीचमें भी खाया जा सकता है। केवल रसदार फलोंका अंतमें खाना ठीक है।

अध्याय १७

कब्ज दूर करनेमें फल-तरकारियोंका प्रयोग

नागरिक जीवनका सबसे बड़ा अभिशाप है कोष्ठबद्धता अथवा कब्ज। किसीसे भी पूछ देखिए वह अवश्य ही कब्जसे पीड़ित मिलेगा। यह क्यों? पशुओंमें तो यह शिकायत नहीं दिखाई देती। उनका मल भी विना मलद्वारको गंदा किये अनायास निकल जाता है। फिर मनुष्योंको ही क्यों घंटों पाखानेमें बैठे रहनेकी जरूरत पड़ती है? इसका कारण है उनका अप्राकृतिक जीवन। गद्दीपर सुबहसे शामतक बैठे रहनेवाले दूकानदार अथवा आफिसमें झुककर आठ घंटे काम करनेवाले क्लर्कके पेटकी मांसपेशियां शिथिल न होंगी तो और किसकी होंगी? जिस अंगको व्यायाम नहीं मिलता वह स्वभावतः कमजोर हो जाता है। यही दशा हमारे पेटकी होती है। इसके अलावा उचित भोजन, कसरत एवं आरामका भी, पेटकी सफाईपर बहुत प्रभाव पड़ता है और जो लोग चाहते हैं कि उनका कब्ज सदाके लिए दूर हो जाय, उनके लिए यह आवश्यक है कि इन सभी बातोंपर ध्यान दें। जब आंतें सतेज होंगी, उनमें पूरी कार्य-शक्ति होगी तो वे अनावश्यक मलको कभी समयसे अधिक देरतक न रोकेंगी।

कब्ज दूर करनेके लिए कितने लोगोंको गोली, फंकी और आसवका सहारा लेना पड़ता है। यह इसीसे जाना जा सकता है कि जितनी बिक्री इन दवाओंकी होती है उतनी और किसी दवाकी नहीं होती। दवा तो थके घोड़ेको चाबुक मार-मारकर चलानेका काम करती है जिससे रोग अधिकाधिक बढ़ता जाता है, दवाका प्रयोग कभी न करना ही श्रेयस्कर है। इसके बजाय यदि फल-तरकारियोंका प्रयोग किया जाय तो कब्ज तो जायगा ही, अनेक ऐसे रोग भी चले जायेंगे जो प्राकृतिक लवण और विटामिनोंके अभावसे पैदा होते हैं। इसके अलावा इनके प्रयोगसे भूख बढ़ती है शरीर कांतिमान होता है।

यों तो केले-कटहलको छोड़कर सभी फल पेट साफ होनेमें मदद करते हैं, पर उपयोगिताके लिहाजसे बेल, नाशपाती, मकोय, अमरूद, पपीता उच्च श्रेणीमें आते हैं।

बेल

बेल कब्ज दूर करनेमें सबसे अधिक उपयोगी है। यह कोठेको साफ करता है और उसे सजीव बनाता है। इसके दो-तीन सप्ताहके प्रयोगसे पुराना मल भी साफ हो जाता है और फिर आगे कब्ज नहीं रहता। लोग बेलका प्रयोग अधिकतर अतिसारमें ही करते हैं पर बेलमें दोनों गुण हैं। वह पतले दस्तोंमें दिये जानेपर मलको बांधता है और कब्जकी अवस्थामें उसे दूर करता है। इसके प्रयोगसे मल बिना किसी प्रयासके बाहर हो जाता है। जल-चिकित्साके आचार्य लुई कूनेने जिस प्रकारके मलको स्वास्थ्यका लक्षण बताया है, बेल खानेसे वैसी ही टट्टी होती है। बेलका उपयोग अधिकतर शरबत बनाकर ही किया जाता है। शरबतसे भी लाभ होता है पर चीनी गरमी करती है उसमें किसी प्रकारका विटामिन एवं प्राकृतिक लवण न होनेसे हानि पहुंचती है अतः बेलका उपयोग उसके स्वाभाविक रूपमें ही करना चाहिए। सबसे अच्छा यह होगा कि दोपहरके भोजनके पूर्व इसका उपयोग किया जाय। एक वयस्कके लिए पचहत्तर ग्राम काफी है। बेल खा लेनेके बाद हाथ-मुँह साफ करके फिर थालीपर बैठा जा सकता है। अधिक स्वादके लिए बेलमेंसे बीज और लेसको सावधानीसे अलग कर देना चाहिए। फिर गूदा किसी चम्मच या चाकूसे एक रकाबीमें निकालकर क्रीमके साथ खाया जा सकता है। बेल दिमागको भी तर रखता है।

नाशपाती

बेलके बाद नाशपातीका नंबर आता है। कब्ज दूर करनेमें इसका उपयोग बहुत कम लोग जानते हैं। इससे जुलाबका भी काम लिया जा सकता है। जो प्रतिवर्ष कोई-न-कोई रेचक लेकर अपना पेट साफ करते हैं वे नाशपातीसे वही काम निकाल सकते हैं। इसके लिए नाशपातीका रस निकालकर दिनमें पाव-डेढ़-पावकी मात्रामें तीन-चार बार पीना चाहिए। यह रस बहुत ही स्वादिष्ट होता है। नाशपातीके रसका प्राकृतिक मिठास शरीर-द्वारा तुरन्त उपयोगमें आ जाता है। अतः टट्टी होते रहनेपर भी कमजोरी नहीं आती। पुराने कब्जके रोगीको दो-तीन दिन केवल यही रस पीकर या नाशपाती खाकर रह जाना चाहिए। साधारण कब्जका शिकार यदि मंझोले कदकी एक नाशपातीको अपने नाश्तेमें स्थान दें या दोपहरके

भोजनके बाद इस्तेमाल करे तो सहज ही इस कष्टसे थोड़े दिनोंमें मुक्त हो सकता है। नाशपातीका उपयोग करनेपर कभी-कभी लोगोंको आँव आने लगता है। इसके आनेपर घबराना न चाहिए। नाशपाती आँव बनाती नहीं है, आंतोंमें इकट्ठे पुराने आँवको निकालती है। नाशपातीका प्रयोग जारी रखनेपर आँव आना दो-तीन दिनमें स्वयं बंद हो जाता है।

मकोय

मकोयका भी गुण नाशपातीके ही समान है, पर कई दृष्टियोंसे यह नाशपातीसे भी बढ़-चढ़कर है। मैं तो इसे गरीबोंका संतरा कहता हूँ। इसमें भी प्रायः वही विटामिन और प्राकृतिक लवण मिलते हैं जो संतरे या किसी भी नीबू-जातीय फलमें होते हैं। पर लोग मकोयको हेय दृष्टिसे देखते हैं और केवल बच्चोंको फुसलानेके काममें लाते हैं। यह ठीक है कि मकोय खट्टा होनेके कारण अधिक नहीं खाया जा सकता, पर इसका रस तो बड़े मजेसे पिया जा सकता है। शामको पिया गया पाव-आध-पाव रस सबेरे दस्त लानेके लिए काफी है। यों इसके चालीस-पचास दाने खाना बहुत लाभप्रद हैं। इसे लोग तरकारियोंके कचुंबर (सलाद) में, भी मिलाकर खाते हैं।

अमरूद

अमरूदकी पेट साफ करनेकी शक्ति सबको विदित है। अंग्रेजीमें यह कहावत प्रचलित है--एक सेब नित्य खानेसे डाक्टरका मुँह नहीं देखना पड़ेगा। यही उक्ति अमरूदपर भी लागू हो सकती है। नित्य एक अमरूदका सेवन आपको कब्जसे दूर रखेगा। पर अमरूदको छीलकर खाने या उसके बीज निकाल देनेसे उसका यह गुण बहुत कुछ नष्ट हो जाता है। अमरूदमें मिर्च-मसाले लगाकर खानेकी आवश्यकता नहीं है। जाड़ेके दिनोंमें तो अमरूदका व्यवहार लोग कर भी लेते हैं पर बरसाती अमरूदोंसे अधिकतर परहेज किया जाता है। मैंने कितने ही आदमियोंको प्रातःकाल अमरूदका नाश्ता करनेकी सलाह दी है। इससे किसीको लाभके सिवा कोई नुकसान नही हुआ। दोपहरके भोजनके बाद भी एक अमरूद खाया जा सकता है।

केला

केला बहुत ही पुष्टिकारक फल है। दुबले आदमियोंको मोटा

बनानेवाली अच्छी तरह पके केलेसे पुरअसर दूसरी चीज नहीं है। बच्चोंको, इसका खूब उपयोग करना चाहिए। पर अकेले केला खानेसे किसी-किसीको कब्ज करता है। यदि केलेके साथ अमरूदका भी उपयोग किया जाय तो केला कभी कब्ज न करे।

पपीता

पपीतेकी उपज और व्यवहार अधिकाधिक बढ़ता जा रहा है, यह प्रसन्नताकी बात है। पपीता कुछ भारी होता है। इसके उपयोगके तीन-चार घंटे बाद ही फिर भूख लगती है। कब्ज दूर करनेके लिए पपीता खानेका सबसे अच्छा समय है प्रातःकाल। इसका नाश्तेमें खूब उपयोग होना चाहिए। पपीतेको छीलनेमें सफाईकी बहुत आवश्यकता है। यहाँ एक तरकीब बतायी जाती है जिससे गूदेको छूनेकी भी जरूरत न पड़ेगी। पपीतेको बीचसे दो कर लीजिए और चम्मचसे बीज अलग करनेके बाद गूदा निकाल-निकाल खाइए, पर यह तभी संभव है जब पपीता अच्छी तरह पका हुआ हो। अंतमें हाथमें पपीतेका पतला छिलका भर रह जायगा। अधिक स्वादिष्ट बनानेके लिए पपीतेका गूदा चम्मचसे एक प्यालेमें निकाल लिया जा सकता है। फिर गूदेके साथ दूध, क्रीम या मीठा दही मिलाकर खाया जा सकता है। मीठा अधिक चाहें तो शहद या चार-पाँच, घंटेतक भिगोयी हुई किशमिशका भी प्रयोग उसके साथ किया जा सकता है। जो मांसाहारी हैं उन्हें तो पपीतेका खूब प्रयोग करना चाहिए। पपीतेमें पाया जानेवाला पेप्सिन नामक पदार्थ मांसको बहुत जल्द पचाता है और कब्ज नहीं होने देता। दूधके छेने और पपीतेको मिलाकर बहुत ही स्वादिष्ट एवं सारपूर्ण भोजन बनता है।

कब्जमें सब्जीके प्रयोगसे लाभ

फलोंके अलावा तरकारियां भी कब्ज हटानेमें बहुत मदद करती हैं। तरकारियोंमें रेचक गुण अधिकतर उनके फुजलेके कारण होता है। तरकारियोंमें जो रेशे या पतले-कड़े छिलके होते हैं वे पचते नहीं और बाहर आते समय कब्जको तोड़ देते हैं। हमारे यहाँ तरकारियोंके छिलके छीलकर ही उनका उपयोग किया जाता है और मिर्च-मसाले इतने अधिक डाले जाते हैं कि उनका अधिक उपयोग नहीं किया जा सकता। छीलनेसे तरकारियोंका फुजला तो कम हो ही जाता है उनके अधिक प्राकृतिक लवण भी निकल जाता

है; क्योंकि प्राकृतिक लवण अधिकतर छिलकों एवं तरकारियोंके बाहरी हिस्सेके ही निकट होता है। हम भोजनमें तरकारियोंको प्रधानता नहीं देते। उन्हें रोटी-भात खा सकनेके लिए सहायक मात्र समझते हैं। परंतु भोजनमें तरकारियोंकी मात्रा रोटी-भातसे अधिक होनी चाहिए। यह तभी संभव है जब हम सादे तौरपर बिना मिर्च-मसाले या अधिक तेल-घीकी सहायताके इन्हें तैयार करें।

प्रयोगकी विधि

तरकारियोंके उपयोगकी सर्वश्रेष्ठ विधि यह है कि उन्हें कच्चा ही खाया जाय। परवल, लौकी, नेनुआ, तरोई, शलजम, करेला, सहजन, सेम, लोबिया आदिको तो पकाना आवश्यक है, पर गाजर, मूली, टमाटर, खीरा, ककड़ी, प्याज, पालक, आदि बड़े मजेमें कच्चे ही खाये जा सकते हैं। इनमेंसे दो-तीनको लेकर पतला-पतला काटकर नीबू-नमक मिला देनेसे बहुत ही स्वादिष्ट खाद्य तैयार हो जाता है। इसको अंग्रेजीमें सलाद कहते हैं और गुजरातीमें कचुंबर। प्रत्येक आदमीको अपने दोपहरके भोजनमें यह कचुंबर तीन-चार छटांककी मात्रामें अवश्य खाना चाहिए। एक रकाबी कचुंबर सभी विटामिनों एवं प्राकृतिक लवणोंकी खान है। इसका उपयोग करते रहनेवालेको कभी इनकी कमीसे होनेवाले रोग नहीं हो सकते। प्यास भी कम लगती है एवं गरमी शांत होकर तरी आती है। कचुंबर इस्तेमाल करने वालेको कब्ज तो कभी होता ही नहीं तरकारियोंमें कुछ ऐसी भी हैं, जो पुराने-से-पुराने कब्जको भी दूर करती हैं। इनमेंसे पालक, बथुआ, गाजर मुख्य हैं। बथुएका साग बनाकर ही इस्तेमाल किया जा सकता है, पर साग बनाते समय उसका पानी उबालकर कभी फेंकना न चाहिए। पानी निकाल देनेसे उसके बहुतसे गुण नष्ट हो जाते हैं। पानी निकाला ही जाय तो वह दालमें या रसदार तरकारीमें डाला जा सकता है।

पालक

पालकका साग भी बथुए-सा ही गुण रखता है। कच्चे पालकका रस पाखाना साफ करता है। रातको सोते समय यदि एक-आध छटांक पालकका रस पी लिया जाय तो सबेरे निश्चय ही टट्टी होती है। किसी मित्रकी बतायी

गयी मात्रासे अधिककी भी जरूरत हो सकती है। जिनका वदन पीला बना रहता है, खूनकी कमी मालूम होती है, वे पालकका इस्तेमाल कर अपना रंग सुर्ख बना सकते हैं। खूनकी कमीका कारण है शरीरमें लोहेकी कमी और लोहा जितना पालकमें होता है उतना किसी अन्य शाक में नहीं होता।

गाजर

गाजर पेटको उसी तरह साफ करता है जिस प्रकार नारियलका झाड़ू गंदे फर्शको। यह आंतोंको खुरच-खुरचकर मल निकाल डालता है। अतः इसका उपयोग आरंभ करनेवालोंका मल बहुत ही दुर्गंधपूर्ण एवं काला होता है। गाजरमें कैरोटीन अधिक होता है जो सभी चर्मरोगोंकी अचूक दवा है। कुछ दिन केवल दूध और गाजर ग्रहण करनेसे पुराना-से-पुराना दाद, खाज, एक्जिमा, और उकवतसे पिंड छुड़ाया जा सकता है। स्त्री और बच्चोंको गाजर खानेके लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। इसके प्रयोगसे त्वचा सुंदर एवं कांतिमान होती है। दुबले इसका उपयोग कर कई किलो वजन बढ़ा सकते हैं।

अध्याय १८

फलोंके रसके बदले सब्जीका रस

प्रिय भाई,

मेरे उपवासका अनुभव आपने चाहा है। यह उपवास मैंने एक समस्याके हलके लिए किया था। इधर रोगियोंका रसाहारमें आठ-दस रुपया लग जाता था; अनन्नास, मौसममें तीन-चार रुपएमें एक आता है और ऐसे तीन-चार अनन्नासकी रोज जरूरत होती है। विकट समस्या थी गरीबोंका कैसे काम चलाया जाय, इसका हल निकालनेके लिए मैंने यह उपवास किया था। यों उपवासमें सोचते अच्छा बनता है और चीजें साफ समझमें आती हैं और चीजोंका मूल्यांकन भी जल्द हो पाता है, पर मैंने तो उपवास तरकारियोंके रस आजमानेके लिए किया था। इन दिनों यहां परवल, लौकी, तरोई, खीरे खूब आ रहे थे, मैं इनका रस पीता था। दिनमें तीन-चार बार डेड़-डेढ़ पावकी मात्रामें रस होता था। खीरेका रस मैं कच्चा ही लेता था, अन्य तरकारियोंका उबालकर। नमक नहीं लेता था। पहले तो बिना नमकके रस लेना अखरा, फिर रसमें स्वाभाविक स्वाद मिलने लगा। फलोंके रसमें तरकारियोंके रसमें मैंने विशेषता यह देखी कि इससे पेट खूब साफ होता है। पचीस दिन पानीपर र~~र और उसके बाद ही बीस दिन अनन्नासके रसपर रहकर जितना पेट साफ नहीं हुआ था इस दस दिनमें हो गया। एक बार, जब केवल खरबूजेपर एक महीने रहा था तब भी इतना पेट साफ नहीं हुआ था। एनिमा तब भी लेना पड़ता था और तरकारियोंके रसमें भी लिया। एनिमा लेते ही बिना प्रयास शौच होता था पुराना मल मिला हुआ। ५-७ दिन बाद ही पेट बिलकुल साफ हो गया। खास बात एक यह रहती थी कि एनिमा ले लेनेके बाद कुल पानी निकल जाता था और शौचकी फिर इच्छा या हाजत नहीं रहती थी। फलोंके रसपर रहते समय प्रायः दो-तीन बार जाना पड़ता था। मेरी समझमें यह तरकारियोंका क्षार है जो मलको आंतोंसे छुड़ा देता है और उसे शीघ्र निकाल देता है। खीरेके रसकी तो मत पूछिए, पेशाब इतना साफ लाता था कि मालूम होता था कि मूत्राशयकी पूरी धुलाई हो गयी है। उपवासमें मलमूत्र-मार्ग और

त्वचा-मार्गको अपना काम खूब अच्छा करनेमें मदद करना चाहिए न। सो खीरेके रससे पेशाब खूब साफ होता था और तरकारियोंके रससे पेट। इससे अब तो मेरा विश्वास हो गया है कि रोगियोंको जल्द अच्छा करना हो तो तरकारियोंके रसके महत्त्वको पूरी तरह समझ लेना चाहिए। मैं तो तरकारियोंका इतना भक्त हो गया हूँ कि प्रत्येक रोज पाव-आध-सेर तरकारीका रस लेते रहनेका इरादा है। फलके एक गिलास रसमें जहां दो-तीन रुपये लग जाते हैं, बेचारा खीरा पचास पैसे में पूरा गिलास भर देता है। शीशेके गिलासमें खीरेका हरा रंग देखकर तबियत खुश हो जाती है, आंखें तृप्त। मैं तो इस रंगको अक्सर देखकर इससे सूर्य-किरण-चिकित्साका भी मेल मिलाया करता था। मेरा खयाल है मुझे रोगियोंका भोजन चुनते वक्त फल और तरकारियोंके रंगका भी खयाल रखना चाहिए। इससे ज्यादा लाभ होगा।

अध्याय १९

नीबू

(१)

भारतवर्षमें कितनी तरहके नीबू होते हैं ! यद्यपि इसकी गिनती अबतक नहीं हुई है, फिर भी यह संख्या दो दर्जनसे कम न होगी। कागजी नीबू, जंभीरी नीबू, खट्टी नारंगी और यदि संतरा भी खट्टा हो तो इन सबको एक ही चीज और गुणमें भी एक ही समझना चाहिए। इन सबकी खटाईको अंग्रेजीमें साइट्रिक एसिड कहते हैं। इस खटाईके अलावा नीबूमें कई प्राकृतिक लवण भी होते हैं, जिनमें पोटाश और फासफोरस प्रधान हैं। ये प्राकृतिक लवण रक्तको शुद्ध करते हैं, अम्लताको दूर करते हैं और उसे क्षार प्रदान करते हैं। यद्यपि स्वाद नीबूका खट्टा होता है पर इसका प्रभाव एवं लाभ खूनकी खटाईको दूर करता है। खांसी, दमा, प्लुरसी, ज्वर, गठिया, मधुमेह, जलोदर एवं अन्य अनेक रोगोंमें, जिनमें पहले नीबू अपने खट्टेपनके कारण अग्राह्य समझा जाता था, रक्तको क्षारत्व प्रदान करनेके गुणके कारण--जो सभी रोगोंको हरता है--आज खास औषध समझा जाता है। होनेको प्रायः सभी फलोंमें यह गुण न्यूनाधिक मात्रामें होता है, पर नीबूमें यह अधिक होनेके कारण और प्रायः साल भर इसके मिलते रहनेके कारण इसका महत्त्व अधिक है। जहाँ कोई भी फल नहीं मिलता वहाँ किसी-न-किसी प्रकारका नीबू मिल ही जाता है। रोगोंको दूर करनेके विचारसे नीबू अग्निमांद्य, अपच एवं पेटके अन्य रोगोमें सद्यः फलदायी होता है।

खटाई और प्राकृतिक लवणोंके अलावा नीबूमें कुछ ऐसे पोषक तत्त्व भी हैं, जो लंबी यात्रा करनेवाले मल्लाहों और लामपर गयी फौजों, अयवा ऐसे लोगोंके लिए जिन्हें महीने-दो-महीने तक एक ही एक तरहका भोजन मिलता है, बहुत आवश्यक है। जहाजके यात्रियों, सिपाहियोंमें अकसर स्कर्वी रोग*

---

* इस रोगमें शरीरकी कोई भी रग और खास तौरसे मसूड़े सूज जाते हैं, इनसे रक्त बहने लगता है और पीड़ा होती है। —लेखक

फैलने लगता है। नीबू इस रोगकी विशेष दवा है । और यदि इसका सेवन किया जाता रहे तो यह दुष्ट रोग कभी न हो । नीबूमें यह गुण इसके विटामिन 'सी' के कारण होता है जिसे स्कर्वी रोगसे बचानेवाला विटामिन भी कहा जाता है । यह विटामिन अनेक ताजे फलों एवं ताजी हरी तरकारियोंमें, खास तौरसे टमाटर और आलूमें भी होता है, पर यह नीबू और संतरे में बहुत होता है और इन दोनोंमें भी नीबू इस दृष्टिसे श्रेष्ठ है । यह विटामिन नीबू की खटाईसे बहुत संबंधित नहीं है, क्योंकि जिन अन्य फल तरकारियोंमें यह पाया जाता है, उन सबमें नीबू जातीय खटाई नहीं होती और नीबूके रससे खटाई निकाल दिये जानेपर भी यह विटामिन नष्ट नहीं होता । दवाफरोशोंके यहां खनिज 'साइट्रिक एसिड' बिकता है जिसे डाक्टर लोग नीबूकी खटाईकी जगह अपनी दवामें लिखते हैं । इससे इस खटाईकी जरूरत पूरी होती हुई वे बताते हैं । पर, यह खटाई इस विटामिनसे विहीन होती है ।

स्कर्वी रोगसे पूरी तरह आक्रांत न होनेपर भी किसी-न-किसी मात्रामें यह रोग अनेकोंको और खास तौरसे सबेरे मिठाई, चाय, मक्खन, डबल रोटीका नाश्ता करनेवालोंको होता है । यदि इस नाश्तेकी जगह नीबूके रस और शहदके शर्बतका चलन चला दिया जाय तो लोगोंका स्वास्थ्य उन्नत हो, लोग अनेक रोगोंसे बचे रहें। चाय-काफी पीनेवाले इस शर्बतमें ठंडे पानीकी जगह गरम पानीका व्यवहार कर सकते हैं ।

तरकारियोंमें, खास तौरसे कच्ची तरकारियोंमें, थोड़ा-सा नीबूका रस डाल देनेपर उनका स्वाद बढ़ जाता है । सेब और केलेका रंग उनके छिलके छीलने और काटनेके बाद बिगड़ने लगता है पर यदि उनको तराशनेके बाद उनपर नीबूका रस लगा दिया जाय तो बहुत देरतक रखे रहनेपर भी उनका स्वाभाविक रंग नष्ट न हो एवं उनका स्वाद बढ़ जाय ।

नीबूकी खटाईमें ठंडक पैदा करनेका विशेष गुण है । यह गरमीमें बचाता है और ज्वरकी दशामें जब गरमीकी वजहसे मुंहसे लार निकलनेवाली ग्रंथियोंके काम न करनेके कारण मुंह सूखता है एवं पानी पीनेकी इच्छा नहीं होती, उस समय नीबूका व्यवहार उन ग्रंथियोंको सक्रिय करता है एवं नीबूके रसके अनुपम स्वादके सहारे पानी आसानीसे पिया जाता है, जिसका दिन भरमें दो-तीन लीटर पीना, ज्वरके रोगीके लिए बहुत आवश्यक है ।

मोटेको दुबला करते समय रोगीको कई खाद्य नहीं दिये जाते उस समय उनके अभावके दुष्परिणामसे बचानेके लिए नीबू देना आवश्यक होता है।

सर्दी लगनेपर सोते समय यदि गरम पानीमें नीबूका रस मिलाकर पिया जाय तो सर्दी दूर होनेमें मदद मिलती है। कई बार इसका इस तरह कुछ दिनोंतक प्रयोग करते रहनेपर पुराने जुकाममें भी लाभ होते देखा गया है। नीबूका यह प्रयोग कब्ज दूर करनेमें भी मदद करता है। इसके प्रयोग करनेवालोंका यह कहना है। रक्तचापके आधिक्यमें नित्य दो तीन नीबुओंका प्रयोग रक्तचापसे पैदा होनेवाली परेशानीको कम करता है एवं एक हदतक रक्तचापके आधिक्यको दूर करनेमें मदद करता है।

जब खांसी बढ़ी हुई हो या दमा जोरपर हो उस समय बीस ग्राम शहदके साथ पांच ग्राम नीबूका रस मिलाकर लेनेसे तुरंत आराम मिलता है और कई बार तो इस प्रयोगसे उस समयके लिए खांसी और दमा चला-सा जाता है।

नीबूका रस त्वचा एवं झिल्लीपरके रोगोंमें भी उपयोगी होता है। लिटर-डेढ़-लिटर गरम पानीमें पचास ग्राम नीबूका रस मिलाकर एनिमा लेनेसे पेट साधारण पानीके एनिमाकी बनिस्बत अधिक साफ होता है। यदि मलमें छोटी सफेद कीड़ियां आती हों तो इस प्रयोगसे पेट साफ होकर उनका आना बंद हो जाता है।

हलके गुनगुने पानीमें कुछ बूंद नीबूका रस मिलाकर आंख धोनेसे आंखके अनेक रोगोंमें लाभकारक सिद्ध हुआ है। कानके दर्दमें हलके गरम तिलके तेलके साथ नीबूका रस मिलाकर, लोग अकसर उपयोग करते हैं।

गलेकी खराश, मसूड़ोंकी सूजन, टांसिलके बढ़नेपर नीबूका रस उनपर लगाना बहुत हितकर है।

कई प्रकारके त्वचाके रोगोंमें नीबूका रस लगाना लाभ करता है। दाद, खाज किसी जगहकी त्वचाके फदफदा आनेपर अथवा त्वचा यदि रूखी हो तो उस पर नीबूका रस नारियलके तेलमें मिलाकर लगाना चाहिए। इस प्रयोगसे ये रोग शांत होते हैं एवं खाज और जलन दूर होती है। सोनेके पहले यदि कुछ देरतक मुंहपर भाप लगानेके बाद उसे ठंडे पानीसे धोकर उसपर नीबूका रस एवं नारियलका तेल मल लिया जाय तो मुंहकी झाईं, मुंहासे चले जाते हैं एवं यह प्रयोग मुंहको वह सौंदर्य प्रदान करता है जिसे कोई भी क्रीम,

लोशन, पावडर, पोमेड देनेमें समर्थ नहीं है।

नीबूका कल्प

नीबूका कल्प भी लोग करते हैं और इसे गठिया एवं मलेरियाके लिए लाभकर बताते हैं। एक जज साहबको मैं जानता हूँ कि जिन्होंने अपने एक बीस वर्षके लड़केको जो जीर्ण मलेरियासे पीड़ित था, नीबूका कल्प कराया था। पहले दिन उन्होंने मझोले कदके दो कागजी नीबू उसे पानीमें निचोड़कर पिलाये और दूसरे दिन चार, इस प्रकार दसवें दिन बीस नीबू पूरे होनेपर दोके हिसाबसे घटाकरके वापस दो पर आ गये और कल्प समाप्त हो गया। नीबूके रसके अलावा वे नीबूके छिलकोंको भी--पानीमें उबालकर वह पानी लड़केको पिलाते थे और ध्यान रखते थे कि लड़का रोज ढाई-तीन लीटर पानी पी ले। पेट साफ करनेके लिए रोज उसे वे एक एनिमा भी देते थे। कल्प समाप्त होनेपर उन्होंने लड़केको अधिकतर दूध-फलके पुष्टिकर भोजनपर रखा। साथ-साथ कुछ अन्न भी देते रहे। लड़केका मलेरिया जो तीन सालसे बराबर आता रहता था, बिल्कुल चला गया। यह कल्प किये उस लड़केको आठ-दस साल हुए होंगे! इस अवधिमें जज साहबके लड़केको कभी मलेरिया नहीं हुआ। वह खूब स्वस्थ है। पर, ऐसे कड़े प्रयोग समझ-बूझकर ही करने योग्य हैं।

(२)

नीबू उपयोगिताका अक्षय भंडार है। जापानके सुप्रसिद्ध आहारशास्त्रीके शब्दोंमें-- "घरमें यह हमारा सेवक है, समाजके लिए उच्चकोटिका वैद्य है और समूचे राष्ट्रीय जीवनके लिए है वह बहुत बड़ा वैज्ञानिक।"

"...नीबू घावों, दाहों और चर्म-रोगोंके लिए सर्वश्रेष्ठ उपचार है। यह नासिकाके रक्त-स्रावको क्षणभरमें रोक देता है। फैक्टरियोमें यह इस्पातको दृढ़ बनाता है। खाद्यागारोंमें भोजनको सड़ने नहीं देता। नवीन प्रयोगोंने तो यह भी सिद्ध कर दिया है कि एक्स-रे के कुप्रभावोंसे रक्षाके साथ-साथ यह अणु-विकीरणसे भी संरक्षण देता है।

द्वितीय महासमरमें कुछ जर्मन कैदी बेलजियम लाये गये थे। उस समय उनके थैलेमें एक सफेद चूर्ण पाया गया। कैदियोंने बताया कि घावोंके

रक्तस्रावको तुरंत ही रोक देनेके लिए यह विशेष रूपसे उन्हें दिया गया है। यह सफेद चूर्ण नीबूका सत्त 'पेक्टिन' ही था। यह सत्त सभी फलोंमें पाया जाता है, पर नीबू में सबसे अधिक मिलता है। इस रहस्योद्घाटनके पश्चात् तो अमेरिकाके डाक्टरोंने इस तत्त्वपर अनेक प्रयोग किये। इन प्रयोगोंके फलस्वरूप सन् १९४१ में शल्य-चिकित्साके क्षेत्रोंमें एक क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ। नीबूके इस तत्त्वसे मनुष्यकी शिराओंमें रक्तके 'प्लाज्मा' (प्ररस) की पूर्ति की जाने लगी।

नीबूके रसमें कुछ ऐसे रहस्यमय तत्त्व भी पाये जाते हैं जिनके विषयमें अभीतक खोज और प्रयोग नहीं हो पाये हैं। इन तत्त्वोंको विशेषज्ञोंने 'बॉयोफ्लेबोनाइड' नाम दिया है। यह तत्व मछलियोंको ताजा रखते हैं तथा उनके ओषजनीकरणको रोकते हैं और फलोंको नीले पड़नेसे बचाते हैं। इन्हीं तत्त्वोंके आधारपर विटामिन 'सी' प्राप्त किया जाता है।

हंगरीके वैज्ञानिक डा० अलबर्ट जैन्ट ज्योरजी, जिन्हें सन् १९३७ में चिकित्साका नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ था, १९३८ में अमेरिकामें भाषण देनेके लिये गये थे। उनके भाषणोंका मूल विषय था, 'नीबूकी विशेषताएं और उसकी उपयोगिता'। इन्हीं भाषणोंके आधारपर संकिस्ट रसायनशालामें नीबूकी छाल और उसके सत्त्वके शोधका कार्य शुरू हुआ था।

नीबूकी छालका सबसे महत्त्वपूर्ण चमत्कार यह प्रमाणित हुआ है कि उससे एक्स-रे के विकारोंसे रक्षा की जा सकती है। फ्लोरिडाके वैज्ञानिकोंने नीबूकी छालका प्रयोग अणु-विकीरणसे पीड़ित चूहोंपर किया और आशातीत सफलता प्राप्त की। अब तो अमेरिकामें सर्वत्र नीबूकी छालको सुखाकर उसका प्रयोग भोज्य पदार्थोंमें किया जाता है। इसमें कारबोहाइड्रेट, प्रोटीन, चर्बी और कई खनिज तत्त्व भी पाये जाते हैं।

डा० सी० ग्लेन-किंगने नीबूमेंसे सर्वप्रथम विटामिन 'सी' को प्राप्त किया था। लेकिन बादमें उन्हें मालूम हुआ कि नीबूके रससे निकला यह शुद्ध विटामिन छालसहित पूरे नीबूसे निकाले गये अशुद्ध विटामिनकी तरह प्रभावशाली नहीं है। यही कारण है कि पाश्चात्य देशोंमें आजकल पूरा नीबू खानेकी प्रथा जोर पकड़ रही है। मेक्सिकोके आदि-निवासी धार्मिक भावनासे प्रतिदिन दो नीबू साबुत खाते हैं। आहार-विज्ञान-विशेषज्ञ

हौजरका कहना है कि इन आदि निवासियोंको शायद ही कभी हृदय अथवा गुर्देके रोग होते हैं। हौजरकी इस स्थापनाको लेकर नीबूके गूदे और छालके तत्वोंका विश्लेषण जोरोंसे जारी है।

नीबूकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह ऋतुओंके अनुसार अपने गुणोंमें परिवर्तन करता है और ऋतुज दोषोंके अनुकूल गुण पैदा करता है। वह योगवादी है अर्थात् जिस पदार्थमें मिलता है उसके गुणोंमें वृद्धि कर देता है।

नीबूमें १ भाग पोषण तत्त्व, १ भाग चिकनाई, ८ भाग कार्बोज, आधा भाग खनिज पदार्थ और ८९ भाग जल होता है। इसमें विटामिन 'बी' और 'सी' अधिक मात्रामें और विटामिन 'ए' साधारण मात्रामें पाया जाता है।

जब सर एडमंड हिलैरी और तेनसिंह एवरेस्ट शिखरकी चढ़ाईके लिए गये थे, तो अपने साथ नीबू भी ले गये थे। एवरेस्ट विजयके विवरणमें बताया गया है कि इस अभियानमें मुख्य रूपसे जिस पेयका प्रयोग किया गया वह था नीबूका शर्बत। अतः पर्वतारोही क्लबोंमें आप लोगोंको अक्सर यह कहते हुए सुनेंगे--"मध्ययुगमें आल्सको नेपोलियनने जीता और इस युगमें विश्वकी सबसे ऊंची पर्वत-चोटी एवरेस्टको नीबूने जीता।"

अध्याय २०

सौंदर्य-वर्द्धनका साधन--नीबू

नीबू पेयको सुस्वादु बनानेका साधनमात्र नहीं है, वह सौंदर्यवर्द्धक भी है। नीबूसे बड़ा कोई सौंदर्यवर्द्धक नहीं है--सस्ता-का-सस्ता और प्रसाधनके प्रयोगमें जितना समय लगता है, उतना नीबू नहीं लेता। सौंदर्य-सम्बंधी अनेक समस्याओंका हल नीबू है, और वह प्रायः सदा उपलब्ध रहनेवाला है। इस बातकी कोई आशंका नहीं रहती कि, नीबू बाजारसे गायब हो जायेगा। यदि आप अपने चेहरेको आकर्षक बनाना चाहती हैं, तो आप नीबूको मात्र खट्टा फल मत समझिये। नीबूको प्रसाधन-सामग्रीके रूपमें लीजिए।

नीबू सिरसे लेकर नखतकके सौंदर्यमें अभिवृद्धि करनेवाला है। सिरसे प्रारम्भ करें। नीबूका रस बालोंके लिए बड़ा हितकर है। रूसीका तो यह शत्रु है। नीबूका रस लगाकर सिर साफ कीजिए, रूसी गायब हो जायेगी। नीबूके रससे युक्त 'शैम्पू' आज अनेक नामोंसे बाजारमें बिकते हैं। वे महंगे हैं और उतने प्रभावोत्पादक भी नहीं हैं। यदि आप अपने बालको रुखड़ा और भरभरा बनाना चाहती हैं, तो एक नीबूके रसमें दूना पानी मिलाकर साबुनसे बाल धोनेके बाद सिरपर लगाइए। आप देखिएगा कि, आपके बालोंमें एक प्रकारकी चमक आ जायेगी। मानों हर बालमें रेशमका अंश हो।

यदि आपके सिरमें रूसी बहुत अधिक हो तो एक नीबूको दो टुकड़ेमें काटिये और बालोंकी जड़ोंमें आधे नीबूके रसको लेकर रगड़िए। दोनों टुकड़ोंको इस प्रकार सिरमें घिस लेनेके बाद ५ मिनटतक उसे त्वचाको सोखने दीजिए। उसके बाद सिर धो डालिए। नीबू लगानेसे थोड़ी छरछराहट हो सकती है; पर वह किंचित् अहितकर नहीं है।

सिरके बाद अब चेहरेको लीजिए। चेहरेके सौंदर्यवर्द्धनके लिए भी, नीबूसे बढ़कर कोई चीज नहीं है। थोड़ा नीबूका रस लीजिए। उसमें उतना ही शहद मिलाइए। दस मिनटतक उसे चेहरेपर लगा रहने दीजिए। फिर धो डालिए। चेहरेमें एक चिकनाहट आ जायेगी और चेहरा चमक उठेगा। आँखमें यह लेप न लगने पाये--इतना ध्यान रखियेगा। पर, आँखके चारों

ओरके कुछ भागको छोड़कर यदि यह लगाया जाये, तो आँखें भी अधिक सजग और सतेज लगने लगेंगी।

लोग नीबूको ग्लिसरीनमें मिलाकर रूईसे चेहरे पर लगाते हैं। यह आलेप चेहरेके निशानों और झुर्रियोंको भी समाप्त करनेमें सहायक होता है।

नीबूमें सफाईका अद्भुत् गुण है। नीबूका आधा भाग लीजिए और धीमे-धीमे त्वचापर लगाइए। यह आपके रोमकूपोंको साफ करेगा और चेहरेके दागोंको तथा मुंहासोंको समाप्त करेगा। इससे चेहरेकी त्वचामें एक प्रकारकी चिकनाई आयेगी और चेहरे की झाईं समाप्त होगी। हाथोंमें, बाहोंमें तथा पैरोंमें भी नीबूका रस लगाइए।

नहानेसे पूर्व टखनों और घुटनोंमें नीबूका रस लगाकर आप उन्हें साफ और गुलाबी बना सकती हैं। त्वचामें नीबू लगानेसे सारी धूल और मैल साफ हो जायेगी। और, त्वचा चिकनी हो जायेगी। निचोड़ा नीबू भी मत फेंकिए। यदि आपके पैर फटे हों, निचोड़े नीबूको ही उसपर रगड़िये। त्वचा मुलायम हो जायेगी। और, त्वचाका कड़ापन बहुत कुछ चला जायेगा। आप सदा स्मरण रखिए कि, हर परिस्थितिमें नीबू आपकी त्वचाको आकर्षक, सुन्दर और साफ बनाने वाला है।

यदि आपके नाखून रूखे हैं, तो भी नीबू आपकी सहायता के लिए तैयार है। यह उपचर्म (क्यूटिकिल्स) को मजबूत बनाता है और नाखून अधिक सशक्त और लम्बे निकल सकते हैं। नीबू उनमें एक स्वाभाविक चमक पैदा करता है।

यदि अधिक काम करनेसे आपके हाथ पर धब्बे हों और उनका रंग खराब हो गया हो, उस पर भी थोड़ा नीबू लगाइए और ठंडे पानीसे थोड़ी देर बाद धो दीजिए। साबुन मत लगाइएगा।

सौंदर्य तथा स्वास्थ्यकी दृष्टिसे प्रातःकाल पहली चीज पानीमें एक नीबू निचोड़ कर पीना है। उसमें शक्कर नहीं मिलाना चाहिए। नीबूका पानी आपके शरीरको मोहक बनानेका बड़ा अच्छा साधन है। बिना पानी मिलाये भी नीबूका रस लिया जा सकता है--नीबूका यह रस अथवा नीबू मिला पानी आपके शरीरमें मोटापा नहीं आने देगा और यदि कुछ मोटापा आ गया है, तो उसे निकाल देगा। इतना ही नहीं नीबूके पानी कब्ज दूर करनेमें बड़ा ही सहायक है--और, आप जानती हैं कि, आँखोंके चारों ओर

काली रेखा तथा मुंहासोंका मुख्य कारण कब्ज ही है।

गर्मीके दिनोंमें कड़ी धूपके कारण गरदन आदि पर एक कालिमा-सी आ जाती है। नीबू रगड़िए। वह कालिमा जाती रहेगी।

पैरोंमें थकान आनेपर गरम पानीमें थोड़ा नमक और नीबूका रस डालकर पैर डालें। थोड़ी देरमें आपकी थकान जाती रहेगी।

अध्याय २१

संतरा

संतरेको फलोंमें प्रमुख स्थान देनेके कई कारण हैं । यह सत्य है कि संतरेमें अन्य कई फलोंकी तरह खाद्यांश अधिक नहीं होता, पर जो होता है वह बहुत उच्चकोटि का होता है । औसत दरजेके पके संतरे में जो पोषक तत्त्व होता है उसमें ११.६ शर्करा, ०.३ वसा और ०.८ प्रोटीन पाया जाता है और इनमेंसे प्रत्येक बड़ी आसानीसे आत्मसात् होनेवाला होता है । संतरेके रसमें उतनी ही मात्राके दूधका तीन-चौथाई उष्णांक होता है ।

संतरेका तरल भाग अच्छे-से-अच्छे परिस्नुत जलसे भी अच्छा होता है। संतरेमें क्षारीय खनिज लवण और गूदा भी होता है । संतरेका रस, खनिज लवण और गूदा--ये सभी शरीरके रक्त और तंतुओंको क्षारमय बनाते और विषसे मुक्त करते हैं, मलको निकालकर शरीरको शुद्ध करते हैं और आँतोंकी क्रिया भी तीव्र करते हैं । इस प्रकार संतरा ऐसा फल है जो लगभग सभी विकारोंको दूर करनेमें सहायक होता है और प्रायः वर्षके अधिकांश भागमें मिल जाता है ।

अम्लकारक नहीं

जहाँ नयी खोजोंके परिणास्वरूप बहुतसे खाद्य पदार्थोंमें निहित तत्त्वोंका ज्ञान प्राप्त हुआ है वहां उनके संबंधमें तरह-तरहके भ्रम भी पैदा हो गये हैं । संतरे के संबंधमें औसत दरजेके लोगोंमें यह गलत धारणा बैठ गयी है कि वह अम्लकारक होता है । इस धारणाका कारण उसमें अत्यन्त मात्र--प्रतिशत १.५--पाया जानेवाला जंबीरिकाम्ल है, पर इसका शरीरमें ओषजनीकरण अर्थात् जलन होनेपर कार्बन द्वयोषिद, जल और शिष्टांशके रूपमें पोटैशियम बाइ-कारबोनेट बनता है जिसकी प्रतिक्रिया क्षारीय होती है । दूसरे शब्दोंमें संतरा रक्त और तंतुओंका अम्ल नष्ट कर क्षारकी वृद्धि करता है और वह जरा भी अम्लकारक नहीं होता जैसा कि आम तौरपर विश्वास किया जाता है ।

धीरे-धीरे मनुष्य यह समझने लगा है कि औषध-निर्माता जिन औषधोंका निर्माण और मिश्रण करते और विक्रेता अत्यधिक लाभ देकर

ऊँचे मूल्यपर बेचते हैं वे वास्तविक औषधें नहीं हैं, बल्कि वास्तविक औषधें तो वे हैं जिनका प्रकृति धरती, वर्षा, वायु और धूपकी क्रियाओंके द्वारा मिश्रण करती और हमें पौधोंके जरिए प्रदान करती हैं।

संतरेका रस रक्तको शुद्ध और उन्नत करता और इस कार्यके द्वारा शरीरको सुधारकर उसकी क्रियाएँ ठीक करता है। इससे पाचन-शक्तिकी वृद्धि होती और भूख बढ़ती है, शरीरके अंग सचेत होकर अच्छा कार्य करते हैं, अंतःस्रावी ग्रंथियां साधारण रूपमें रहती हैं, पाचक रसका स्राव नियमित रूपमें होता है और आँतोंकी सक्रियता बढ़ती है।

सर्वोत्तम पेय

संतरेमें पायी जानेवाली शर्करा ऐसी होती है कि उसके परिपाकके लिए पाचन-क्रियाकी सहायता आवश्यक नहीं होती। मनुष्य-निर्मित ऐसी कोई बारीक चीनी, मिसरी या मिठाई नहीं हो सकती जो इस शर्कराका मुकाबला कर सके। संतरेका रस अपने जंबीरिकाम्लके कारण प्यास बुझानेवाले पेयोंका सिरताज कहा जा सकता है। ज्वर या गर्मीके मौसममें या और कभी बढ़िया किस्मके प्यास बुझानेवाले पेयकी आवश्यकता पड़नेपर ऐसी कोई चीज नहीं है जो इस रसका स्थान ग्रहण कर सके। ज्वर तथा अन्य तीव्र या जीर्ण रोगमें शरीरको अम्ल तथा विषसे मुक्त करनेवाला रस इससे बढ़कर कोई नहीं है। जीर्ण तथा अन्य क्षयकारक रोगोंमें संतरा अपने पोषक तत्त्वोंके कारण दूध या अन्य तरल खाद्य पदार्थोंके बदले मजेमें लिया जा सकता है।

बच्चों के आहारमें

अगर दुधमुँहे बच्चोंके दूध या अन्य खाद्य पदार्थमें रोज कुछ संतरेका रस मिला दिया जाया करे तो बुरे आहारके कारण होनेवाले बहुतसे शारीरिक विकारोंका निवारण हो जायगा। संतरेसे विटामिन ए, बी सी और जी तथा कैलसियम, लोहा, पोटैसियम, मैगनीसियम, फास्फोरस तथा कुछ अन्य खनिज तत्त्व प्राप्त होते हैं जो सब-के-सब पोषणकी दृष्टिसे बड़े महत्त्वके हैं। संतरेका पर्याप्त उपयोग करनेपर रक्ताल्पता, शीताद (स्कर्वी) तथा पोषणाभावजन्य अन्य विकारोंका निवारण तो हो ही जाता है, वे प्रायः अच्छे भी हो जाते हैं।

आहारके रूपमें

अगर भोजनमें रोज कुछ संतरे शामिल कर लिये जाएं तो कोष्ठबद्धता, जो आधुनिक सभ्यताका अभिशाप है, आसानीसे चली जाती है। आहारके रूपमें ग्रहण करनेपर इसका प्रभाव लोगोंको आश्चर्यमें डाल देता है क्योंकि इससे कोष्ठबद्धतासे छुटकारा मिल जानेपर चमड़ेका दाग और गंदापन चला जाता, गंदी साँस साफ हो जाती, स्वभावकी कटुता मिट जाती, नींद अच्छी आती, शक्ति अधिक मालूम होती और स्वास्थ्य उन्नत हो जाता है।

अगर अन्य खाद्य पदार्थोंकी मात्रा घटाकर उनकी जगह संतरे रखे जायें अथवा केवल संतरोंपर रहा जाय तो मोटापा कम हो जाता है। इसके अनंतर अगर श्वेतसार, चीनी, चिकनाई, मादक पेय, मक्खन आदिसे परहेज करते हुए हरी तरकारियाँ, फल, पूर्णान्न, सलाद आदि खाये जायें तो वजनपर नियंत्रण बना रहेगा। यह कार्य किसी दवाकी सहायतासे नहीं हो सकता है।

फलोंसे लाभ

ऐसे लोगोंकी संख्या बहुत अधिक होगी जिनके लिए स्वास्थ्यका निर्माण करनेवाले पदार्थोंका ग्रहण आवश्यक है, पर वे विषैले पदार्थों और कूड़े-करकटसे अपना पेट भरा करते हैं और इसके परिणामस्वरूप आत्म-विषमयता, मंदाग्नि आदि विकारोंसे ग्रस्त रहा करते हैं। आधुनिक सभ्यतामें स्वस्थ शरीर शायद ही कभी देख पड़ता होगा। इस स्थितिमें संतरे तथा इस प्रकारके अन्य पोषक और रोगहारक फलोंके महत्त्व तथा उनके सेवनकी आवश्यकतापर जितना जोर दिया जाय, थोड़ा ही है।

ध्यान देनेकी बात यह है कि नाड़ियोंको निश्चेष्ट करनेवाली, चाय, कहवा, शराब, तंबाकू आदि द्रव्यों और शरीरको नष्ट करनेवाली मिठाइयोंपर तो हम बहुत बड़ी धनराशि व्यय करते हैं, पर अमृततुल्य रस प्रदान करनेवाले फलों, विशेषकर संतरेपर हम नाममात्र का व्यय करते हैं। इस स्थितिपर विचार करनेपर तो यह कहना पड़ता है कि मनुष्य यह नहीं समझ पा रहा है कि उसने इस सुंदर पृथ्वीको कैसा पागलखाना बना रखा है।

अध्याय २२

पपीतेसे स्वास्थ्य-सुधार

अगर आप खाद्य पदार्थोंकी सूची देखें तो उसमें ऐसा एक भी न मिलेगा जो पतीतेके मुकाबलेहमें लाभदायक और शीघ्र प्रभाव दिखलानेवाला ठहरे। स्वादकी दृष्टिसे भी यह बहुत अच्छा होता है। गरम देशोंमें लोग सदियोंसे इसे औषधीय गुणोंसे युक्त और स्वादिष्ट खाद्य समझकर उपजाते और इस्तेमालमें लाते रहे हैं। मार्कोपोलो, वास्कोडिगामा, कोलम्बस आदि समुद्री यात्रियोंने अपने यात्रा-विवरणोंमें इसके लाभोंका वर्णन किया है और मार्कोपोलोने तो अपने नाविकोंका स्कर्वी नामक रोग इसके सहारे अच्छा करनेकी भी बात कही है। कुछ लोगोंने तो इसे गरम देशोंकी एक अमूल्य निधिके रूपमें माना है। इसका स्वाद आकर्षक और आमकी तरह विभिन्न प्रकारका होता है। आधुनिक वैज्ञानिकोंने इसके तत्त्वोंका विश्लेषण और प्रभावका निरीक्षणकर पता लगाया है कि शरीरका क्षार संतुलित रखता है, विटामिन ए और सी की प्राप्तिका बहुत अच्छा साधन है और विटामिन बी तथा डी भी इसमें अच्छी मात्रामें पाये जाते हैं।

इसकी एक बड़ी विशेषता यह है कि यह वानस्पतिक 'पेप्सिन' का, जो सर्वाधिक पाचक होता है, एकमात्र साधन है। इसलिए खाद्यकी दृष्टिसे इसका बहुत अधिक महत्त्व है। प्रयोगसे ज्ञात हुआ है कि इससे निकलनेवाला रस अपने वजनसे दो सौ गुना प्रोटीन बहुत जल्द पचा देता है जिससे पपीता आमाशय तथा आँत-संबंधी विकारोंमें बहुत लाभदायक सिद्ध होता है।

अस्वस्थता क्यों ?

अधिकांश वैज्ञानिक यही मानते हैं कि रोगका आरंभ प्रायः पेटमें ही हुआ करता है और शायद ही कोई रोग इसका अपवाद होता होगा। इसलिए यह निर्विवाद रूपमें कहा जा सकता है कि अजीर्ण तथा उदरसंबंधी अन्य विकार बहुतसे रोगोंके आरंभिक लक्षण हैं। रोगसे रक्षा करनेवाली पहली पांत मुँह है। स्वाद और भूखके रूपमें हमारी अंतर्वृत्ति इस सम्बन्धमें हमारा निर्देशन करती है जिसकी उपेक्षाकर हम अपनी क्षति किया करते हैं। जो

लोग भूख न लगनेपर भी ताकत बनाये रखनेके लिए खाना जरूरी मानते हैं वे गलत दलील पेश करते हैं। ऐसी हालतमें ग्रहण किये हुए आहारकी शरीरको आवश्यकता नहीं रहती और उसका उचित रूपमें पाचन भी नहीं हो सकता। इसे मलके रूपमें आँतोंसे बाहर निकालनेके लिए शरीरको अतिरिक्त शक्ति लगानेकी जरूरत पड़ती है। लंबी अन्ननालीकी यात्रा करते समय खमीर, जो कभी-कभी सड़नेकी अवस्थाके पासतक पहुँच जाया करता है, शरीरको विभिन्न प्रकारकी गंदगीसे भर देता है जो रक्तमें जज्ब होकर अस्वस्थताकी अवस्था प्रस्तुत कर देता है।

पपीतेसे सुधार क्यों ?

चिकित्सकोंका कहना है कि अगर रोज २५० ग्राम पका पपीता खाया जाय तो हालत सुधर जाती है। यह उदर और आँतोंकी सफाई कर देता, आँतोंमें पाचक क्षारका प्राकृतिक स्तर बनानेमें सहायक होता और इस प्रकार पाचन-संस्थानसे तंतुओंको स्वस्थ और सशक्त बना देता है। उनका यह भी कहना है कि यह अल्प कालमें ही उन सारे विकारोंको भी दूर कर देता है जो जीर्णरोग प्रस्तुत करनेवाली विषमयता उत्पन्न करते हैं। कुछ वैज्ञानिकोंके अनुसार स्नायुप्रदाह और संधिवात उस रक्तविषमयता और यूरिकाम्लके ही परिणाम हैं जो बुरे पाचनके कारण उत्पन्न होते और बाहर न निकलकर शरीरमें एकत्र होते रहते हैं। इस स्थितिका निवारण करनेके लिए पहली आवश्यकता आँतोंकी सफाई है और अगर आँतें साफ रहें तो भोजनमें आनंद आने लगे और उसका अच्छा परिपाक भी हो। पपीतेमें सफाईकी क्रिया संपन्न करनेवाले सभी तत्व मौजूद रहते हैं। इससे मुँहका जायका ठीक हो जाता है, साँसमें आनेवाली दुर्गंध दूर हो जाती है और इसी प्रकार सारे शरीरकी सफाई हो जाती है।

विटामिनों आदिकी प्राप्ति

पपीतेसे विटामिन 'ए' अच्छी मात्रामें प्राप्त होता है जो शरीरके, विशेषकर त्वचा और श्लैष्मिक कलाके कोषाणुओंके साधारण रूपमें काम करने योग्य रहनेके लिए बहुत आवश्यक है। इसी कारण इसे त्वचा और नेत्रका विटामिन कहा करते हैं। यह बाढ़ अच्छी करता, दीर्घायु बनाता,

ग्रंथियोंकी क्रिया साधारण रूपमें बनाये रखता और रोग-क्षमता बढ़ाता है, इससे यह स्पष्ट है कि यह विटामिन शरीरके लिए बहुत उपयोगी है और अगर यह पपीतेमें अच्छी मात्रामें पाया जाता है तो उसका अच्छा खाद्य पदार्थ होना निर्विवाद है।

पपीतेमें कैलसियम भी अच्छी मात्रामें रहता है। रक्तको जमानेके लिए शरीरको इस तत्वकी आवश्यकता पड़ती है। यह अच्छे तंतुओंके निर्माण एवं हृदय, नाड़ियों तथा पेशियोंकी क्रिया ठीक रखनेमें सहायक होता है और त्वचाको स्वस्थ बनाये रखता है। इससे नेत्रकी ज्योति साफ रहती है और दूध भी उतरता है। अगर यह तत्त्व पर्याप्त मात्रामें न मिले तो अस्थिवक्रता आ जायगी, अस्थियों और दाँतोंकी बाढ़ अच्छी नहीं होगी, हृदय ठीक तरहसे काम नहीं करेगा, चिड़चिड़ापन आ जायगा, चमड़ा रूखा-रूखा बना रहेगा, दाँत गलने लगेंगे, रक्तका क्षरण अधिक होगा, अस्थियां तुनुक हो जायेंगी और मसूड़े भी विकृत हो जायंगे।

इसमें विटामिन 'बी' और 'सी' तो अच्छी मात्रामें पाये ही जाते हैं, विटामिन 'डी' भी अल्प मात्रामें रहता है। फास्फोरस, मैग्नीसियम, सोडियम तथा अन्य खनिज लवण भी इसमें रहते हैं। इससे प्राप्त होनेवाला पपेन, जिसका यह एकमात्र साधन है और जो इसके फलमें ही नहीं, पत्तेमें भी रहता है, मांस आदि कड़े पदार्थोंको बहुत जल्द गला-पचा देता है। इसका एक अन्य रस श्वेतसार और शर्कराका मंजन करता है और इसका क्षारीय प्रभाव तो सर्वाधिक महत्त्वका है ही।

अध्याय २३

आम्र कल्प

क्या कहा ? आम्र-कल्प ! वाह ! ! आमका नाम याद आते ही मिठास और खटासके सम्मिश्रणके अनेक तरहके स्वाद याद आ जाते हैं एवं नासिका आमोंकी मादक गंधसे भरने लगती है । प्रकृतिद्वारा प्रदत्त आम-से तृप्ति-कारक एवं सुस्वादु खाद्यकी समता करनेमें मनुष्यका बनाया कोई भी भोजन समर्थ नहीं है ।

और कल्प ? कल्पके बारेमें हमारे आयुर्वेदने इतना गाया है कि कल्प नामके साथ ही स्फूर्ति, उत्साह, उमंग एवं नवयौवनके चित्र उपस्थित हो जाते हैं । साधारणतः सभी लोग कल्पके माने शरीरका बदलना समझते हैं। जब शरीर बदल गया तब रोग कहाँ ? पुराने रोग तो पुराने चोलेके साथ ही चले जाते हैं, कल्पसे मिले नये चोलेमें रोगोंको स्थान कहाँ ? किसी रोगके लिए कल्प कीजिए, किसी चीजका कल्प कीजिए, माने होते हैं आप अपने रोगोंको जड़-मूलसे नष्ट करनेका अनुष्ठान कर रहे हैं । इसलिए कल्पके अर्थके साथ ही कुछ कष्ट सहनेका, इंद्रियोंको वशमें करनेका एवं कुछ विशेष संयमका भी भान होता है । दूसरे कल्पोंमें कष्टकी बात हो सकती है, पर आम्र-कल्पमें कष्ट कहाँ ? वहाँ आनंद-ही-आनंद है । ठंडे पानीसे भरे हुए मिट्टीके नादमें हरे, पीले, रसीले, सुमधुर सुगंधित आम भिगो दिये गये हैं, चार मित्र उसके चारों ओर बैठ जाइए और फिर एक-एक आमका रस लीजिए और छक-छक तृप्त होकर चूसिए; और आपने आम खा लिये हों तो लीजिए वह धारोष्ण दूध आ रहा है, इसे भी पीजिए । बस, पूरा हुआ काम। यही कल्प है । इसमें कष्टका प्रवेश कहाँ ? आमका कल्प करना कुछ दिन देवताओंका भोजन ग्रहण करना है ।

आमके कल्पसे दुबले मोटे बनते हैं, खुरदुरी त्वचा स्वच्छ, सलवण हो जाती है, अशक्तता जाकर शरीर सुपुष्ट होता है, आँखोंमें तेज भरता है, दाँत साफ हो जाते हैं, कपोलोंपर लालिमा छा जाती है, भूख बढ़ जाती है एवं कब्ज चला जाता है, और शरीरमें उत्साह-उमंगका संचार होता है ।

लाभ क्यों ?

पर, यह सब होता क्यों है ? इसके दो कारण हैं। पहला आम और दूधमें क्षारों एवं विटामिनोंका आधिक्य, दूसरे आम-दूधकी सुपाच्यता। अनेक रोग किसी विशेष क्षार अथवा विटामिनकी कमीके कारण होते हैं और बहुत-से रोग रक्तमें अम्लताके बढ़ जानेसे। आम्र-कल्प दोनों ही प्रकारके रोग हरता है। अभावोंको मिटाता है एवं रक्तमें क्षारोंका आधिक्य कर अम्लताको दूर करता है। यदि मनुष्यका भोजन संतुलित हो उसमें उचित मात्रामें श्वेतसार (गेहूँ, चावल), प्रोटीन (दाल, दूध), चिकनाई (घी, तेल) हों, तो आदमी बीमार ही न पड़ें। पर, जब संतुलन का खयाल न कर अधिकतर रोटी-दाल, घी, चीनी, तेल, चरपरे एवं तले पदार्थोंपर आदमी रहने लगता है, तो उसकी पाचनशक्ति बिगड़नेके साथ रक्त अम्लमय हो जाता है। फलतः कब्ज, अपचके साथ-साथ अनेक रोग होते हैं। पर आम्र-कल्पमें आप केवल आम-दूध पर रहने लगते हैं। सारे अप्राकृतिक खाद्योंसे आपका पिंड छूट जाता है और आममें यथेष्ट फुजला होनेके कारण कब्ज शीघ्र टूटता है और आप शरीरको नया बनाने, रक्तको बदलनेके पथपर लग जाते हैं।

वैज्ञानिकोंका कहना है कि श्वेतसार आठ घंटेमें पचकर शर्करा बनता है। इसके बाद ही उसका उपयोग हमारा शरीर कर पाता है। वह शर्करा पके आममें स्वाभाविक रूपसे रहती है। अतः आपके शरीरमें पहुँचते-पहुँचते शरीर उसका उपयोग करना आरम्भ कर देता है एवं उसे शक्ति मिलने लगती है। वह पाचन शक्ति जो भारी गरिष्ठ, चीजें पचाते-पचाते थक गयी थी, नाकाबिल हो गयी थी, पाचनके भारी कामसे छुट्टी पा जाती है और आराम मिलनेसे धीरे-धीरे सशक्त होकर अपनी पूर्व शक्ति प्राप्त करती है। आम्र-कल्प से पाचन शक्ति सुधरने का यही रहस्य है। और, आमके साथ दूध भी तो रहता है। बिना दूधके आम्रयज्ञकी पूर्ण आहुति हो ही नहीं सकती। हमारे वैद्य मित्रोंकी राय है कि बिना दूधके आमका कल्प चल नहीं सकता, पर मेरी वैसी राय नहीं है। मैं अपने रोगियोंको पहले कुछ दिन केवल आम ही खिलाता हूँ, फिर उसके बाद दूध शुरू होता है। और दूध तो पूर्ण भोजन है, क्योंकि प्रकृति उसे उस शिशुके लिए पैदा करती है जो दूधके सिवा अन्य कोई चीज ग्रहण नहीं कर सकता। अतः वह दूधमें शरीरके लिए

आवश्यक सभी सामान भरती है। असलमें दूध भोजनका मापदंड है। उस भोजनको, जिसमें वे सब-के-सब तत्त्व नहीं हैं, जो दूधमें होते हैं संतुलित कह ही नहीं सकते। अतः उस संतुलनको ठीक करनेके लिए दूधकी जरूरत हुआ करती है। दूधकी शर्करा एवं चिकनाई-सी सुपाच्य दूसरी शर्करा एवं चिकनाई मिलना कठिन है। दूधका प्रोटीन भी सर्वश्रेष्ठ एवं हल्का माना जाता है। आममें प्रोटीन नहीं होता और चिकनाई नाममात्रको होती है, अतः आम्रकल्पमें आमके साथ दूधका मेल मिलाया गया है।

यही कारण है कि आम्र-कल्पसे प्रायः सभी रोग विशेषतः पाचनकी गड़बड़ी व रक्तमें अम्लतासे पैदा होनेवाले रोग शीघ्रतासे जाते हैं। उनमेंसे कुछके नाम हैं --दुर्बलता, रक्ताभाव, स्नायुदौर्बल्य, धातुदौर्बल्य, अग्निमांद्य, आरंभिक अवस्थामें क्षय, अनिद्रा, रक्तचापकी कमी या अधिकता, गठिया, दमा, हृदयकी कमजोरी आदि।

आम्र-कल्प करें कैसे ?

बहुत आसान है। यदि आप दुर्बल हैं तो तीन, चार दिन और मोटे हैं तो मोटापेके हिसाबसे पाँच-सात दिन केवल पानी पीकर रह जायँ और रोज सेर-डेढ़-सेर गुनगुने गरम पानीका एनिमा लेते रहें ताकि पाचनप्रणालीको पूरा आराम मिल जाय एवं आँतोंसे पुराना, सड़ा मल निकल जाय। आगे यदि कल्पकालमें कब्ज रहे तो आध सेर पानीका एनिमा नित्य लेनेमें भी कोई हर्ज नहीं है। यदि आपने तीन दिनका उपवास किया है तो पहले दिन खूब पतले रसवाले छोटे-छोटे चार-चार आम सबेरे, दोपहर, शामको और यदि तीन दिनसे अधिकका उपवास किया है तो उपवासकी लंबाईके अनुसार पहले दिनमें तीन बार एकसे चार आमों तकका रस पावभर पानीमें निचोड़ एवं छानकर पीजिए। जो भी आम काममें लाइए उन्हें दो-तीन घंटेतक पानीमें जरूर भिगो लीजिए। दूसरे दिन आम चूसना शुरू कर दीजिए और धीरे-धीरे भूखके अनुसार आमोंकी संख्या बढ़ा लीजिए। तीन-चार दिन केवल आम चूसकर ही रहिए। फिर प्रत्येक आहारके साथ पाव-पावभर गायका कच्चा दूध लेना शुरू कीजिए। सबेरे-शाम कच्चा दूध लेना चाहिए। और दोपहरको सबेरेका गरम करके रखा हुआ दूध। इस दूधको भी आमकी तरह ही चूसिए, मुँहमें चुभलाइए, घुलाइए आपकी इस मेहनतसे दूध और भी सुपाच्य हो जायगा। धीरे-धीरे दूधकी मात्रा आधसेर तक बढ़ायी जा

सकती है और भूख लगनेपर आम-दूधके दो आहारोंके बीचमें भी दूध पिया जा सकता है और प्यास लगनेपर पानीमें कोताही न कीजिए। इतनी ही है आम्र-यज्ञकी विधि।

केवल आमपर तीन-चार दिन रह जानेसे लाभ यह होगा कि आँतोंमें पुराने मलकी सड़नसे पैदा हुए शत्रु कृमियोंका नाश हो जायगा एवं मित्र कृमियोंकी संख्या बढ़ेगी, जिससे पाचन एवं मल-निष्कासन क्रिया दुरुस्त होगी एवं यदि वायु होती होगी तो वह शांत होगी। दूध शुरू हो जानेपर यह कार्य उतनी तेजीसे नहीं हो पाता। थोड़े दूधमें कृमिनाशक शक्ति नहीं है। दूसरे, दूधका उपयोग भली प्रकार हो सके, उसके लिए भी कृमिरहित पाचन-प्रणाली चाहिए।

कल्पके लिए आम

कल्पके लिए कोई भी आम हो सकता है। नाम गिनाऊं तो संख्या सैकड़ोंतक पहुँचेगी। पर एक ही बात याद रखिए--आम मीठे और पतले रसवाले होने चाहिए। ये गुण बीजू आममें ही मिलेंगे। आम डालके हों तो अच्छा है, पाल के आमोंसे भी काम चलता है। आप कलमी आमका कल्प कर सकते हैं, मुझे उसमें कोई एतराज नहीं है, पर आप यह देख लें कि आप कलमी आमके गूदेको इतना चबायें, मुँहमें इतना घुला लें कि उसका गूदा आपके मुँहमें पतले रसमें परिणत होनेके बाद ही गलेके नीचे उतरे। कलमी आमका खतरा कलमी आममें नहीं, हमारी जल्दी-जल्दी खानेकी प्रवृत्तिमें है।

एक खतरा

आमके अमृतमय स्वादकी प्रशंसा करना व्यर्थ है। इसके विशिष्ट स्वादके कारण ही लोगोंका इसे भूखसे अधिक खानेकी ओर झुकाव रहता है। यह अनुचित है। इस बुरी आदतके कारण कल्पका बहुत-सा लाभ चला जा सकता है। आम खाते समय यह भी ध्यानमें रखना चाहिए कि दूध भी पीना है। बल्कि दूध भी साथ ही रखा जाय और बीच-बीचमें उसकी घूँटें भरते रहा जाय। हमेशा इतनी ही मात्रामें आम लिये जायँ कि दूसरे आहारके समय भूख कसकर लगे। यदि न लगे तो समझना चाहिए कि आपने आवश्यकतासे अधिक आम खा लिये हैं अतः अगला आहार ग्रहण न कर केवल पानी पीते

रहें । दूसरे वक्त जोरसे भूख लगेगी, तभी आप आम-दूध प्राप्त करनेके अधिकारी होंगे । आम-दूधके दिनमें तीन आहारोंकी बच्चों और जवानोंको ही जरूरत होती है, अधेड़ और बूढ़ोंके लिए दो आहार काफी है । जो दुबले हैं, और जिन्हें भूख लगती है, वे आम-दूधके दो आहारोंके बीचमें भी दूध ले सकते हैं और इस प्रकार नित्य कुल मिलाकर दो-ढाई सेर दूध पी सकते हैं । हाँ, आम्र-कल्पके आरंभमें जब दूध न लिया जाय, तब आम चूसनेके बाद दूधकी जगह पानी पीना चाहिए । आमके पचनेमें दूधसे जो सहायता मिलती है, वह इसके जलाधिक्यका फल है, वह जल आम चूसनेके बाद पीना चाहिए।

कल्प कै दिन

कै दिन क्यों ? जितने दिन आम आयें उतने दिन । यों तो लोग कल्पकी अवधि चालीस दिन मानते हैं, पर यह अवधि किसी उबादेनेवाले कल्पके लिए रखी गयी होगी, आम्र-यज्ञ तो चलना चाहिए जितने दिन चल सके--दो ढाई महीने भी । इससे लाभ-ही-लाभ है, किसी प्रकारकी हानिकी तो संभावना ही नहीं है ।

कल्पका अंत

जब कल्प समाप्त करना हो, तो पहले दोपहरको दूध-आमकी जगह चोकर समेत आटेकी एक हल्की-सी रोटी, कुछ हरी तरकारियां और कुछ आम भी लियें जायँ । दो-तीन दिनमें दोपहरको भूखके अनुसार रोटी-सब्जी खाने लग जाना चाहिए । सुविधा हो तो दोपहरको या शामको रोटी-सब्जी और दिनमें आम-दूधका भोजन महीनों चल सकता है । जो दो-तीन सप्ताहसे अधिक समयतक आमका कल्प न कर पायें, वे इस मिश्रित भोजनपर दो-तीन सप्ताह जरूर बिता दें । एक बार रोटी-सब्जी और दूसरी बार आम-दूध शुरू कर देनेके बाद आप जब चाहें स्वास्थ्यमय साधारण भोजन पर आ जायँ ।

आप आम्र-कल्प कीजिए, आपको आमोंका स्वाद तो मिलेगा ही और जिस रोगके लिए यह यज्ञ करेंगे वह भस्मीभूत हो जायगा, इसमें संदेह नहीं है।

अध्याय २४

केला

केला गर्म और नातिशीतोष्ण देशोंमें बहुतायतसे पैदा होता है। मूलत: यह एशियाका फल है। अरब लोग इसे भारतसे अफ्रीका ले गये और वहाँसे यह कनारी द्वीप होता हुआ विभिन्न देशोंमें फैल गया है। भारतके ऋषि इसका विशेष रूपसे उपयोग करते थे और उपयोगिताकी दृष्टिसे इसे नंदनकाननमें उत्पन्न होनेवाला देवफल कहा करते थे।

स्वादकी विशेषता

यह बारहों मास फलता रहता है। इसकी मोटी छाल, जो फलके पकनेपर बड़ी आसानीसे उतर जाती है, छूत-छात तथा संपर्कजन्य बुराइयोंसे इसे बचाती है। पक जानेपर वह ज्यादा दिनोंतक नहीं टिकता, इसलिए यह कच्चा ही तोड़कर जहाजसे दूरवर्ती ठंडे देशोंको निर्यात किया जाता है। सर्द मुल्कोंके लोग कभी-कभी वृक्षपर ही पके हुए फल खानेकी इच्छा प्रकट करते हैं, पर वृक्षपर पके हुए फलोंका स्वाद अच्छा नहीं होता। इसके अलावा एक खराबी यह होती है कि छिलका फट जाता है और फलमें कीड़े घुस जाते हैं। जहां यह पैदा होता है वहां भी लोग कच्चा ही तोड़कर घरमें पकनेके लिए रख देते हैं। पकानेके लिए किसी यान्त्रिक सहायता या कृत्रिम उपायकी आवश्यकता नहीं होती। वृक्षसे पृथक् कर लिये जानेपर फल डंठलके रससे पुष्ट होते रहते हैं और कमरेकी गर्मीसे आप-ही-आप पककर तैयार हो जाते हैं। पक जानेपर फलमेंका श्वेतसार शर्कराके रूपमें परिवर्तित हो जाता है। अगर तरकारी या इस प्रकारके और किसी काममें लाना हो तो कच्चा ही फल काममें लाया जाता है। यह छिलकेके साथ भून या उबालकर भी काममें लाया जाता है। पकनेपर इसका पीला रंग खानेकी इच्छा जाग्रत करता है। इसके स्वादके बारेमें तो कुछ कहना ही नहीं है। बड़े पैमानेपर इसके उत्पादनका मुख्य कारण इसका स्वाद ही है। अंग्रेज राजपुरुष बेंजामिन डिसरेली तो इसके गुणों और स्वादसे प्रभावित होकर इसे संसारका सर्वश्रेष्ठ फल कहा करता था।

पर इससे लोगोंको यह नहीं समझ लेना चाहिए कि केवल स्वादकी दृष्टिसे इसका महत्त्व है; पोषणकी दृष्टिसे भी इसका महत्त्व बहुत बढ़ा हुआ है और हालके परीक्षणोंसे पता चला है कि यह कई रोगोंमें पथ्यके रूपमें भी दिया जा सकता है । इसमें केलोरी प्रति पौंड ४६० होती है जहाँ आलूमें ३५८ ही होती है । फलशर्करा भी इसमें अधिक मात्रामें होती है जो आसानीसे पच जाती है । इसमें विटामिन ए, सी, थियामिन, रिबोफ्लेबिन, नियासिन तथा अन्य ११ खनिज द्रव्य होते हैं । इसमें जलका अंश ७५. ३ प्रतिशत, प्रोटीन १. ३ कार्बोहाइड्रेट २२ और चिकनाई ०. ६ होती है ।

परस्पर-विरोधी कार्य

एक किसान स्त्रीके संबंधमें कहा जाता है कि वह एक यात्रीको अपने मुखसे गर्म और ठंडी दो तरहकी फूंक निकालते देखकर आश्चर्य-चकित रह गयी-- यात्री अपने ठंडे हाथको फूंकसे गर्मकर रहा था और गर्म शोरबेको फूंक-फूंककर ठंडा कर रहा था । केलेके संबंधमें यही बात चरितार्थ होती है। यह मोटे लोगोंका वजन घटाता और दुबले-पतले लोगों का वजन बढ़ाता है; कब्ज दूर करता और दस्त आना रोकता भी है । इसकी सबसे बड़ी विशेषता इसकी सुपाच्यता है । पाश्चात्य देशोंमें पहले कुछ लोग इसे पेट भारी करनेवाला समझते थे, पर बच्चोंके आहारके रूपमें अधिक उपयोगमें आने लगनेपर इसकी यह बदनामी दूर हो गयी है । कई दशक पूर्व जब यह अग्नि-मांद्यवाले बच्चोंको दिया गया तो लोगोंने आशंकित होकर बड़ा होहल्ला मचाया, अब तो यह दो माससे लेकर दो वर्षतकके बच्चोंको पीस और छानकर दिया जाता है और पाचनसंबंधी कोई गड़बड़ी नहीं देखी जाती। हालतमें सुधार होनेके साथ ही उनका वजन भी बढ़ जाता है । न्यूयार्कके एक असपतालमें तो केलेका पथ्य देनेका नियम ही बना लिया गया था ।

बालरोगोंमें

स्वस्थ और रुग्ण बच्चोंको भी दूधके साथ केलेका चूर्ण देनेको विशेष रूपसे कहा जाने लगा है । अवस्थाके अनुसार एक चम्मचसे लेकर एक केलेतक पीस और छानकर रोज दिया जा सकता है । गाढ़ा होनेके कारण इसे

खानेपर कै होनेकी संभावना कम रहती है, इसलिए जो बच्चे कमजोर हैं, जिन्हें भूख कम लगती है या जिनके वजनमें संतोषजनक वृद्धि नहीं होती उन्हें थोड़ा-थोड़ा करके दिनमें कई बार दिया जा सकता है। यह उन बच्चोंके लिए भी लाभदायक होता है जो पुष्ट हैं, जिन्हें आहार अच्छा नहीं मिलता और जो कुछ फलोंका रस नहीं पचा सकते। केवल केला खिलानेपर भी कम वजनवाले बच्चोंका वजन जल्द बढ़ जाता है। स्कर्वी रोगवाले बच्चोंको पीस-छानकर दो केले दिये गये और वे इसीसे नीरोग हो गये। केलेका उपयोग करनेपर लंबी हड्डियोंके पुष्ट होनेमें बड़ी मदद मिलती है। शहदके साथ तीन केले रोज खानेसे उकवत के दूर हो जानेकी बात भी सुनी गयी है।

पहले लोगोंकी यह धारणा थी कि अतिसारमें फलोंसे परहेज करना चाहिए, पर प्रयोगसे यह देखा गया है कि पाचनसंबंधी तीव्र रोग, जो शिशुओंमें प्रायः देखे जाते हैं और उन्हें कमजोर करनेवाले होते हैं, केवल केले या संतरेके रस या छिलका निकाले हुए सेबसे या तीनों साथ-साथ देनेसे बड़ी आसानीसे अच्छे हो जाते हैं। दस मासके बच्चोंपर भी इनका सफलतापूर्वक प्रयोग किया गया है। कुछ चिकित्सकोंने केलेको शेष दोनोंसे अधिक लाभदायक पाया। इसका कारण यह बतलाया जाता है कि उसमें का पेक्टिन नामक पदार्थ मुलायम और साफ पाखाना लाकर आँतोंको साफ करता और जीवाणुओंको बाहर निकाल देता है। कार्बोहाइड्रेट अधिक और चिकनाई तथा प्रोटीन कम मात्रामें होनेसे केला और सेब आँतोंके लिए बड़े लाभदायक होते हैं।

बच्चों और वयस्कोंमें भी कोष्ठबद्धता प्रायः देख पड़ती है। इसका कारण होता है भोजनमें रेशेदार पदार्थों और विटामिनोंका अभाव, आंत्र रसोंकी अपर्याप्तताऔर उत्तेजना आदिके कारण बृहदंत्रका संकोच। अनुसंधानसे पता चला है कि विटामिन महास्रोतके पर्देको स्वस्थ और संक्रमणका निरोध करने योग्य बनाये रहते हैं; थियामिन का क्षुधा और आँतोंकी सक्रियतासे विशेष संबंध है। केलेसे रेशे, पेक्टिन और विटामिन प्राप्त होते हैं जो बृहदंत्रको अपना कार्य सम्यक रूपसे करनेमें अच्छी सहायता प्रदान करते हैं। कोष्ठबद्धताके कई रोगियोंपर केलेका प्रयोग कर देखा गया है कि वह रेचनमें बहुत सहायक होता है।

आंत्र—व्रण आदिमें

उदरशोथमें जहां और खाद्य पदार्थ मुश्किलसे पचते हैं वहां केलेकी लपसी बड़ी आसानीसे पच जाती है। टायफायड तथा अन्य बाल-ज्वरोंमें केलेका पथ्य बहुत अच्छा प्रमाणित हुआ है। आंत्र-व्रणसे आजकल बहुत से लोग पीड़ित देख पड़ते हैं जो प्रायः कार्याधिक्य आदिके कारण हुआ करता है। इस व्रणके भरनेमें सहायता पहुँचानेके लिए श्लैष्मिक कलाको उत्तेजना और पाचनरसके अम्लसे बचाये रखना आवश्यक होता है। अम्लस्रावकी अतिरिक्त मात्राको निष्क्रिय करनेके लिए कभी-कभी पोटाश, सोडा आदि दिये जाते थे पर आजकल इन चीजोंके बजाय केलेका विशेष रूपसे उपयोग किया जाने लगा है और रोज ६ से ९ केले खिलाये जाते हैं। आंत्र-व्रणवालोंके लिए यही एक ऐसा खाद्य है जिसके खानेसे पीछे कोई कष्ट नहीं होता। रक्ताभाव आदि रोगोमें केला लाभदायक सिद्ध हुआ है। १०-१५ केले रोज खिलाये जायँ तो कंठ-व्रणमें भी लाभ पहुंचता है। हेमोग्लोबिन (रक्तकणमें रहनेवाला एक पदार्थ) के निर्माण में केलेका लोहा बहुत उपयोगी होता है। प्रोटीन कम और केलोरी अधिक होनेसे वृक्क-दाहमें भी केला लाभकर होता है, क्योंकि इस रोगमें प्रोटीन यथासंभव कम रखते हुए पर्याप्त पोषण देना आवश्यक होता है। मधुमेहमें तो यह बहुत दिनोंसे लाभकर समझा और दिया जाता रहा है। गठिया रोगमें यह मूत्रकी यूरिक अम्ल घुलानेकी शक्ति बढ़ा देता है।

कुछ लोगोंको गेहूँ, दूध और अंडा खानेपर उत्तेजना मालूम होती है। ऐसे लोगोंके लिए केला अच्छा खाद्य है। उनको किसी अन्य अन्नके आटेके साथ केलेकी रोटी दी जा सकती है। इस तरहकी रोटी स्वादिष्ट होनेके साथ ही पोषक भी होगी। वजन घटानेके लिए मलाई निकाले हुए दूधके साथ यह व्यापक रूपसे दिया जाता है। वजन बढ़ानेके लिए भी इसका उपयोग किया जाता है। युद्धके दिनोंमें पतले लोग सेनामें भरती होनेके लिए प्रायः इसका सहारा लिया करते थे। इसके खानेसे जी भी नहीं ऊबता; स्वादिष्ट होनेके कारण लोग काफी खा लिया करते हैं।

अध्याय २५

अमरूद और उसके लाभ

मेरे विचारमें एक दिन आया कि शब्द 'अमरूद' नहीं, अपितु आमरुद है और इसका अर्थ होना चाहिए--आमको, पेटमें स्थित अपक्व-रसको रौंद देना । सौभाग्यवश उस समय बाजारमें अमरूद उपलब्ध थे, अतः मैंने कुछ रोगियोंको यह फल खानेको कहा और आँवके एक रोगीको भी अमरूद दिया। दूसरे दिन ही लाभ हुआ । जहाँ दस बार टट्टी आती थी, चार बार आयी, गड़गड़ाहट भी नगण्य रही । तीन-चार दिनके बाद रोगीका चेहरा प्रसन्न एवं शरीर स्वस्थ-सा दिखायी देने लगा। बंधी हुई टट्टी तथा आँव लिपटी हुई, दिन में दो बार आने लगी । अब तो भूख भी लगने लगी और दो मासमें रोगी अमरूदके प्रयोगसे ठीक हो गया । न दूधकी जरूरत और न दहीकी । इसके बाद आँव-विकार एवं ग्रहणी-विकारके कई रोगियोंपर इसका प्रयोग किया, फल सर्वत्र संतोषप्रद मिला ।

अमरूदके प्रति जनसाधारणमें यह धारणा है कि वायु करता है । मालूम होता है कि यह धारणा निघण्टुरत्नाकरके नीचे श्लोकके वातद शब्द के भ्रमपूर्ण अर्थसे फैली है--

ततोऽमृतफल स्वादु तुवर चातिशीतलम् ।
तीक्ष्णं गुरुं कफकरं वातदं मेद नाशकम् ।।
वृष्यं रुचि शुक्रकरं त्रिदोषघ्नं प्रकीर्त्तितम् ।

इस श्लोकमें अमरूदको 'वातद' कहा है । सीधा-सादा अर्थ निकला वात देनेवाला ।' परंतु तीसरी लाइनमें लिखा है त्रिदोषघ्नं अर्थात तीनों दोषोंकी--वात, पित्त, कफको नष्ट करता है और वस्तुतः बात भी ऐसी है । वस्तुतः यह वात करता नहीं अपितु हरता है । इसकी व्युत्पत्ति वातं ददाति न करके वातं द्यति, नाशयति करनी चाहिए ।

भोजनका पाचन

भोजन दाँतोसे पिसकर लाला रससे मिला हुआ पेटमें जाता है । वहाँ साढ़े तीन-चार घंटे रहकर छोटी और बड़ी आँतोंमें होते हुए मलाशय और

गुदाद्वारमें पहुँचता है। इस यात्रामें भोजनको अट्ठाईस-उन्नीस फुट लम्बा मार्ग तथा चौदह-पंद्रह घंटे तय करने पड़ते हैं। इस मार्गमें भोजनमें बहुत तरहके परिवर्तन मिश्रण एवं विश्लेषण होते हैं। इस क्रियासे भोजनके आवश्यक तत्त्व शरीरके द्वारा ग्रहण किये जाते हैं और शरीरके प्रत्येक अवयवका पोषण होता है। भोजनके इस लम्बे रास्तेमें आवश्यक तत्त्वोंको चूसनेके लिए 'चूषांकुर या ग्राहकांकुर लगे हुए हैं जो प्रतिक्षण क्रियाशील रहते हैं। आँतोंमें प्रतिक्षण म्यूसिन तथा अन्य रासायनिक पदार्थ बनते रहते हैं जो आँतोंको तर रखते हैं, इससे (१) भुक्त पदार्थकी रगड़से आँतें छिलती रहती नहीं हैं तथा (२) मल मार्ग सरकता रहता है। कुछ विद्वानोंका कथन है कि आयुर्वेदके आम और एलोपैथीके अमीबिकमें सर्वथा इतना अन्तर है कि वे किसी भी तरह एक पंक्तिमें नहीं रखे जा सकते, परंतु उनका यह विचार सर्वथा भ्रमात्मक है।

अमेबिक डिसेन्ट्री

एलोपैथीके सिद्धांतानुसार अमीबा बाह्य जगत्से भीतरमें प्रवेशकर अपने प्रधान स्थान आँतोंमें जाता है और वहाँ शोथ, व्रण एवं पूयका निर्माण करता है। फलतः ग्राहकांकुर या चूषणांकुर नष्ट हो जाते हैं। इसी कारण भोजनका परिपाक तथा सात्मीकरण नहीं हो पाता। फलतः वह आम अपरिपक्व ही कच्चा अन्न मार्गसे गुदाद्वारा गिरता रहता है।

आयुर्वेदानुसार "अन्नाजीर्णात् प्रदुताः, क्षोभयंतः कोष्ठ दोषा धातुसंघानमलांश्च नाना वर्ण नैकशः सारयन्ति शूलोपेत षष्ठमेनं वदन्ति। पुरीषं भृशंदुर्गन्धि पिच्छिलं आमसंज्ञितम्"। अर्थात् अन्नके अपरिपाकसे विकृत वात, पित्त, कफ अन्न मार्गको क्षुब्ध करते हुए नाना वर्ण विभिन्न-रंगों से युक्त मल को गिराते हैं; क्योंकि इसमें व्रण का रक्त तथा पूय श्लैष्मिक झिल्लियोंके खंड मल तथा कई रासायनिक तत्त्व आदि रहनेसे वर्णमें विभिन्नता और भृश दुर्गन्धि (अत्यंत बदबूवाला) होना स्वाभाविक ही है। आयुर्वेदज्ञोंने अपक्व रसका अतिमात्र सरण होनेसे इसको आम विकार माना तथा एलोपैथी ने इंटेमोयबा हिस्टोलिटिका नामक अमीबाद्वारा होनेसे इसे अमीबिक डिसेंटरी कहा। एकने नामकरण कार्य (आम) के कारण रखा, दूसरेने कारण (अमीबा) के कारण रूपमें। कोई भेद नहीं। दोनों एक हैं।

अस्तु इस अमीबाका प्रधान स्थान आँत है। आँतोंमें अमीबाके प्रविष्ट होनेसे आँतोंमें घुणजन्य व्रणोंकी तरह यत्र-तत्र व्रण हो जाते हैं, शोथ आ जाता है। ग्रंथियाँ एवं गुहायें (केवीटीज) हो जाती हैं और अंतिमावस्थामें छिद्र भी हो जाते हैं।

अमीबा जब कालांतरमें यकृतमें प्रवेश कर जाता है तो यकृतकी भी यही दशा होकर एक विशाल विस्फोट होकर वह फट जाता है। कुछ अधिक समय बीत जाने पर तथा यकृत आदिमें प्रवेश करनेपर यह अचिकित्स्य ही है। यह शरीर-शास्त्रविशेषज्ञोंको विदित ही है।

इस अमीबाकी प्रारंभिक दशामें यदि अमरूदका प्रयोग किया जाय तो अवश्य लाभ होता है। अमरूदमें टैनिक एसिड है जिसका प्रधान कार्य व्रण-शोधन, रोपण, घाव भरना, 'हीलिंग' है अतः आँतकी कोमल दीवारमें लग्न कीटोंको नष्ट करके घावोंको भर देता है। इसका बीज बहुत दृढ़ होता है अतएव इसे 'दृढ़ बीज' कहते हैं। आँतोंमें इसकी पिसाई नहीं होती अतः जलीय अंशके दूर होनेके बाद आँतोंकी चतुर्दिक दीवारोंको स्पर्श करते हुए काष्टोजप्रधान होनेसे रगड़ते हुए चलता है। इससे आँतके व्रणोंपर तो टैनिक एसिडसे घाव भरता रहता है तथा इसके दानोंसे मल खिसकता रहता है ताकि समस्त अपद्रव्य उसके साथ मलाशयद्वारा बाहर आ सके।

प्रयोग-विधि

अच्छे पक्के फलको काटकर तश्तरीमें रखें। यह फल भोजन करते वक्त बीचमें शाककी जगह खाते जायँ। भोजन जितनी बार करना हो उतनी बार अमरूद अवश्य लें। इस प्रकार एक फलसे प्रारंभकर एक बारमें तीन फलतक ले सकते हैं। कभी-कभी इसके खानेसे पेटमें दर्द होता है। संभव है इसी कारण लोगोंने इसको वायुकारक मान लिया हो। वस्तुतः पेटदर्दका कारण और ही है। आँतें जब मलसे अवरुद्ध रहती हैं और अमरूद उस अपद्रव्यको निकालना चाहता है तो स्वभावतः वहाँ पारस्परिक संघर्ष होकर वायु रुक जाती है, पेटमें आफरा-सा मालूम होता है; क्योंकि नीचेका मार्ग रुका रहता है और ऊपरसे अमरूदका अपद्रव्य निकालनेके लिए दबाव रहता है।

अमरूदमें नमक आदि नहीं मिलाना चाहिए और न उसका छिलका या बीज निकालना चाहिए।

बहुत ज्यादा और पानीकी तरह यदि मल आता हो तो अमरूद तत्काल ही उसमें लाभ पहुँचाता है।

जिनको बराबर कब्ज रहता है उनके लिए तो इसका प्रयोग अमृत ही है।

प्रत्यक्ष उदाहरण

डेढ़ वर्ष पहलेकी बात है रामेश्वरजी व्यास मेरे पास आये--दुबले-पतले, जीवनसे निराश। उनकी बातोंसे मालूम होता था जैसे कि कोई मरनेकी तैयारी करता हो। डाक्टर ने टी० बी० की व्यवस्था कर दी थी। स्ट्रैप्टोमाइसीन इन्जेक्शन भी दर्जनों ले चुके थे, परंतु मर्ज बढ़ता ही गया ज्यों-ज्यों दवा की। मैंने चेहरा देखते ही कह दिया कि आपको पेटकी गड़बड़ी है, घबराओ नहीं, ठीक हो जाओगे। सारा इतिहास सुनकर उनको अमरूद खानेको कहा। अमरूदके नामसे वे, उनके घरवाले तथा पड़ोसी सभी चमके; परंतु मेरी बातपर वे दृढ़ रहे और अमरूद खाना प्रारम्भ कर दिया। फलतः कुछ ही दिनोंके बाद उनके पेटकी अशान्ति दूर होने लगी। अब तो उनका वजन जो प्रति सप्ताह घट रहा था, रुक गया तो उनको और भी साहस हुआ। दो-तीन मास बराबर अमरूदका प्रयोग चला और वजन भी दस-बारह पौंड बढ़ गया। एक लाभ और हुआ। पहले उनको दो छटाँकसे अधिक दूध नहीं पचता था। ज्यादा लेनेपर पाखाना जाना होता था तथा मल भी पतला हो जाता था; परंतु अब वे तीन पाव दूध निर्भीक होकर पी लेते थे तथा समयपर बँधी टट्टी आती थी। अब वे स्वस्थ हैं और अपने लोगोंको अमरूद खानेकी सलाह देकर उन्हें स्वस्थ करते हैं।

अमरूद मनको प्रसन्न करता है, क्षुधाको बढ़ाता है। पाचन-शक्ति, हृदय तथा मस्तिष्कको बल देता है।

अध्याय २६

गरीबोंका सेब--अमरूद

जब प्राकृतिक चिकित्सक फल खानेकी बात करता है, तो लोगोंकी दृष्टिमें सेब, नासपाती, अंगूर ही घूम जाते हैं और वे इसे अत्यंत महँगी बात समझकर उस ओर ध्यान ही नहीं देते। पर, ऐसा नहीं है। बहुतसे सस्ते फल भी महँगे फलोंके समकक्ष ही बैठते हैं यथा अमरूदको यदि 'गरीबोंका सेब' कहा जाये तो किसी प्रकार अतिशयोक्ति न होगी। अपनी लाभ-शक्तिके ही कारण सम्भवतः उसे संस्कृत में 'अमृत' अथवा 'अमृतफल' नाम प्राप्त हुआ। पर, अमरूदका सही और पूरा-पूरा लाभ प्राप्त करनेके लिए आवश्यक है कि, न तो इसका छिलका ही उतारा जाये और न बीज ही फेंका जाये। महात्मा गांधीने इसके बीजोंकी एक बार परीक्षा करवायी थी। प्राप्त रिपोर्टमें कहा गया कि, अमरूदके बीजोंमें विटामिन बी प्रचुर मात्रा में है। अतः बीजोंको भी भरसक चबा-चबा कर खानेका प्रयास करना चाहिए।

अमरूद बड़ा अच्छा सौम्य रेचक है। इसके नित्य प्रति के प्रयोगसे व्यक्ति मलावरोधसे मुक्त हो जा सकता है। आयुर्वेदिक ग्रन्थोंमें इसे कसैला, स्वादु, अम्ल, शीतल, तीक्ष्ण, हृद्य, शुक्रजनक तथा वात, पित्त, उन्माद, भ्रम, मूर्च्छा, कृमि, तृषा, श्रमशोष, विषमज्वर और विदाहनाशक कहा गया है। यह वातका दमन करता है। यह क्षुधावर्द्धक है तथा हृदय व मस्तिष्कको बल देता है।

अमरूदके लिए वनौषधि-कोषमें कहा गया है कि, यद्यपि मौसमपर जबतक अमरूद मिले खाना चाहिए, पर शीतकालमें इसका खाना बड़ा लाभदायक है। शीतकालमें यह विशेष रूपसे बलकारक, तृप्तिकारक, गुणकारक होता है।

उसी ग्रन्थका कहना है कि,

"चिरकालके रुके हुए जुकामपर अमरूद वास्तवमें अमृतका ही काम करता है।" यदि जीर्ण जुकामका रोगी २-३ दिनोंतक मात्र अमरूद ही खाकर रह जाये, तो निश्चय ही उसका जुकाम इस अवधिमें चला जायेगा।

अमरूदमें प्रतिशत २९९ मिलिग्राम विटामिन सी होता है। विटामिन सी का मुख्य काम ही शरीरसे विषाक्त तत्त्वोंको निकाल फेंकना है। अतः यह सस्ता और सर्वसुलभ फल कितना शरीर-शोधक हो सकता है, यह बात भलीभांति समझी जा सकती है।

हमने ऊपर अमरूदको 'गरीबोंका सेब' कहा है। अर्वाचीन वैज्ञानिक विश्लेषण हम यहाँ दे रहे हैं, उससे यह बात पुष्ट हो जायेगी।

अमरूद

जल	७६.१ प्रतिशत
प्रोटीन	१.५ प्रतिशत
वसा	०.२ प्रतिशत
खनिज पदार्थ	७.८ प्रतिशत
रेशा	६.९ प्रतिशत
कार्बोहाइड्रेट	१४.६ प्रतिशत
कैलसियम	०.०१ प्रतिशत
फासफोरस	.४४ प्रतिशत
लोहा	१.० मिलि० प्रतिशत

सेब

जल	८५.९ प्रतिशत
प्रोटीन	०.३ प्रतिशत
वसा	०.१ प्रतिशत
खनिज पदार्थ	०.२ प्रतिशत

कार्बोहाइड्रेट	१३.४ प्रतिशत
कैलसियम	०.०१ प्रतिशत
फासफोरस	०.०२ प्रतिशत
लोहा	१.७ प्रतिशत
विटामिन बी	४० प्रतिशत
विटामिन सी	२ प्रतिशत

कैलोरीकी दृष्टिसे भी अमरूद सेबसे किसी प्रकार कम नहीं है। अमरूदमें प्रति आधा छटाँक १८ कैलोरी है तो सेबमें मात्र १६।

ऊपर दिये विश्लेषणसे स्पष्ट हो गया होगा कि, सस्ता होनेपर भी अमरूद किसी प्रकारसे सेबसे कम नहीं है।

प्राकृतिक चिकित्सक जब वस्तुतः फल खानेकी बात करता है तो उसकी दृष्टि एलोपैथी अथवा आयुर्वेदिक सिद्धान्तोंकी ओर नहीं होती। प्राकृतिक चिकित्साका भोजन-सम्बंधी सिद्धान्त बड़ा सरल है। उसकी दृष्टिसे हम खाद्य-पदार्थोंको दो श्रेणियोंमें विभक्त कर सकते हैं--अम्लकारक और क्षारवर्द्धक। मैदा, चीनी, चाय अन्न आदि अम्लकारक पदार्थ हैं और फल-सब्जी क्षारवर्द्धक हैं। जब शरीरमें अम्लकी वृद्धि होती है, उसी समय आदमी बीमार होता और स्वास्थ्य खराब होता है। और, क्षारवर्द्धक खाद्य मनुष्यको स्वास्थ्य-लाभ कराता है तथ्य उसके शरीरमें अम्लताको कम करता है।

बेल--भोजन और दवा

बेल भारतका एक विशिष्ट फल है, इसकी विशिष्टताके कारण ही इसकी पत्तियाँ शिवजीके मस्तकपर स्थान पाती हैं। भारतीय संस्कृतिके मूलमें ही है कृतज्ञता और श्रद्धा। जिससे भी हम लाभान्वित होते हैं उसके प्रति कृतज्ञतास्वरूप हम उसे श्रद्धास्पद स्थान देते हैं। इसलिए गाय, गंगाको माता कहा जाता है और बेल, बरगद, तुलसी आँवलेकी पूजा की जाती है।

बेल जैसा गुणकारी फल शायद ही विश्वमें दूसरा हो। सभी फल सारक माने जाते हैं कुछ धारक भी। पर विश्वमें केवल बेल एक ऐसा फल है जो धारकका भी काम करता है और सारकका भी। पेचिश हो, बेल खिलाइए, दस्त बँध जायेगा। कब्ज हो बेलका इस्तेमाल कीजिए, कब्ज टूट जायेगा।

यों बेलका प्रयोग अधिकतर पतले दस्त, पुरानी पेचिश, आँतोंकी सूजन; मरोड़ोंके साथ दस्तमें ही किया जाता है। पर, कब्ज दूर करनेके इससे विषिष्ट गुणसे इसका हर इस्तेमाल करने वाला परिचित है।

पेचिशके रोगीके लिए तो यह दवा और अपने पौष्टिक गुणके कारण पथ्यका भी काम करता है। गाँवोंमें जहां कहीं अधिक बेल होते हैं, लोग एक वक्तके भोजनका भी काम चलाते हैं। वैज्ञानिक परीक्षणसे ज्ञात हुआ है कि बेल और आलू पौष्टिकतामें करीब-करीब समान हैं।

पुरानी या नई पेचिशके रोगीको दिनमें तीन बार, सौ-सौ ग्राम बेलके गूदेको एक-एक पाव पानीमें घोलकर छानकर पिलानेसे रोग दो-तीन दिनमें चला जाता है। यों लाभ तो पहली खुराकसे ही शुरु हो जाता है। पर, तीन दिनतक इसका व्यवहार रोगको फिर लौटने नहीं देता। इसके बाद भी रोगी बेलके साथ दहीका व्यवहार एक सप्ताहतक करता रहे तो और अच्छा होगा। इसके बाद सुबह बेल, दही, दोपहर-शाम रोटी-सब्जी, दहीका व्यवहार सप्ताह दो सप्ताह जरूर करना चाहिए। इससे पेचिशसे आयी कमजोरी शीघ्रतासे दूर होगी।

यदि पका बेल न मिलता हो तो कच्चा बेल भूनकर इसी मात्रामें पानीमें घोलकर खाना चाहिए। बेल भूननेके लिए उसमें कीलसे दो-तीन छेदकर

देना चाहिए, फिर भाड़ या आग में डाल देना चाहिए। जिन्हें भुना बेल पसंद न हो वे कच्चे बेलके सौ ग्राम गूदेको सवा पाव पानीमें दस-पन्द्रह मिनट उबालकर और उसे छानकर उसके काढ़ेका उपयोग करें। चाहें तो उसमें एक तोला शुद्ध शहद मिला लें।

बेलका शरबत कभी भी लिया जाय वह कब्ज दूर करेगा। पर, निश्चित लाभके लिए पके या भुने बेलका गूदा दोपहरके भोजनके ठीक पहले सौ ग्रामकी मात्रामें लेना काफी होगा। यदि मल ज्यादा कड़ा हो जाये तो बेलकी मात्रा आधी या उससे भी कम कर देनी चाहिए।

पर कब्ज दूर करनेके लिए बेलपर अधिक दिनोंतक निर्भर रहनेपर आँतोंके शिथिल हो जानेका भय रहता है; अतः कब्ज दूर करनेके लिए पेटकी कसरतें और उचित भोजन ही उचित इलाज है।

कच्चे या पके बेलके अभावमें सूखे बेलके चूर्णका भी उपयोग लाभके साथ किया जा सकता है।

बेलकी पत्ती भी बहुत गुणकारी है। नित्य सुबह बेलकी पाँच पत्ती चबानेसे मधुमेह में अतीव लाभ होता है। पेशाब की जलन या रुकावटमें बेलकी पाँच पत्ती पीसकर पानी के साथ छानकर पीनेसे तुरंत लाभ होता है।

बेल दो तरहके आते हैं--बीजू और कागजी। इनके भी अनेक प्रकार हैं। कागजी बेल ज्यादा स्वादिष्ट होता है और सुगंधित भी।

बेलके गुण आयुर्वेद और तिब्बीमें मुक्त कंठसे गाये गये हैं। उन्हें न लिखकर यहाँ एक वैज्ञानिक शोधके आधार पर प्रकाशित किया गया वक्तव्य दे रहा हूँ--

"दवाकी दृष्टिसे अधपका बेल अत्यंत लाभदायक है, कष्टसाध्य आँव और अतिसारकी दशामें मरीज जब कमजोर और अजीर्णाक्रांत हो, बेल बहुत लाभ करता है। अधपका बेल धारक, परिपाक-शक्ति-वृद्धिकर और क्षुधावर्द्धक है। पर, पका बेल सारक, विरेचक, सुगंधित और शीतल होता है।

जिन्हें अनियमित दस्त आता हो, कभी अतिसार और कभी कब्ज रहता हो उनके लिए बेल खास तौरसे मुफीद है। यह छोटी आँतकी श्लैष्मिक झिल्लीकी क्रियाको शक्ति देनेवाला है। जहाँ यह अतिसारको दूर करता है वहाँ कब्जमें भी उतना ही लाभ दिखलाता है।"

अध्याय २८

गाजर

वे दिन बीत गये जब गाजर को खरगोश और गदहेका खाद्य माना जाता था। गाजरमें ही केवल केरोटीन नहीं पाया जाता है पर, लौकी, कुम्हड़ा, पपीता, आम, हरे पत्तों और टमाटरमें भी। केरोटीनमें प्रोटीन तत्त्वका पता लगा है जिससे उक्त खाद्य पदार्थोंका मूल्य बहुत बढ़ गया है। विटामिन 'ए' आँखोंके लिए अच्छा टानिक है। रतौंधीका शिकार वही होता है जिसके आहारमें इस विटामिनका अभाव होता है। इतना ही नहीं, वह पूर्ण रूपसे अंधा हो सकता है। भारतके लोगोंके बीचमें जो आँख खराब होनेकी शिकायत बढ़ती जा रही है वह स्थिति गाजर तथा हरी पत्तीदार सब्जियोंके सेवनसे दूर हो सकती है। दूसरी जगद्व्यापी महा लड़ाईके समय हवाई जहाजके चालकोंको गाजरका रस पीनेके लिए विवश किया जाता था। तभी तो वे ऊपर हवाई जहाजको विशेषकर रातके समय उड़ा सकते थे।

हमारे भारतमें दो प्रकारके गाजर होते हैं। एक को देशी कहते हैं और दूसरेको विलायती। दोनों प्रकारके गाजर अच्छे होते हैं। देशी गाजरमें अधिक जल रहता है और विदेशी गाजरमें अधिक रेशे होते हैं। गाजरमें अन्य पदार्थोंकी अपेक्षा अधिक रेशे (सेल्युलोस) होते हैं इसलिए उसे पचाना थोड़ा कठिन होता है विशेषकर जिसकी पाचनशक्ति दुर्बल होती है उसके लिए ऐसे खाद्य पदार्थोंको पचाना कठिन होता है। ऐसी स्थितिमें पचानेसे उसकी दीवार पतली हो जाती है और इस प्रकार उसकी माड़ीको सहजतासे पचाया जा सकता है।

ताजा गाजरका स्वाद अच्छा होता है और उसके साथ दूसरी सब्जियोंको मिलाकर सलाद बनानेका प्रलोभन होता है। उसे सलाद बनानेके लिए टुकड़े-टुकड़े करके बंदगोभीमें मिलाएँ; उसमें नारियलके टुकड़े भी डालें, यह खानेमें रुचिकर होता है और क्षुधावर्धक होता है। उसमें नारियलके बदले मूली अथवा हरी मिर्च डाल सकते हैं। गाजरको हरी मटर और फ्रेंच बीन्सके साथ पका सकते हैं। इस प्रकारके मिश्रणसे जो इसकी तरकारी बनती है उससे आहारका मूल्य बढ़ता है। बी कम्प्लेक्स और सी

विटामिनके जैसा विटामिन ए गर्मीसे नष्ट नहीं होता ।

गाजर की चटनी और जैम (मुरब्बा) बनता है जिसे आप अपने भोजनके साथ मिलाकर बड़ी रुचिसे खा सकते हैं । गाजरसे हलुआ और केक भी बनाये जाते हैं । गाजर और हरी गोल मिर्चका शोरबा बहुत पुष्टिकारक होता है ।

गाजरके एक सौ ग्राम में निम्न पोषक तत्त्व पाये जाते हैं : --

जल	८६. ० ग्राम
प्रोटीन	०. ९ ग्राम
वसा	०. २ ग्राम
तन्तु	१. २ ग्राम
कार्बोहाइड्रेट्स	१०. ६ ग्राम
कैलोरी	८७. ० ग्राम
कैलशियम	८०. ० मि० ग्राम
मेग्नेशियम	१४. ० मि० ग्राम
ओक्सॅलिक एसिड	५. ० मि० ग्राम
फासफोरस	३०. ० मि० ग्राम
लोहा	२. ३ मि० ग्राम
सोडियम	३५. ६ मि० ग्राम
पोटेशियम	१०८. ० मि० ग्राम
सलफर	२७. ० मि० ग्राम
क्लोरीन	१३. ० मि० ग्राम
विटामिन ए	३. १५० आई० यू०
थियामिन	०. ०४ मि० ग्राम
रिबोफ्लेविन	०. ०२ मि० ग्राम
निकोटिन एसिड	०. ६ मि० ग्राम
विटामिन सी	३. ० मि० ग्राम

अध्याय २१

टमाटर

अब तो ऐसे लोग बहुत थोड़े बच रहे हैं जो टमाटर नहीं खाते। पर एक जमाना था कि जब धार्मिक प्रवृत्तिके, निरामिषभोजी टमाटरको माँसके रंग-रूपका समझकर इससे घृणा करते थे और खानेको कहनेपर बुरा मानते थे। पर ज्यों-ज्यों टमाटरके गुण लोगोंको विदित हुए, लोगोंने इसे तेजीसे अपनाया और आज तो शायद ही कोई ऐसा मिले जो इसे 'अग्राह्य' कहनेका साहस करे।

हमारे यहाँ धार्मिक कारण था, तो विदेशमें दूसरी तरहकी बेवकूफी थी। बहुत दिनोंतक टमाटर वहाँ जहरीला खाद्य समझा जाता रहा, यह केवल बागकी शोभाके लिए बोया जाता रहा है। खूबसूरती इसकी बहुत पहले ही पहचान ली गयी थी, अतः वहाँ लोग सुंदर पके टमाटर अपनी प्रियतमाको भेंट करते थे और भोजनकी टेबुलपर उसे सजानेके लिए रखते थे।

टमाटर मनुष्यको चावल-गेहूँकी भाँति सभ्यताके साथ मिली हुई वस्तु नहीं है। यह पहले-पहल रोमके द्वीपमें देखा गया था और लगभग सत्तर वर्ष हुए तब इसे वाल्टर रैले साहब महारानी एलिजाबेथको भेंट देनेके लिए यूरोप ले गये। कुछ लोगोंका कहना है, कि टमाटर सोलहवीं सदी में दक्षिणी अमरीकासे यूरोप आया था। जो भी हो, इसमें संदेह नहीं है कि टमाटरको यूरोप, अमेरिकाने इसी शताब्दीमें अच्छी तरह अपनाया है और हिन्दुस्तानमें इसका ज्यादातर उपयोग पिछले पचीस-तीस वर्षोंसे ही होने लगा है।

टमाटर जहरीला समझा जानेके कारण तो बहुत दिनोंतक बहिष्कृत रहा ही, इसका उपयोग शुरू हो जानेके बाद भी बहुतसे लोग इसे नासूर और गठियाका कारण समझकर इसके इस्तेमालसे बचते रहे, जबकि अब यह इन दोनों रोगोंमें ही बहुत उपयोगी पाया गया है।

इसके विषहीन होनेका सबूत जिस प्रकार मिला, वह कथा बड़ी रोचक है। कहते हैं, सन १८१२ में अमेरिकाके एक जहाजपर रंगसाजीका काम

करनेवाले एक चित्रकारने यह निश्चय किया कि वह इसका जरूर पता लगायेगा कि टमाटरमें कुछ पोषक गुण है अथवा नहीं। उसके मित्रोंने उसे इस विष-फलसे दूर रहनेको बहुत कहा, पर वह माना नहीं। उसने टमाटर खा ही तो लिया और जब उसे उससे कोई हानि नहीं हुई तो दूसरोंने भी इसे चखा और टमाटर खानेका चलन पड़ गया।

टमाटर तरकारी नहीं—फल है

टमाटर अपने गुणोंके कारण तरकारी नहीं--फल कहा जाना चाहिए। इसमें प्रायः सभी विटामिन होते हैं। इसमें विटामिन सी बहुत अधिक होता है। और, यह विटामिन शरीरको ताजे फल तरकारियोंसे विशेषकर संतरे, मुसम्मीसे ही मिलता है, अतः जब तक टमाटर मिले तब तक इस सस्ते फलका व्यवहार बराबर करना चाहिए। इसमें विटामिन ए भी होता है जो विशेषतया घी-दूध-मक्खनमें मिलता है। दो सौ ग्राम टमाटर नित्य खानेसे शरीरको इस विटामिनकी आवश्यक मात्रा मिल जाती है। विटामिन बी भी टमाटरमें प्रचुरमात्रामें पाया जाता है जो बुद्धिजीवीके लिए बहुत आवश्यक है।

टमाटरमें प्राकृतिक लवण भी बहुत होते हैं। लोहेकी मात्रा इसमें दूधसे दूनी होती है जो सेब, नासपाती, संतरे, अंगूर, खरबूजे और ककड़ीमें मिलनेवाले लोहेसे बहुत अधिक है। चूने (कैलशियम) के हिसाबसे सेब, केले और चावलसे टमाटर श्रेष्ठ ठहरता है। पोटाश तो टमाटरमें इतना है कि इस संबंधमें इसकी समता बहुत कम फल-तरकारियां कर सकती हैं। और इसकी खटाई वही खटाई है जो नीबू, संतरा, मुसम्मी, चकोतरेमें मिलती है, इसलिए बहुत बार टमाटर गरीबोंका संतरा कहा जाता है।

टमाटरका उपयोग प्रायः सभी रोगोंमें हितकर है। क्योंकि यह खूनको साफ करता है। यह दाँतोंको स्वस्थ एवं मजबूत बनाता है। टमाटर सूखा रोग की खास दवा है। अतः इसका इस्तेमाल बच्चोंको बराबर कराना चाहिए। इससे बच्चे इस रोगसे बचे रहते हैं। हृदय-दौर्बल्यमें टमाटर विशेष गुणकारी है, टमाटर स्नायुओंके लिए रसायनका काम करता है। यह भूखको बढ़ाता और पाचन-शक्तिको तीव्र करता है। मधुमेहके ऐसे रोगियोंको जिन्हें डाक्टर किसी फलके खानेकी इजाजत नहीं देते और जो फलके अभावके कारण कई अन्य रोगोंसे पीड़ित रहते हैं, वे टमाटरका

उपयोग करके इस खतरेसे बचने के साथ-साथ मधुमेहसे भी छुटकारा पानेमें इसकी सहायता पा सकते हैं।

जीर्ण रोगोंके सिवा तीव्र रोगोंमें भी टमाटर लाभदायक है। ज्वरकी अवस्थामें इसके रसका उपयोग गरमी शांत करता और प्यासको बुझाता है। ऐसी बहुत-सी अवस्थाओंमें जहाँ उपवास विहित है, टमाटरका रस पानीमें मिलाकर लेनेसे उपवासका लाभ कम होनेके बजाय बढ़ता है।

टमाटरके पूरे गुण उसी टमाटरमें होते हैं जिसकी खेती स्वाभाविक रीतिसे की जाती है। वैज्ञानिक खादकी सहायतासे पैदा किये गये टमाटर बहुत बड़े-बड़े और अधिक तो होते हैं पर उनमें उनके सभी स्वाभाविक गुण बहुत कम होते हैं; और कई तो बिल्कुल नहीं होते। विदेशमें टमाटर बहुत ठंडी जगहोंमें कांचके घरोंमें उपजाये जाते हैं। उनमें स्वाद ठीक होनेपर भी लाभकारी गुण कम होते हैं। इसी प्रकार ताजे टमाटर जब डब्बोंमें बंद कर दिये जाते हैं तो उनमें गुणोंमें कमी आ जाती है। यद्यपि डिब्बों और शीशियोंमें बंद करके टमाटर या टमाटरका रस ऊँचे दामोंमें बेचनेवाले व्यापारी इनके ताजे टमाटरोंके समान गुणदायी होनेकी घोषणा करते हैं। टमाटरसे पूर्ण लाभ प्राप्त करनेके लिए इन्हें ताजा ही लेना चाहिए और इनका उपयोग इन्हें आगके संपर्कमें लाये बगैर करना चाहिए। टमाटरका आध पाव रस सबेरे जब पेट खाली रहे या नाश्तेके साथ लेना विशेष लाभकर है। जो दोपहर और शामके भोजनके बीच कुछ खाना चाहते हैं वे उस समय टमाटरका रस ले सकते हैं और बार-बार खानेसे होनेवाले कुप्रभावसे पाचन-क्रियाओंको बचा सकते हैं।

यों टमाटरका उपयोग खानेमें बहुत तरहसे किया जा सकता है। कचुंबर (सलाद) को सारी खूबसूरती और स्वाद यही प्रदान करता है। बढ़िया कचुंबर बनानेके लिए टमाटर, पत्तागोभी या पालक, गाजर या चुकंदरको चार दो और एकके अनुपातसे लेकर पतला-पतला काटकर एवं मिलाकर ऊपरसे थोड़ा-सा भूनकर पीसा हुआ जीरा, नमक डालना चाहिए और थोड़ा-सा नीबूका रस। यह कचुंबर यदि भोजनके साथ एक पावकी मात्रा में इस्तेमाल किया जाय तो यह बहुतोंका कब्ज दूर करनेमें सहायक हो सकता है।

टमाटर भोजन है और औषधि भी। इसका उपयोग तेजीसे बढ़ानेकी आवश्यकता है।

अध्याय ३०

शक्तिके स्रोत बथुआ और पालक

जीवनके लिए आवश्यक तत्त्वोंको प्रकृति ने हमारे लिए प्रचुर मात्रामें उत्पादित कर दिया है। जीवनके आधार वायु, जल, प्रकाश सर्वसुलभ हैं तथा बिना किसी मूल्यके प्राप्त होते हैं। एक दयालु माताके समान प्रकृतिने अनेक पोषक वस्तुओंको हमारे लिए जुटा दिया है, किन्तु भ्रमवश हम उनका मूल्य नहीं आँकते और उन्हीं वस्तुओंको अच्छा समझते हैं जिनके लिए हमें अधिक खर्च करना पड़ता है। मेवे और फल स्वास्थ्यके लिए अत्यन्त उपयोगी एवं लाभदायक हैं; किन्तु वे सर्वसुलभ नहीं हैं। महँगे होनेके कारण गरीब जनताके लिए इनका क्रय करना असम्भव-सा हो गया है। ग्रामीण जनता तो इन महँगे मेवोंसे सर्वथा वंचित ही रहती है। चिकित्सकों एवं आहारशास्त्रके सभी विद्वानोंने सदैव इस बातपर जोर दिया है कि सस्ती एवं सर्वसुलभ ग्रामीण वस्तुओंमें ही इतने अधिक पौष्टिक तत्त्व पाये जाते हैं कि महँगी और खर्चीली वस्तुओंके खानेकी आवश्यकता नहीं है। ग्रामीण जनताको इस बातके लिए प्रेरित करना है कि वह इन वस्तुओंको हेय दृष्टिसे न देखकर अधिक-से-अधिक उपयोग करे। पालक और बथुआ ऐसे ही बहुत सस्ते और सुलभ शाक हैं जिनमें प्रकृतिने अपनी अनेक शक्तियां भर दी हैं।

पालक

हरे शाकोंमें सबसे उत्तम और गुणकारी शाक पालक है। इसके पत्तोंमें लोहा एवं खनिजका बाहुल्य है। लौह एवं खनिजके अतिरिक्त इसमें सोडियम, फास्फोरस तथा विटामिन ए, बी, सी पर्याप्त मात्रामें पाये जाते हैं। इसके प्रयोगसे शरीरको लौह और रासायनिक लवण मिलते हैं, जिनसे रक्तके लालकण बढ़ते हैं और जिसके कारण ऊपरी त्वचा भी अधिक लाल दिखाई पड़ती है। रक्ताल्पतामें इससे शरीरको पूर्ण शक्ति प्राप्त होती है। खानेमें भी यह बहुत ही सुस्वादु और रुचिकर होता है।

बथुआ

बथुआ दो प्रकारका होता है--बड़े पत्तोंवाला और छोटे पत्तोंवाला। प्रायः छोटे पत्तोंवाले बथुएका ही प्रयोग किया जाता है। पालककी भाँति बथुएमें भी लौह, फास्फोरस, कैल्शियम आदि खनिज लवण प्रचुर मात्रामें विद्यमान रहते हैं। बथुएका प्रयोग भोजनमें कई प्रकारसे किया जाता है--पकाकर, साग बनाकर, रायतेमें, आटेके साथ गूँथकर रोटी बनानेमें। यह रोचक और हल्का होता है।

पालक जिगरके रोगोंके लिए अत्यंत लाभकारी है। इसके सेवनसे शरीरका पीलापन दूर हो जाता है और रक्त बढ़ता है जिससे चेहरेपर सुर्खी आ जाती है। नियमित रूपसे रोगीको पालकका रस देनेसे उसकी पाचनशक्ति ठीक हो जाती है तथा शारीरिक शक्ति बढ़ती है। पालककी अपेक्षा बथुएका रस कम मात्रामें देना चाहिए। इन हरे शाकोंको उबालकर और निचोड़नेके बाद उसकी सब्जी रायता बनानेकी रीति गलत है। इससे सारे पौष्टिक तत्त्व व्यर्थ चले जाते हैं।

पालक अथवा बथुएका रस बच्चोंको भी देनेसे आशातीत लाभ होता है। बच्चोंके शरीरमें कम मात्रामें लौह तत्व पहुँचनेके कारण उनमें अधिकतर यकृत संबंधी रोग हो जाते हैं। पालक और बथुआ लौहके अजस्र स्रोत हैं। बढ़नेवाले बच्चोंको पालक और बथुआ देना लाभदायक सिद्ध होता है।

महिलाओंको लोहेकी तथा रक्त बढ़ाने वाले तत्त्वोंकी अधिक आवश्यकता होती है। अतएव उनके लिए इसका सेवन विशेष रूपसे हितकर है। खनिज लवणोंकी अधिकताके कारण ये हरे शाक शरीरकी रोगावरोधक शक्तिको बढ़ानेमें विशेष उपयोगी होते हैं। इनकी पत्तियोंका रस शीतल प्रभाव रखनेके कारण ज्वरों, फेफड़ों और आँतोंकी सूजनमें लाभकारी सिद्ध होता है। पालकके प्रयोगसे शरीरका रंग निखर जाता है, मुखकी कांति बढ़ जाती है तथा चेहरेके दाग दूर हो जाते हैं।

अध्याय ३१

आँवला

आँवलेमें फल और जड़ी-बूटी दोनोंका गुण विद्यमान है। आयुर्वेदमें तो इसका सदासे बड़ा महत्त्व और उपयोग है, इसका अलग इतिहास है, किंतु वैज्ञानिक ढंगसे इसकी उपयोगिता और इसमें भरे 'सी' विटामिनके भारी भंडारका अनुसंधान हालहीमें न्यूट्रीशन रिशर्च लेबोरेटरीज (पोषक तत्त्व अनुसंधानशालाओं) के डाइरेक्टरोंद्वारा हुआ है।

आँवलेका उत्पत्तिस्थान भारतवर्ष ही है। सर्दियोंमें आपको यह बहुतायतसे मिल सकता है। यहाँ यह जंगली पेड़ोंकी भांति स्वयं भी उगता पाया जाता है। आकारमें यह गूलरकी भाँति; किंतु कठोर फल होता है जिसका रंग हल्का पीला, हरा, चमकदार, ब्रह्मचारीके मुखमंडलकी भांति कांतिपूर्ण है।

कहावत है "गुरुजनोंकी बात और आँवलेके स्वादका पता बादमें ही चलता है।" खानेमें आँवला क्रमशः कसैला, कड़वा, चरपरा फिर मधुर एवं शीतल है। अपने अम्लत्वके कारण यह वातनाशक है और मधुरता व शीतलताके कारण पित्तनाशक। उसका कषाय गुण पित्तको मिटाता है। संक्षेपमें यों कह सकते हैं कि यदि प्रातःकाल सूर्योदयके पूर्व त्रिवेणीतटपर बहता हुआ शीतल-मंद-सुगंध समीरण त्रितापहारी है तो आंवला त्रिदोषहारी।

आँवलेका रासायनिक विश्लेषण भी किया जा चुका है। उसके आँकड़े इस प्रकार हैं। इसमें ८१.२० जलका अंश है। प्रोटीन ०.५, चिकनाई ०.१ तथा १४.१ कारबोहाइड्रेट है। इसके अतिरिक्त कैलशियम ०.०५, फासफोरस ०.०२ और लोहा ०.०१२ है, अन्य उपयोगी लवण भी इसमें प्रचुर मात्रामें मिलते हैं जिनका प्रतिशत अंश ०.७ है।

विटामिन 'सी' के लिए यह फल प्रथम श्रेणीमें भी प्रथम है। एक १०० ग्राम आँवले में ६०० मिलीग्रामतक विटामिन 'सी' उपस्थित हैं। (१००० मि० ग्राम = १ ग्राम)। रासायनिक विश्लेषणके आधारपर इस पोषक तत्त्वकी खानके लिए दूसरा नंबर देशी अमरूदका है। अजवायन का

नंबर तीसरा और सैंजनका चतुर्थ। प्रति १०० ग्राम देशी अमरूदमें २९९ मि० ग्राम और अजवायन और सैंजनमें क्रमशः २८१ और २२० मि० ग्रा० 'सी' विटामिन पाया जाता है। हरी मिर्च, पालक, नीबू, संतरा, रसभरी आदि भी इस विटामिनके धनी हैं। आँवलेमें 'ए' तथा 'बी' विटामिनकी उपस्थिति लगभग नहीं के समान है।

उपयोगिता

क्या गूदा, क्या गुठली, क्या जड़ या पत्ते आँवलेका अंग-अंग उपयोगी है।

शुद्ध जलके साथ आंवलेको पीसकर सिरपर मलनेसे तथा आँवलेके रसमें सिद्ध किये हुए तेलको लगानेसे बालोंकी रूक्षता मिटती है और वे अति कोमल हो जाते हैं। बाल काले और लंबे हो जाते हैं और लीख व जुएँ बिल्कुल नष्ट हो जाती हैं।

जलमें आंवले को पीसकर उसका रस निकालकर सिर और आँखोंको धोनेसे आँखोंकी गरमी शांत हो जाती है। लालिमा दूर होती है। मस्तिष्क हल्का रहता है।

बहुतसे आँवलोंका पत्थरके बर्तनमें रस निकालकर--पानी न मिलाया जाय--उसे बराबरके शुद्ध तिलके साथ चूल्हेपर रसका जलभाग जलनेतक औटाकर 'शुद्ध तिलके साथ चूल्हेपर रसका जलभाग जलनेतक औटाकर 'शुद्ध आँवला तेल' तैयार हो जाता है। अन्य गुण और सुगंध-वृद्धिके लिए और भी दूसरे आयुर्वेदिक पदार्थ तथा सत्त आदि इसमें मिलाये जा सकते हैं। इस तेलका सतत सेवन बालोंको काला, चमकदार एवं मुलायम बनाता है। मस्तिष्क शीतल, सिर नीरोग बना रहता है।

युवकोंको आँवलेका सेवन अत्यंत श्रद्धाके साथ करना चाहिए। यह पित्तके कारण उत्पन्न वीर्य-विकारोंको नष्ट कर देता है और उसकी गर्मीको शांत रखता है। प्रातःकाल इसका एक गिलास हल्का शरबत अद्‌भुत् स्वास्थ्यदायक है। एक दिन नीबूका जल, दूसरे दिन आँवलेका--या इसी प्रकारसे कुछ-कुछ-क्रम बनाया जाय जो उत्तमतर होगा। लू लगनेसे उत्पन्न ज्वर, मूर्च्छा, वमन आदिमें भी यह अपना सफल प्रभाव दिखाता है।

चर्मरोगोंमें आँवलेके जलसे स्नान किया जाय तो खुजली, जलन, दाह तथा इस प्रकारके अनेक चर्मरोग शांत हो जाते हैं। इसी तरह आँवलेके अनेक उपयोग हैं।

अध्याय ३२

आँवला--भोजन और दवा

मनुष्यके स्वास्थ्यका आधार उसके शरीरका शुद्ध रक्त है। जबतक शरीरमें शुद्ध रक्तका संचार भली प्रकार होता रहे तब तक शरीरमें किसी प्रकारकी कमी नहीं आने पाती और न रोग ही हो पाता है। किंतु यदि रक्तमें विजातीय तत्त्वोंका समावेश होने लगे तो शारीरिक अवस्था गड़बड़ाने लगती है और शरीर रोगोंका सामना करनेमें असमर्थ हो जाता है। फलस्वरूप असमयमें ही वृद्धावस्थाके चिह्न परिलक्षित होने लगते हैं। ये विजातीय तत्त्व अम्ल होते हैं जिनमें विशेष रूपसे 'यूरिक एसिड' स्वास्थ्यका प्रबल शत्रु माना गया है।

इस विषयमें अनेक खोजें की गयीं, अनुसंधान किये गये। विशेषज्ञोंका यही अभिप्राय रहा कि कुछ ऐसी प्रभावशाली वस्तुएं होनी चाहिए जिनसे इन स्वास्थ्यविरोधी विजातीय तत्त्वोंका शरीरसे निष्कासन नियमित रूपसे होता रहे। अंतमें तीन वस्तुएं प्रकाशमें आयीं--सेब, ओलिव और आँवला। प्रथम दोका हमारे देशमें अभाव है किंतु आँवला, कहीं भी और कभी भी, किसी-न-किसी रूपमें सरलतासे सुलभ हो जाता है। अतः भारतवासियोंके लिए आँवला सर्वोत्कृष्ट माना गया।

तथ्य वास्तविकतासे पूर्ण है। अबसे सहस्रों वर्ष पूर्व भारतीय स्वास्थ्यविशेषज्ञोंने अपने अनुभवोंके अनुपम ग्रंथ 'आयुर्वेद' में, इस फलकी मुक्त कंठसे प्रशंसा की है और आँवलेको 'रसायन' की श्रेणीमें माना है। इस 'रसायन' शब्दका स्पष्टीकरण करते हुए उन्होंने कहा-- "जो वस्तु सभी कालमें सभीके लिए समान रूपसे सेवनीय हो, शरीरके प्रत्येक अंगको नवजीवन प्रदान करती हो, समस्त व्याधियोंका हरण करनेकी सामर्थ्य रखती हो और सुदृढ़ स्वास्थ्य तथा दीर्घायु प्रदान करनेमें सक्षम हो--ऐसी अमृत-तुल्य दिव्य वस्तुको रसायनके अतिरिक्त, क्या संज्ञा दी जा सकती है?"

रसायन वस्तुओंका सेवन करते रहनेसे दृष्टि, स्मृति, कांति, स्फूर्ति, नवयौवन, इंद्रियोंका बल आदिमें वृद्धि होकर सप्त धातुएं सुपुष्ट होती हैं और मनुष्यकी आयु स्थिर रहती है। वृद्धावस्थाका समयसे पूर्व कभी आगमन नहीं

हो पाता एवं अधिक आयुमें मनुष्य पूर्ण नीरोग और बलवान बना रहता है। महर्षि चरकने उपर्युक्त शब्द 'चरकसंहिता' में कहकर, आँवलेके महत्त्वमें और वृद्धि कर दी है। भारतीय चिकित्सामें तो इसका प्रयोग श्रद्धाके साथ होता ही है, परिवारोंमें भी इसका विभिन्न रूपोंमें सेवन किया जाता है। और भारतीय नारी इसको स्वास्थ्य-सौभाग्य एवं सम्पदाका प्रतीक मानते हुए प्रत्येक वर्ष फाल्गुन मासमें, आमलकी एकादशीको आँवलेके वृक्षका श्रद्धापूर्वक पूजन-अर्चन करती हैं।

शरीर-पोषक रसोंसे परिपूर्ण

जो हो, आँवलेमें शरीरका पोषण और संवर्द्धन करनेवाले छः रसोंमेंसे पाँच--मधुर, अम्ल, कटु, तिक्त और कषाय विद्यमान हैं। आयुर्वेदीय दृष्टिकोणसे एक ही वस्तुमें पाँच रसोंका पाया जाना एक महत्त्वपूर्ण बात है। क्योंकि मधुर (मीठा) और कषाय (कसैले) रससे पित्त, अम्ल (खट्टे) रससे वायु तथा तिक्त (चरपरा) व कटु (कड़वा) रससे कफादि दोषोंका शमन होता है। अतः उपरोक्त पाँचों रसोंका एक वस्तुमें एकत्र मिलनेका अर्थ है कि ऐसी वस्तु त्रिदोषोंको अपने नियंत्रणमें रखकर, शरीरको आरोग्य प्रदान करनेमें पूर्ण समर्थ है। इस दृष्टिसे भी आँवला एक विश्वसनीय सहायक है।

बहुमूल्य तत्त्वोंका संघटन

भारत-सरकारकी स्वास्थ्य बुलेटिन संख्या २३में, आँवलेके पोषक तत्त्वोंका निम्न परिमाण बताया गया है। इससे स्पष्ट होता है कि इस भारतीय फलमें कितने अमूल्य तत्त्वोंका भंडार है और आधुनिक विज्ञानकी कसौटीपर भी महत्त्वपूर्ण प्रमाणित हुआ है।

विटामिन सी का स्रोत

आँवलेमें ए, बी और सी तीनों विटामिन पाये जाते हैं। परंतु विटामिन सी इसमें प्रचुर मात्रामें है। संतरेके रससे बीस गुना अधिक विटामिन सी आँवलेमें मिलता है। अन्य शाक और फलोंके विटामिन जहाँ सूखनेपर नष्ट हो जाते हैं वहाँ आँवला सूखनेपर अपना विटामिन सुरक्षित रखता है; यह इसकी एक अतिरिक्त विशेषता है।

नीरोग रहने और स्वास्थ्यको उत्तम बनाये रखनेके लिए मनुष्यको प्रतिदिन पचास मिलिग्राम विटामिन सी की आवश्यकता होती है। इतना

पोषक	प्रोटीन	वसा	खनिज-द्रव्य	रेशा	कार्बोहाइड्रेट	फास्फोरस	लौह	लवण	कैल्शियम	और	जलीयांश
तत्व	०.५%	०.१%	०.७%	३.४%	१४.१%	०.५%	०.५%	०.७%	०.५%	—	८१.२%
अम्ल तत्व	एसिटिक एसिड--फलोंमें ९.६%										
	टानिक और गैलिक एसिड--फलोंमें ३५%										
	टैनिन एसिड--छालमें--८ से ९%। पत्तोंमें २० से २२%। कोपलोंमें २१%।										
शर्करा	ग्लूकोज--फलोंमें १० प्रतिशत										

विटामिन प्राप्त करनेके लिए संतरेका रस चार औंस या टमाटरका रस आठ औंस चाहिए; किंतु आँवला अपने आधा औंस रससे ही, इसकी पूर्ति करनेमें समर्थ है। फिर अन्य दोनों फलोंकी तुलनामें कहीं सस्ता भी है। जाड़ोंकी ऋतुमें तो अच्छे, पुष्टफल दो रुपए प्रति किलोग्राम तक बाजारमें बिक जाते हैं। उसके पश्चात् यह सुखाये हुए रूपमें सरलतासे बाजारके पंसारियोंके यहाँ तीनसे चार रुपए प्रति कि० ग्राम तक प्राप्त होता रहता है। आँवला वैसे तो जहाँतक हो सके ताजा ही प्रयोग करना चाहिए; किंतु जिन ऋतुओंमें यह ताजा नहीं मिल पाता उन दिनों सूखा ही प्रयोग कर लाभ उठाना चाहिए। अनेक परिवारोंमें तो खटाईके स्थानपर दैनिक आंवलेका प्रयोग करनेकी प्रथा देखी जाती है, विशेषरूपसे धनिया-पोदीनेकी चटनीमें। यह प्रथा स्वास्थ्यप्रद है।

गत महायुद्धका अनुभव

गत महायुद्धके समय चिकित्सकोंको आँवलेके विषयमें एक नवीन अनुभव हुआ। घायल सैनिकोंके घाव ठीक होनेमें विलम्ब हो रहा था और अनेक सैनिकोंके घावोंमें सड़न भी आरम्भ हो गयी थी। अनेक ओषधियोंका प्रयोग हुआ; किंतु प्रभावशाली परिणाम नहीं निकले। अंतमें आँवलेके चूर्णकी सूखी गोलियाँ प्रयोग करायी गयीं। चमत्कारी परिणाम हुआ। इससे सिद्ध हुआ कि आँवलेमें सड़न और कीटाणुओंके रोकनेकी प्रबल शक्ति है। फलतः आज भी आँवलेका प्रयोग इस प्रकारके रोगोंमें सफलताके साथ किया जाता है।

इसी प्रकार पायरिया रोगमें, इसके पत्तोंके काढ़े का कुल्ला करना और फलका किसी-न-किसी रूपसे सेवन करना रोगका अचूक इलाज सिद्ध हुआ है। जिन बालकोंके दाँत टेढ़े-मेढ़े हों या समयपर न निकल रहे हों, उनके लिए भी लाभ उठाया जा सकता है।

नवयुवकोंका मित्र

युवावस्थामें आँवलेका प्रयोग प्रत्येक दृष्टिकोणसे लाभप्रद सिद्ध होता है। यह नवयुवकोंकी अनेक बहुप्रचलित व्याधियोंको समाप्त करनेके साथ-साथ उनकी मानसिक एवं शारीरिक उत्तेजना का शमनकर संयत जीवन बितानेमें एक विश्वसनीय सहायकका कर्तव्य पूरा करता है। इससे शारीरिक शक्ति प्राप्त होनेके साथ-साथ, बौद्धिक विकास भी होता है। आमकी खटाई मनुष्यके लिए लाभदायक नहीं है। यह अनेक प्रकारके रक्त रोग, पित्तजनित व्याधियाँ विशेषरूपसे अम्लता आदि उत्पन्न करती हैं और

पुरुषत्वको नष्ट करनेवाली होती है। धातुओंके अंदर अकारण उत्तेजना उत्पन्न कर मनुष्यकी वासनाको उभारना इसका विशेष कार्य है। इस विषयमें भी आँवला, अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य सम्पादित करता है। नवयुवकों और युवतियोंको इसपर विचार करना श्रेयस्कर है।

गर्भावस्थामें

यदि आरम्भसे ही नौ मासपर्यन्त, नित्य-प्रति प्रातः-सायंकाल एक-एक आँवला या उतना ही सूखे आँवलेका चूर्ण गर्भिणीको सेवन कराया जाये तो इस स्थितिमें होनेवाले वमन, उबकाई, भूखका न लगना, कब्ज इत्यादि उपद्रवोंका शमन हो जाता है, शरीरमें लोह और कैल्शियमकी पूर्ति होती और गर्भस्थ शिशुको पौष्टिक आहार मिलता है। गर्भावस्थामें रक्तकी कमी प्रायः हो जाती है और यदि यह कमी निरन्तर चलती रहे तो प्रसवके समय स्त्रीका जीवन संकटमें पड़ जाता है। आँवला इस बारेमें चमत्कारी कार्य कर मां और शिशु दोनोंको नवशक्ति प्रदान करता है।

यह अनुभवसिद्ध बात है कि एक बड़ा आँवला, अंडेसे कहीं अधिक और स्थायी शक्ति प्रदान करनेमें समर्थ है। अंडा उत्तेजनाकारक और आँवला उत्तेजना शांत करनेवाला, विशेष अंतर यह है।

बालकों और छात्रोंके लिए

इसी प्रकार बालकोंको यदि आरंभसे ही आँवला प्रयोग करनेका अभ्यस्त बना दिया जाए तो उनके शरीरमें रोगप्रतिरोधक शक्ति एकत्र होती है और वे अनेक रोगोंसे बचे रहते हैं। शरीरके प्रत्येक अंग-प्रत्यंगका उचित रूपसे विकास होता है जिससे जीवनभर स्वास्थ्य और सुडौलता बनी रहती है। शिक्षा पानेवाले विद्यार्थियोंके लिए तो यह एक अमूल्य पौष्टिक वस्तु प्रमाणित हुई है। इससे सात्त्विक वृत्ति उत्पन्न होती है और स्मृतिशक्तिका प्रचुर रूपसे विकास होता है। नेत्रोंकी दृष्टि-शक्तिके लिए भी आँवला एक प्रभावशाली वस्तु प्रमाणित हुआ है।

अन्य उपयोग

देखा जाय तो आँवला प्रत्येक रूपमें मानव-मात्रके लिए अत्यन्त हितकारी फल है। इसके फलके साथ-साथ इसके वृक्षके अन्य अंग भी उपयोगमें आते हैं। आंवलेके वृक्षकी लकड़ी गहरे लाल या लाल-भूरे रंगकी कड़ी और लचकदार होती है। यह सस्ते किस्मके मकान, कृषियंत्र, बंदूकोंके बट, देशी हुक्के एवं सफेद कत्था बनानेके कार्यमें आती है। इसके अनेक

अंगोंमें जो 'टेनिन' नामक पदार्थ पाया जाता है वह भारतमें चमड़ा पकाने और अनेक ओषधियां बनानेके कार्यमें आता है। पत्तोंसे बने नीले और हल्के भूरे रंगोंसे, रेशमकी बड़ी पक्की रंगाई होती है।

उत्पत्ति और वृक्ष-परिचय

भारतवर्षमें आँवलेके वृक्ष हिमालयके निचले भागोंमें तथा उप-पर्वतीय भागोंसे लेकर चार हजार फीटकी ऊँचाईतक एवं जम्मूसे लेकर पूर्वमें गारो-खासीकी पहाड़ियों और दक्षिणी भारत तथा लंकातक वनोंमें (स्वयं उत्पन्न हुए वृक्ष) प्रचुरतासे पाये जाते हैं। इनपर पाले एवं लू का कोई प्रभाव नहीं पड़ता और न पशु-पक्षिगण इन्हें किसी प्रकारकी हानि ही पहुँचा पाते हैं।

आँवलेका वृक्ष मध्यमाकारका सदैव हरा-भरा रहनेवाला होता है। इसीसे वाटिका आदिमें इसे प्रायः लगाते हैं। वर्षा-ऋतुमें इसका पौधा किसी नर्सरी या राजकीय उद्यानसे लेकर लगाया जा सकता है। किंतु इसकी वृद्धि बहुत ही धीमी गतिसे होनेके कारण, फलोंकी प्रतीक्षा आठ-दस वर्षतक करनी पड़ती है। इस लम्बी प्रतीक्षाके पश्चात् इसमें सुन्दर फल आने लगते हैं जो वृक्षके पुराने होते जानेपर संख्यामें निरंतर वृद्धि प्राप्त करते रहते हैं। यहाँतक कि एक वृक्ष छह से आठ क्विंटलतक फल प्रदान करता है।

इसकी छाल १/३ इंचसे कम पतली होती है। पत्तियां इमलीके वृक्षसे मिलती-जुलती, हरे वर्णकी १/३ इंचसे १/२ इंच तक लम्बी, जो बहुत कम गिरनेवाली होती हैं वृक्षको सदाबहार बनाये रखती हैं। पुष्प छोटे, कुछ हरीतिमा लिये पीले-से होते हैं जो पत्तियोंके संधि-स्थलपर, गुच्छोंके रूपमें खिलते हैं। इन्हीं फूलोंमें फल गुच्छोंके रूपमें, अगस्तके अंतसे लगना आरंभ हो जाता है।

आँवलेका फल वृक्षकी जातिके अनुसार १, २ औंससे लेकर २ औंसतक और १/२ से २ इंच तक अर्द्धव्यासकी सुपारीसे लेकर छोटे सेब तकके आकारमें पाया जाता है। फल स्वादमें खट्टे, कसैले होते हैं। गूदा रेशेदार, कड़ा और षट्कोणाकार गुठलीपर मजबूतीसे जमा रहता है जो सुखानेपर गुठलीसे अलग हो जाता है। उत्तरी भारतमें सितम्बरसे लेकर अप्रैलतक इसके फल प्राप्त होते हैं। दक्षिणमें यह सम्पूर्ण वर्षभर फलता-फूलता रहता है।

अध्याय ३३

ककड़ी

लखनऊ जाइए, अब भी आपको नवाबी शान वहाँ ककड़ीकी तारीफ में 'लैलाकी अंगुलियां और मजनूंकी पसलियां' की पुकार लगाती हुई सुनाई देगी। लोग पतली-पतली कोमल ककड़ियां खरीदते हैं और खुश हो-होकर मजे ले-लेकर खाते हैं। लखनऊमें यों इज्जतसे बिकनेवाली ककड़ी हिन्दुस्तानमें रंगरूप के थोड़े हेर-फेरसे हर जगह मिलती है। कहींकी कुछ ज्यादा लंबी होती है तो कहींकी ज्यादा मोटी। रंग भी गहरे हरेसे लेकर हलके हरियाली मिले पीलेतक पहुँच जाते हैं। रंगरूपमें जगह-जगह अंतर होनेपर भी सबके बीज एक ही तरहके होते हैं। ककड़ी गर्म देशकी उपज है; यों अब यह अपने अनूठे स्वादके कारण सारी दुनियामें पैदा की जाती है।

वैज्ञानिक बताते हैं कि इसका जन्मस्थान हिंदुस्तान, मिस्र और इटली है। मिस्रके पिरामिडोंमें शवोंके साथ रखे हुए ककड़ीके बीज मिले हैं और वहाँकी पुरानी कविताओंमें भी ककड़ीकी प्रशंसा मिलती है। अब भी मिस्रमें ककड़ी गाँवोंमें भरपेट खायी जाती है और इसे सालभर उपजानेकी कोशिश की जाती है।

ककड़ी ज्यादातर गर्मियोंमें ही होती है। इसके फूल पीले-पीले और इसकी बेलें बड़ी कोमल होती हैं। जड़ मजबूत होती है जो सारी लताका पोषण करती है। पत्ते बड़े-बड़े होते हैं जो आसपासकी जमीनको ढककर उसे सूखनेसे बचाते हैं और ककड़ीको तर रखते हैं। कई जगह तो ककड़ीको इसके ठंडे जलीय अंशके कारण तर ही कहा जाता है। पर इसकी तरी, इसका ठंडक पहुँचानेका गुण इसके जलीय अंशमें नहीं, इसमें अधिकतासे पाये जानेवाले सोडियममें है जो शरीरको ठंडक पहुंचानेके साथ-साथ रक्तको क्षारत्व प्रदान करता है। ककड़ीमें सोडियमके अलावा कैलसियम, मैगनियम, फास्फोरस, क्लोराइड, सल्फर, लोहा भी पाया जाता है। इसमें विटामिन ए थोड़ी मात्रामें मिलता है और बी तथा सी प्रचुर मात्रामें होता है। इन गुणोंके कारण ककड़ीको तरकारीकी जगह फल कहना ज्यादा ठीक है।

ककड़ी जलोदर आदि रोगोंमें, जिनमें अधिक पेशाब लानेकी जरूरत होती है अपने मूत्रण गुणके कारण बहुत उपयोगी साबित होती है। इसके उपयोगसे पेशाब अधिक तो आता ही है, पर वृक्क और मूत्रालयको कोई नुकसान नहीं पहुंचता। हर तरहके गठिया रोग और आत्मविषमयताको दूर करनेमें ककड़ी अत्यंत उपयोगी है।

कच्ची ककड़ीका रस निकालकर यदि चेहरेपर लगा लिया जाय और चेहरेपर ही उसे सूखने दिया जाय तो चेहरेपर अजब लावण्य छा जाता है।

ककड़ीके लाभ उसे कच्ची खानेमें ही पूरे-पूरे मिलते हैं, आगपर पका देनेपर तो इसके बहुत-से गुण नष्ट हो जाते हैं। यों लोग ककड़ीकी तरकारी, रायता और अचार बनाकर खाते हैं। इसका अचार बनानेमें इसमें बहुत मसाले नहीं डालने पड़ते। ककड़ीके टुकड़ोंमें थोड़ा-सा नमक, राई और सरसोंका तेल डालकर धूपमें रख देनेसे इसका अचार दो-तीन दिनमें तैयार हो जाता है।

ककड़ीके उपयोगसे कचुंबर (सलाद) बहुत बढ़िया बनता है। बिना छीले ही ककड़ीके पतले-पतले गोल-गोल टुकड़े काटकर एक प्लेटपर सजा दीजिए, ऊपर इसी तरह टमाटरके और उसके ऊपर प्याजके कतले लगा दीजिए, बढ़िया आकर्षक कचुंबर तैयार हो जायगा।

इसी तरह ककड़ी, गाजर और दही या क्रीमके साथ भी ककड़ीका सलाद बनता है।

ककड़ी और प्याजके साथ रोटीका सैंडविच भी बनाया जा सकता है।

ककड़ीके रसमें, नमक, भुना जीरा मिला देनेपर बहुत ही बढ़िया पेय बनता है। भोजनके आरंभमें यदि यह पेय डेढ़-दो सौ ग्राम पिया जाय तो भोजनके प्रति रुचि उत्पन्न होती है।

कद्दूकसमें ककड़ी कसकर दहीके साथ मिला देनेपर ककड़ीका स्वादिष्ट रायता तैयार हो जायगा।

जब ककड़ीका मौसम हो तब इसका उपयोग खूब खुलकर तरह-तरहसे कीजिए।

अध्याय ३४

प्याज और लहसुन

आहारके विषयमें कुछ लिखनेका एक बुरा परिणाम यह होता है कि किसी फल या तरकारीकी प्रभावकारिताकी प्रशंसा करनेपर बहुतसे लोग बिना कुछ विचार किये उसे बहुत अधिक परिमाणमें ग्रहण करने लगते हैं और इस अतिके कारण अस्वस्थ होनेपर लेखकको ही बुरा-भला कहने लगते हैं।

उपयोग

प्याज और लहसुन खानेमें जायकेदार होनेके साथ ही आहारकी दृष्टिसे भी गुणकारी होते हैं। मनुष्यके प्रत्येक रोगमें इनके लाभदायक होनेका तो दावा नहीं किया जा सकता, पर अगर अतीतमें इनका अल्पाधिक मात्रामें प्रयोग होता रहा है तो हमें भी इनका यथोचित उपयोग करनेमें कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए क्योंकि इनसे अच्छे-अच्छे तत्त्वोंकी प्राप्ति ही नहीं होती, बल्कि हमारा भोजन भी रुचिकर हो जाता है।

भारतमें ये दोनों चीजें कसरतसे पैदा होती हैं, पर उच्च वर्णोंके बहुतसे लोग, विशेषकर वैष्णवमतानुयायी इन्हें अपने भोजनमें स्थान नहीं देते। और, कुछ लोग तो तामसिक पदार्थ कहकर इनसे घृणा भी करते हैं। कुछ लोग अन्य तरकारियोंके साथ प्याज और लहसुन मसालेके तौरपर खाते हैं, पर कच्चा प्याज खानेको तैयार नहीं होते। यही बात ब्रिटेन, फ्रांस, स्पेन आदि कुछ पाश्चात्य देशोंमें भी देखी जाती है। उपयोगके रूपमें यह अंतर होनेका एकमात्र कारण इसकी कड़ी गंध है जो मुँह, सांस और पसीनेसे भी निकला करती है।

प्राचीन कालमें

प्याज और लहसुनका व्यवहार बहुत प्राचीन कालसे होता आ रहा है। मिस्रमें प्याज जंगली रूपमें पैदा हुआ करता था और लोग इसे उबालकर और कच्चा भी खाया करते थे। मरुस्थलमें प्यासकी रोकथाम करने और

भोजनका स्वाद बढ़ानेमें सहायक होनेके कारण मिस्री लोग इसे बहुत महत्त्व दिया करते थे । हिरोडोटसका कहना है कि स्तूपोंका निर्माण करनेवाले गुलामोंको खिलानेके लिए प्याजपर बहुत बड़ी रकम खर्च की जाती थी । मिस्री पुरोहितोंने, जो झाड़-फूँकसे रोगोंका उपचार किया करते थे, यह पता लगाया था कि प्याजमें कुछ रोगनाशक तत्त्व रहते हैं इसलिए वे शूल, वात आदिके लिए जो पुलटिस तैयार करते थे उसमें प्याज भी मिलाया करते थे । वे इसे चर्बीके साथ पीसकर क्षयकारक रोगोंमें देते थे, कानमें दर्द होनेपर इसका रस डालते थे, रंगका निखार करनेकी इच्छुक स्त्रियोंको शराबमें उबालकर दिया करते थे और इन क्वाथोंके लिए काफी पैसे लेते थे। इन उपायोंसे बहुतसे रोगी अच्छे भी हो जाया करते थे जैसा कि अन्य उपचारोंसे हुआ करता है, पर आरोग्य प्रदान करनेका श्रेय प्याजको प्राप्त हो जाता था जिससे लोगोंको प्याजके गुणों और प्रभावकारितामें बहुत अधिक विश्वास हो गया था ।

प्राचीन कालमें यूनानियोंने भी मिस्रियोंकी ही तरह प्याज और लहसुनको महत्त्व दे रखा था । इन दोनोंके गुणकारी होनेमें संदेह नहीं, पर ये उतने चमत्कारक नहीं होते जितने होनेका वे अनुमान करते थे । डोकोराइटिस नामक सुप्रसिद्ध चिकित्सक अर्श रोगमें तेलसे पीसा हुआ प्याज, नेत्ररोगमें शहदके साथ और कुत्तेके काटनेपर सिरके के साथ प्रयोग करनेकी राय दिया करता था । गैलन बहरापन दूर करनेके लिए प्याजके रसमें तेल मिलाकर देता था और प्लिनीका दावा था कि प्याजसे आँखका उठना अच्छा हो जाता है; क्योंकि उसके रसकी चरपराहट आँखोंसे पानी बहाने लगती है ।

इस प्रकार प्याज और लहसुनका प्रयोग तरह-तरहके रोगोंके उपचारमें होता रहता है और बहुत-सी अवस्थाओंमें वे प्रभावकर भी सिद्ध हुए हैं । नवीं, दसवीं, और ग्यारहवीं सदियोंमें जब अरब साम्राज्य बहुत उन्नत था, एलइस रायली जैसे बड़े चिकित्सकने प्याजको बहुत अधिक महत्त्व दिया था और सुकरातका तो यहाँतक दावा था कि इससे शक्ति और साहस बढ़ता है; पर इन सब बातोंके होते हुए भी यह कभी अनुसंधानका विषय नहीं बनाया गया ।

प्याजमें रहनेवाले तत्त्व

इस प्रकारके गोलमटोल दावोंकी तहमें प्रायः कुछ सत्यांश भी रहा करता है। कच्चा या उबला हुआ प्याज खानेपर शरीरको अवश्य कुछ फायदा पहुँचता है। रासायनिक विश्लेषणसे पता चला है कि इसमें एक तरहका गंधकवाला सफेद तेल जो उड़नेवाला और कड़ी गंधका होता है, रवेके रूपमें परिणत होनेवाली शर्करा, गोंद-जैसा एक द्रव, फास्फरिक एसिड, एसेटिक एसिड, लेशमात्र कैलसियम नाइट्रेड और कुछ रेशेदार पदार्थ रहते हैं।

उपचारमें प्याजका स्थान

क्षयकी रोक-थाम करने और शोथ दूर करनेमें प्याज सहायक होते देखा गया है और रूसी वैज्ञानिक भी हजारों प्रयोगोंके बाद इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि प्याज, लहसुन और कड़ी गंधवाली कुछ तरकारियोंके निर्याससे जीवाणु नष्ट हो जाते हैं, पर इस निर्यासमें वह कौन-सा तत्त्व है जो यह प्रभाव उत्पन्न करता है। इसका पता लगानेमें वें समर्थ नहीं हो सके। अन्तमें उन्होंने यह निश्चय किया कि प्याजकी कड़ी गंधमें ही जीवाणुओंको नष्ट करनेकी शक्ति है जिसका कुछ अंश काटनेपर उड़ जाया करता है।

रूसी वैज्ञानिक प्याज और लहसुन पीसकर छोटी-छोटी नलियोमें भरकर रखते और नलीका एक मुँह पूय स्राव करनेवाले घावसे लगाते थे। लुगदीके साथ घावका संपर्क नहीं होता था। यह उपचार दो-से-दस मिनटतक दो-तीन बार करनेपर घाव अच्छा हो जाता था। इसमें वे इस परिणामपर पहुँचे कि प्याज और लहसुनमें कोई जीवाणुनाशक तत्त्व अवश्य होता है।

काटनेपर प्याजका उक्त कीटाणुनाशक तत्त्व उड़ जानेके कारण खाद्यकी दृष्टिसे भी उसका महत्त्व बहुत कुछ कम हो जाता है। लूथर बरबैंकने गंधहीन प्याज पैदा करनेकी विधिका आविष्कार किया था और उनका दावा था कि यह प्याज हर तरहसे मामूली प्याज जैसा ही होता है, पर लोगोंने इसे पसंद नहीं किया; क्योंकि यह जायकेदार नहीं होता था।

लहसुनका प्रभाव

लहसुनकी गंध प्याजसे भी कड़ी होती है--इतनी कड़ी कि अगर जूतेमें उसकी पत्ती रख दी जाय तो एक घंटेके बाद पहनने वालेकी सांससे लहसुनकी गंध आने लगेगी। गंधकी अधिकताके ही कारण लोग दवाके रूपमें इसे प्याजसे अधिक प्रभावकर मानते हैं। यह बात भले ही कुछ अतिरंजित हो, पर यह निश्चित है कि इससे रक्तका क्षारीकरण होता है जो रोगोंकी रोक-थाम करनेमें बहुत सहायक होता है। रूस और पोलैंडमें एक सम्प्रदायके लोग प्याज और लहसुन अधिक खाया करते हैं। कहा जाता है कि इन पदार्थोंके प्रभावसे ये कभी कर्क-स्फोटसे ग्रस्त नहीं होते। क्षयमें भी लहसुनका इंजेक्शन लाभदायक होते देखा गया है।

प्याज और लहसुन दोनोंके संबंधमें तरह-तरहके अंधविश्वास फैले हुए हैं। दूध और प्याजका योग वातरोगके लिए लाभदायक माना जाता है और बूढ़ी औरतें खांसी, सर्दी और दमेंमें इसे औषधके रूपमें ग्रहण करती हैं। इसके ग्रहणसे पसीना और कफ अधिक निकलता और वृक्कोंकी सक्रियता बढ़ जाती है।

अध्याय ३५

प्याज--एक ओषधि

मनुस्मृतिके अनुसार जो अनेक खाद्य सवर्णोंके लिए त्याज्य ठहराये गये हैं, उनमें कंद-भाजियां भी हैं। आलू भारतमें संभवतः मनुस्मृतिके बाद आया, अतः यह महामुनि मनुके विषयोंकी पकड़के बाहर रह गया। अब उनके कानून गाजर, शलजमके लिए भी ढीले हो गये हैं। पर, प्याजका उपयोग अब भी धर्मात्मा लोग कम करते हैं। पर इधर जो भोजनसंबंधी अनुसंधान और खाद्योंके वैज्ञानिक विश्लेषण हुए हैं उनके अनुसार प्याज एक लाभदायक एवं आवश्यक खाद्य सिद्ध हुआ है। इस सस्ती, सुलभ और सालभर मिलती रहनेवाली भाजीमें विटामिन ए, बी और सी काफी मात्रामें एवं अनेक क्षार इतनी प्रचुर मात्रामें मिलते हैं कि वे दूध, अंगूर, किशमिश, बादाम और नारियलमें मिलनेवाले क्षारोंसे दुगुने और तिगुनेसे भी अधिक पड़ जाते हैं।

खाद्योंमें सम्माननीय स्थान तो प्याजको अब मिला है, पर ओषधिकी भांति तो संसारभरमें यह अनंतकालसे पूजित है।

मिस्रके रहनेवालोंने इसके गुणोंको बहुत पहले ही पहचान लिया था। चिपोपसकी यादगारमें बनाये गये पिरामिडके बनानेवाले मजदूरोंके भोजनमें साढ़े चार लाख रुपये उन्होंने केवल प्याज, लहसुन और गाजरके लिए खर्च किये थे। वहांके वैद्य, जो वैद्याई और पुरोहिताई दोनों साथ-साथ करते थे, अपने रोगियोंको अनेक रोगोंमें प्याज खानेकी सलाह देते थे। गठियाके दर्दको दूर करनेके लिए जोड़ोंपर प्याजको पीसकर और उसमें चर्बी मिलाकर बांधा जाता था। कई तरहके कोढ़के रोगियोंके लिए भी यह पुलटिस काममें आती थी। शराबमें प्याज पकाकर लगाना खाजकी दवा समझी जाती थी। और, लोगोंका खयाल था कि इस प्रयोगसे त्वचा भी निखरती है। मसूड़ोंमें दर्द होनेपर प्याजके साथ उबला पानी कुल्ला करनेको दिया जाता था।

पोलैंडनिवासी यहूदियोंको मलके साथ कीड़े या केंचुए जानेकी बीमारी कभी ही होती है, उसका कारण उनका प्याज और लहसुनका अधिक उपयोग

है । लोगोंका खयाल है कि यहूदियोंके पुरखोंने प्याज खानेकी आदत मिस्रियोंसे ही सीखी होगी । ओलबरने लिखा है कि ग्रीसनिवासी और यहूदी प्याजको प्लेग और तत्संबंधी रोगोंके लिए एक विशेष ओषधि समझते थे और आज भी, वे प्याज, लहसुन और सिरकेको प्लेगसे बचनेके लिए उपयोगी मानते हैं ।

सन१९१२ में फ्रांस निवासी डा० गल्केने प्याजचिकित्सापर एक लंबा लेख लिखा था, जिसमें उसने बताया था कि जलोदरसे पीड़ित अनेक रोगियोंको केवल प्याज खिलाकर उसने रोगमुक्त किया था । वह रोगीको प्याजके अतिरिक्त अन्य कोई चीज खानेको नहीं देता था । गत महायुद्धमें किडनीके गड़बड़ीके कारण पैदा हुए जलोदर रोगमें प्याजके चमत्कार डाक्टर लेकलर्कको भी देखनेको मिले थे। उन्होंने लिखा है कि जलोदरके अनेक बिगड़े हुए सिंहलनिवासी सिपाही रोगियोंको भी प्याजसे बहुत लाभ हुआ था ।

यों प्याज छोटे-मोटे रोगोंमें घरेलू ओषधिकी तरह हर जगह प्रचलित है । प्याजका ओषधिगुण इसके तीखे उड़नशील गंधकसे तेलमें संनिहित है, जो प्याजके रसमें मिला रहता है । यह उत्तेजक और कृमिनाशक और मूत्रल होता है ।

हमारे यहां भी सर्दी, जुकाम, खांसी, गला फंसने आदि रोगोंमें उबला या भुना हुआ प्याज बहुत उपयोगी समझा जाता है । सर्दी लगनेपर यदि इसका उपयोग काफी मात्रामें कर लिया जाय तो श्वासनलिकासंबंधी कोई रोग होनेका भय नहीं रहता । बुरी-से-बुरी खांसी और जबकि आवाज निकलना असम्भव-सा हो जाता है--ऐसे फँसे गलेमें भी प्याज निश्चित रूपसे लाभ करते देखा गया है ।

दांतके दर्द या मसूड़ेकी पीड़ामें दांत या मसूड़ेपर प्याजका एक छोटा टुकड़ा रखनेसे दर्द शीघ्र जाता रहता है ।

आंखमें बिलनी होनेपर शुरूमें ही यदि उस पर एक टुकड़ा प्याज बांध दिया जाय तो अक्सर बिलनी गायब हो जाती है ।

नकसीर फूटनेपर भी प्याज अच्छी दवा है । इसमें एक प्याज लेकर दो हिस्सोंमें काटना चाहिए और गर्दनके दोनों ओर कानके नीचे बांध देना चाहिए । प्याज बांधने या प्याजका रस मस्सेपर रगड़नेसे कई बार मस्से अच्छे होते देखे गये हैं।

तेज गंधवाला एक प्याज गर्दनके पीछेकी तरफ बांधनेसे निद्रा शीघ्र

और गहरी आती है। निद्राके लिए जो मार्फिया दिया जाता है, उससे यह दवा ज्यादा पुरअसर साबित हुई है।

पेशाब रुकनेपर एक गरम-गरम भुना प्याज मूत्रेंद्रियके निकट रखनेसे पेशाब खुलनेमें सरलता होती है। बच्चोंको सर्दीके कारण पेशाब रुकनेपर यह वस्तु विशेष लाभकारी है। फोड़ा पकाने और शीघ्र फोड़नेके लिए प्याजका एक आधा टुकड़ा अधभुना करके फोड़ेके ऊपर बांधना चाहिए।

प्याजके सागका रस मधुमक्खी या बर्रके डंक मारनेपर लगानेसे दर्द देखते-देखते चला जाता है और फिर सूजन नहीं आती।

लोग बतलाते हैं कि गंजे सिरपर बाल उड़ी हुई जगहपर यदि कुछ दिनोंतक लगातार नित्य थोड़े समयके लिए प्याज पीसकर बांधा जाय तो बाल उग आते हैं।

रोज सबेरे प्याजका तीन औंस रस पीना फ्रांसमें मिरगीकी बहुत अच्छी दवा समझी जाती है।

कान बजते रहनेमें लोग रुईपर प्याजका रस टपकाकर कानमें रखते हैं।

प्याजमें जो कृमिनाशक गुण होनेका लोगोंका पुराना खयाल है उसकी परीक्षा पिछले दिनों इटलीके दो प्रमुख डाक्टरोंने की थी। उन्होंने कुछ चूहोंमें यक्ष्माके कृमि टीकेद्वारा पहुँचाये और फिर प्रति तीसों दिन प्याजके रसके इंजेक्शन देते रहे। फल यह हुआ कि उन चूहोंमें यक्ष्माके कृमि बढ़ न सके।

प्याजके इन औषध-गुणों और उसके रुचिकर स्वादकी भले ही उपेक्षा की जाय, पर संतुलित भोजनका वह और उस जातिकी अन्य भाजियां एक आवश्यक अंग हैं। इनका सबको व्यवहार करना चाहिए। उन्हें बच्चोंको खिलाना न भूलना चाहिए। सुकोमल प्याज उन्हें सप्ताहमें दो-तीन बार कच्चा ही खानेको दिया जाय। पक जानेपर उन्हें बच्चोंको भूनकर या उबालकर देना चाहिए। तलनेपर प्याज दुष्पाच्य हो जाता है। इस रीतिसे उसे खाना ठीक नहीं है। एक वयस्कके लिए एक दिनमें ढाई तोलेसे अधिक प्याज खानेकी जरूरत नहीं।

इन्हें कच्चा खाइए

भोजन जितना ही अपने नैसर्गिक रूपमें खाया जायेगा उतना ही जीवनदायक होगा। पकानेसे विटामिन और खनिज जैसे भोजनके अत्यधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व कुछ-न-कुछ अवश्य कम हो जाते हैं। उदाहरणके लिए अगर पातगोभी पकाकर खायी जाय तो कच्चीकी अपेक्षा उसमें विटामिन आधे रह जाते हैं। खाद्य वस्तुओंको असली रूपमें खानेके बहुतसे लाभ हैं। यही देखिए कि तरकारियोंको छीलने, काटने और फिर पकानेके लिए घंटों आगके पास बैठकर तपनेमें समय और शक्तिका कितना अपव्यय होता है। ईंधनपर जो खर्च होता है वह अलग, इसे बचाकर अन्य जरूरी चीजें खरीदी जा सकती हैं।

मगर, खाने-पीनेकी आदतें जल्दी नहीं बदली जा सकतीं और यह आशा व्यर्थ होगी कि सब लोग एकदमसे पका हुआ भोजन करना छोड़ देंगे। फिर भी इस दिशामें दो तरहसे शुरुआत की जा सकती है। पकानेके जिन तरीकोंसे भोजनके महत्त्वपूर्ण तत्त्वोंकी ज्यादा खराबी होती है, उन्हें छोड़ा जा सकता है और दैनिक भोजनमें कच्ची खायी जाने वाली तरकारियोंकी मात्रा बढ़ायी जा सकती है।

तलना हानिकर है

पकानेके हानिकर तरीकोंमें एक तलना भी है। तला हुआ भोजन मनुष्य-शरीरको कई तरहसे नुकसान करता है। स्वादिष्ट होनेके कारण बहुतसे लोग तली हुई चीजें पसंद करते हैं। स्वादिष्ट बनानेके लिए भोजनको तेज आँचमें तलना पड़ता है। जब तली हुई चीज कढ़ाईसे निकाली जाती है तो गरम तेल या घीकी तह उसपर चढ़ी रहती है। यह घी या तेलकी तह पाचनके लिए खराब है ही और तली चीजके ठंडी हो जानेपर तो यह और भी अवगुण करती है। तला हुआ भोजन पचानेमें शरीरके पाचनपर बहुत जोर पड़ता है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि तेज आँचमें पकानेसे भोजनके सब या अधिकांश पौष्टिक तत्त्व नष्ट हो जाते हैं। भोजनको धीमी आँच या भापमें

पकाना चाहिए और उसमें पानी बिल्कुल नहीं या बहुत कम डालना चाहिए ताकि पकायी जानेवाली वस्तु अपने ही रसमें सीझ जाय और उसके सब पौष्टिक तत्त्व पूरे-के-पूरे बने रहें।

गाजर और पातगोभी, चुकंदर और मूली, खीरा, ककड़ी और टमाटर, प्याज, पत्तागोभी, पालक और सलाद सभी कच्चे खाये जा सकते हैं। अमरूद और सेब, आडू और खुबानी छिलके समेत ही खाने चाहिए। कच्ची तरकारियां खानेसे एक और लाभ यह है कि इन्हें स्वभावतः ही भलीभांति चबाना पड़ता है जिससे दाँतोंकी अच्छी कसरत हो जाती है और वे मजबूत और स्वस्थ रहते हैं। अच्छी तरह चबानेसे वे जल्दी पचती भी हैं।

लेकिन एक बात जरूरी है--खानेसे पहले तरकारियोंको अच्छी तरह पानीसे धो लेना चाहिए। जब छुतही बीमारियां फैली हों तब तो इन्हें 'पोटाशियम परमेंगनेट' (लाल दवा) के घोलमें धो लेना चाहिए। कई कारणोंसे ऐसा करना आवश्यक है। बहुत-सी तरकारियां गंदी जमीन; या गंदगीके पास उपजती हैं और उनमें रोगोंके कीटाणु रहनेकी आशंका रहती है। दूसरी बात यह है कि जब तरकारियां बाजारमें बिक्रीके लिए जाती हैं तो बहुतसे लोगोंके हाथ उनमें लगते हैं और हो सकता है कि किसीके हाथके कीटाणु उनपर आ जायें। मंडीमें खुली पड़ी तरकारियों और फलोंपर मक्खियां भी बैठती हैं और उनपर कीटाणु और गंदगी छोड़ जाती हैं। इसलिए, तरकारियों और फलोंको खानेसे पहले धो लेना बहुत जरूरी है।

अध्याय ३७

घास दवा है

पत्रोंमें विटामिनकी गोलियोंके बड़े-बड़े विज्ञापन छपते हैं, डाक्टर धड़ल्लेसे इन्हें अपने नुस्खोंमें लिखते हैं और जनता अपनी गाढ़ी कमाईका रुपया इनपर फेंकती है। लोग स्वयं भी इन दवाओंसे परिचित हो गये हैं, और इस-उस विटामिनकी गोलियां खरीदकर खाते रहते हैं। यह हमारा अज्ञान है कि हम सर्वथा प्राकृतिक विटामिनोंकी ओर ध्यान नहीं देते, वरन उन्हें पैरोंसे रौंदते रहते हैं, जबकि वे विटामिन दूकानोंमें बिकनेवाले विटामिनोंसे अधिक लाभकर होते हैं। मेरा मतलब घाससे है, जिसमें कुदरतने मुक्तहस्त होकर विटामिन भरे हैं।

कई वर्ष हुए, मैंने किसी विदेशी पत्रिकामें पढ़ा था कि अन्वेषणद्वारा यह जाना गया है कि घासमें अनेक रक्षक तत्त्व होते हैं, जैसे कैलशियम (चूना), थियामिन, विटामिन सी और बी। यदि लोग यह जान लें तो जो लोग पैसेके अभावमें विटामिन नहीं खरीद सकते और विटामिनोंके अभावसे पैदा हुआ अपना रोग अच्छा नहीं कर सकते, वे आसानीसे रोगमुक्त हो सकेंगे। पैसेवाले भी चाहें तो उन्हें विटामिनोंके पीछे पैसा बर्बाद करनेकी जरूरत नहीं है, वे अपने विटामिन किसी भी खेत या बागसे पा सकते हैं। पर यह बहुमूल्य सूचना फैले कैसे? क्योंकि विटामिनकी गोलियों और टिकियोंकी बिक्रीमें तो अनेक पैसेवालों--जैसे विटामिन बनानेवालों, उनकी पैकिंग बनानेवालों, शीशी बनानेवालों, जहाजदारों आदि अनेक पूँजीपतियोंका हाथ है, वे अपने लाभपर कभी आँच न आने देंगे और पत्रोंको इस सूचनाके प्रचारसे जरूर विरत करेंगे। मैंने देखा कि घासमें विटामिन होनेका प्रचार आगे नहीं बढ़ा, बल्कि एक पत्रमें उस सूचना का मजाक जरूर पढ़ा कि कुछ बिगड़े दिमाग लोग घासमें विटामिन होनेकी बात बताते हैं। पर, मनुष्य घास खायगा कैसे, वह पशु तो नहीं बन जायगा। यद्यपि ये मजाक उड़ानेवाले भी चोकर, पालक, साग, पत्तागोभी जैसी चीजोंमें विटामिन होनेकी बात स्वीकार करते हैं और इनके इस्तेमाल किये जानेपर जोर देते हैं। जिन्होंने इन खाद्योंका कभी उपयोग नहीं किया उनके लिए तो घास और

इन खाद्योंका खाना समान रूपसे भयावह है।

ईश्वरको धन्यवाद है कि घासपर किसीका इजारा नहीं है। इसे कोई भी मुफ्त ही या बहुत थोड़ी कीमतपर पा सकता है। मनुष्यकी स्वार्थपरता देखिए कि अपने लाभके लिए उसने इस सस्ती, क्रांतिकारी, गरीबोंके आँसू पोंछनेवाली विटामिनसे भरी घासके गुण लोगोंपर प्रकट तक न होने दिये और बेचारी घास जहाँ-की-तहाँ रह गयी।

"यदि मेरी स्त्री बीमार न पड़ी होती तो मैं भी घासमें विटामिन होनेकी सत्यताकी प्रतीति न कर पाता। वह महीनोंसे बीमार चली आ रही थी, दुबली हो गयी थी, उसे सिर-दर्द और कब्ज रहता था, हमेशा कमजोरी और रह-रहकर बेहोशीका अनुभव करती। पेट भी उसका बराबर खराब रहता। मैं उसे डाक्टरके पास ले गया। उसने हाल सुना, कुछ जाँचकी और बताया कि इनके शरीरमें विटामिनोंकी कमी है और विटामिनवाली दवाओंका एक लंबा नुस्खा लिख दिया।"

"उस वक्त मैं बेकार था। आयका कोई जरिया नहीं था। अगर मैं उस नुस्खेकी दवाएं अपनी पत्नीको देने लगता तो शीघ्र ही मेरी बचाई हुई थोड़ी-सी पूँजी खत्म हो जाती और हम दोनों ही भूखों मरने लगते। इस समय मुझे घासमें विटामिन होनेकी बात याद आयी और उसकी चर्चा मैंने अपनी पत्नीसे की। वह इस बातपर राजी हुई कि घासको आजमा कर देखा जाय। हमने यह प्रयोग शुरू किया। मैं एक बागसे अच्छी हरी-हरी दूब उखाड़ लाया। हमने उसकी पत्तियां चुन लीं और उन्हें अच्छी तरह धोकर और काटकर टमाटर और प्याजके साथ मिलाकर खाने लगे। हमें यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि दूब बेस्वाद लगनेके बजाय स्वादु लग रही है और उसके खानेमें किसी तरहकी दिक्कत नहीं है।"

"हमने घासके कई-कई प्रयोग शुरू किये। हमने उसे दाल और तरकारियोंमें भी मिलाना शुरू किया। हम जिस किसी चीजमें दूब मिला देते वह हमें अधिक स्वादु लगती। कुछ अच्छी घास हमनें कपड़ेपर रखकर सुखा ली और उसे कूटकर बोतलोंमें रख दिया। यह सफूफ हम तरह-तरहसे इस्तेमाल करते। चटनीकी तरह बनाकर खाते, आटेमें डालकर रोटी बनाते और अनेक तरहसे इसका प्रयोग करते। हमारा तो ख्याल है कि कोई भी ऐसा

खाद्य नहीं है जिसमें घास न मिलायी जा सके। और उसका स्वाद और गुण न बढ़ाया जा सके।"

"इस तरह तीन चार सप्ताह तक घासका व्यवहार करते रहनेके बाद मेरी स्त्रीके स्वास्थ्यमें उन्नति होनी आरंभ हुई। उसके पेटका दर्द और कब्ज तो करीब-करीब शुरूमें ही चला गया था। उसका सिरदर्द, उसे एक सपना-सा लगने लगा और धीरे-धीरे उसमें वह स्फूर्ति आयी जो जीवनमें पहले उसे कभी प्रतीत नहीं हुई थी। मुझे अपना स्वास्थ्य भी निश्चित रूपसे उन्नत प्रतीत हुआ। मुझे अपनेमें अधिक जीवन भरता हुआ दिखाई देने लगा। अब मुझपर, थकान पहलेकी तरह जल्दी सवारी नहीं कस पाती। अब हम लोग घासका बराबर व्यवहार करते हैं। हमें लगता है कि यह चीज तो हमें बहुत पहले शुरू करनी चाहिए थी।"

"हमारा विश्वास हो गया है कि विटामिनके लिए दवाएं खरीदनेकी कतई जरूरत नहीं है। हमारे पूर्वजोंने कभी विटामिनवाली दवाओंका व्यवहार नहीं किया और उनका स्वास्थ्य निश्चित रूपसे आजके जमानेके लोगोंसे अच्छा था। वे या तो अपने उपजाये हुए खाद्योंका व्यवहार करते थे या अपने पड़ोसमें पैदा हुओंका। उस समय न आजकी तरह खाद्य इकट्ठे करने एवं उनके वितरणका प्रबंध था, न व्यापारी अपने लाभके लिए उनसे विटामिन निकालते थे।"

जबतक मनुष्य खाद्योंमें भरे विटामिनोंका उपयोग करना न सीख लेगा विटामिनके व्यापारी उसकी जेब कतरते रहेंगे और वह उस ऊँचे स्वास्थ्यका भी अधिकारी न होगा जो कुदरतने उसके लिए निश्चित किया है।

क्या आप फल छीलकर खाते हैं ?

आप जानते हैं कि छिलका क्या है ? छिलका फलके गूदेके लिए प्रकृतिद्वारा प्रदत्त एक रक्षात्मक कवच--आवरण है जो वर्षा, गर्मी और ठंढकके तीव्र आघातोंसे उसकी रक्षा करता है और अनेक प्रकारके दृश्य और अदृश्य कृमियोंद्वारा नष्ट किये जानेसे उसे बचाता है। यदि छिलका न हो तो वायुके दबावके कारण फलका गूदा टुकड़े-टुकड़े होकर गिर जाय और कृमि उसे खा-खाकर नष्ट कर दें। फलका गूदा वृक्षके सारको पूर्णता और शीघ्रताके साथ अपनेमें एकत्रित कर लेता है। गूदा छिलकेकी अपेक्षा बहुत कोमल होता है। अपने वृद्धि-क्रमको निरंतर और निश्चित रूपसे जारी रखनेके लिए उसे एक कठोर बाह्य आवरणकी आवश्यकता होती है और गूदा अपनी रक्षाके लिए एक कठोर तथा टिकाऊ जातिके पदार्थका जिसे कि वृक्ष उत्पन्न कर सकता है--ग्रहणकर अपनी ऊपरी सतहपर ले आता है। यह कठोर पदार्थ वृक्ष उसी भूमिसे प्राप्त करता है जिसमें वह उत्पन्न होता है। वृक्ष पृथ्वीमे घुली धातुओंका शोषण कर सकनेमें समर्थ है और एक विशेषज्ञ, फलका छिलका देखकर उस भूमिके बारेमें, जिस पर उस फलका वृक्ष उत्पन्न हुआ हो, बहुत-सी बातें बता सकता है।

बीजसहित फलको जिसमें घुलनशील धातुएं एकत्रित रहती हैं--छिलकेके रूपमें एक रक्षात्मक आवरण देनेकी प्रकृतिकी यह एक रीति है।

इस संबंधमें प्रकृतिकी नीति फल-फूलों, पशु-पक्षियों और मनुष्यके लिए भी, एक ही है।

कीमती और सुंदर सलोम चर्म उन्हीं पशुओंको प्राप्त होता है जिन्हें अच्छा पौष्टिक भोजन मिलता है। घोड़ेकी चमकती हुई और चिकनी त्वचा कह देती है कि उसे कैसा भोजन दिया जाता है। सुंदर कुत्ते अपने स्वामीद्वारा उसके भोजन-पानमें रखी गयी सावधानीका प्रदर्शन करते हैं। इन सबमें श्रेष्ठ मनुष्य अपनी स्निग्ध निर्लोम, सुंदर त्वचाद्वारा इस बातको प्रकट करता है कि उसे अपने भोजनमें संपूर्ण पोषक तत्त्व तथा धातुएं यथेष्ट मात्रामें प्राप्त होती हैं या नहीं।

"मनुष्यका सारा भोजन दूसरे दर्जेका है।"

सारे पेड़-पौधे अपनी जड़ें धरतीके अंदर पहुँचाकर, अपना भोजन सीधे धरतीसे प्राप्त करते हैं। यह पहले दर्जेका एवं श्रेष्ठ भोजन है। मनुष्य धरतीसे नहीं, पेड़-पौधोंसे अपना भोजन प्राप्त करता है। इसलिए उसका भोजन दूसरे दर्जेका कहा गया है। जो मनुष्य मांस खाते हैं वे तीसरे दर्जेका यानी सबसे निम्न श्रेणीका भोजन करते हैं।

एक मनुष्यके जिसकी त्वचा रूखी-सूखी, कुरूप और रोग-संक्रमणसे अपनी रक्षा करनेमें असमर्थ है, भोजनका अवलोकन करनेपर आप देखेंगे कि या तो उसके भोजनमें ऐसे खाद्य पदार्थ हैं जो कमजोर और धातुओंसे रहित धरतीमे पैदा हुए हैं अथवा उसके भोजनमें वे खाद्य नहीं जिनमें प्राणी मात्रको जीवित, पुष्ट और स्वस्थ रखनेवाले धातु क्षार रहते हैं।

सबके लिए छिलकेकी क्या उपयोगिता है, इसपर विचार कीजिए--अच्छी भूमिमें उत्पन्न पुष्ट छिलकेवाला सेब बिना किसी विघ्न-बाधाके सफलतापूर्वक पूर्णताको प्राप्त होता है। ऐसे सेबकी त्वचापर किसी पक्षीके चोंचके प्रहार-द्वारा उत्पन्न घाव इतनी जल्दी भरता है कि हानि पहुँचानेवाला कृमि इस दुर्घटनाका कोई लाभ नहीं उठा पाते। सेबकी त्वचामें एक प्राकृतिक चिकनाई होती है जिससे सूर्यतापसे झुलसने और फट जानेसे उसकी रक्षा होती है। सेबके छिलकेकी कठोरता और स्निग्धता एक दूसरेसे संबंधित हैं। और अच्छा बीज भी ऐसे ही सेबमेंसे प्राप्त होता है।

अच्छी धरतीका प्रभाव सभी फल व तरकारियोंपर इसी प्रकार होता है। जो तथ्य सेबके बारेमें कहा गया है सभी फल तरकारियों और अनाजोंके संबंधमें समान महत्त्वके साथ लागू होता है। अच्छी जातिकी तरकारियां व फलोंके पौधे रासायनिक खराब और कम खादवाली जमीनमें बोये जाकर बहुत कम पैदा होते हैं और कृमियों तथा जन्तुओंद्वारा आसानीसे नष्ट कर दिये जाते हैं। ऐसे पौधोंमें उत्पादनकी शक्ति नहीं रह जाती और उनके बीज शीघ्र नष्ट हो जाते हैं। इसी प्रकार घुने हुए गेहुँओंमें बहुत थोड़ी उत्पादक शक्ति होती है, लेकिन घुने हुए गेहुँओंमेंसे कुछ गेहूँ जो बोते समय अच्छी धरतीमें पड़ जाते हैं अच्छी तरह उत्पन्न होते हैं और खूब बढ़ते हैं।

फल-तरकारियों और अनाजोंकी तरह मनुष्यमें भी सप्राण एवं

धातुक्षार युक्त भोजनके अभावमें उत्पादन शक्तिकी न्यूनता अथवा अभाव पैदा हो जाता है । सन्तानोत्पत्तिके लिए ये अयोग्य व्यक्ति भी सप्राण एवं धातुक्षार पूर्ण भोजन हरी शाक-सब्जियां और ताजे मौसमी फलोंका उपयोग कर उत्पादन शक्ति प्राप्त करनेमें समर्थ हो सकते हैं ।

भोजनमें क्षारोंकी कमीका प्रभाव प्राणियोंकी केवल बाहरी त्वचापर ही नहीं; किंतु शरीरके भीतर पायी जानेवाली कोमल सूक्ष्म झिल्लियोंपर भी पड़ता है। आवश्यक क्षार प्राप्त न होनेके कारण आंतोंके भीतरकी कोमल झिल्लियां भी मृतप्राय होकर पाचन क्रियामें असमर्थ हो जाती हैं । और, पुराने आँवसे पीड़ित आंतोंकी तरह, इस तरहकी कमजोर आंतें एकाएक स्वास्थ्यप्रद हरी तरकारियों, ताजे फलों एवं पूर्ण अनाजोंको भी पचानेमें असमर्थ होती हैं; किंतु इन सप्राण खाद्योंके निरंतर प्रयोगसे उनमें शक्ति आती हैं और पाचन क्रिया धीरे-धीरे ठीक हो जाती है ।

इन साधारण तथ्योंको देखकर कोई भी समझ सकता है कि भोजन अपनी प्राकृतिक अवस्थामें ही सबसे अच्छा खाद्य है । अब आपको मैदा, जिसमेंसे छिलका यानी चोकर निकाल दिया गया है, खाना कभी अच्छा नहीं लगेगा । फलोंके छिलके निकालकर फेंकते समय आपको विचार करना होगा कि आप कोई आवश्यक तत्त्व तो निकाल कर नहीं फेंक रहे हैं ? और यदि आपको शारीरिक पूर्णता प्राप्त करना तथा अपना शरीर, सुंदर सुदृढ़, और स्वस्थ बनाना है तो हरी शाक-तरकारियां, ताजे फल और पूर्ण अनाज आपके भोजनमें अवश्य स्थान प्राप्त करेंगे और जहां तक बनेगा आप उनका छिलके सहित उपयोग करेंगे ।

अध्याय ३९

इन खाद्योंको न फेंकें

हाँ, आप इन्हें फेंक देते हैं, आप समझते हैं ये खाद्य हैं ही नहीं। पर आप इन्हें भोजनमें जोड़कर, खासतौरसे इस भोजनकी कमीके जमानेमें, अपने भोजनको अधिक पोषक और स्वादिष्ट बनानेके साथ-साथ अपना बहुत-सा धन बचा सकते हैं। ये हैं फलोंके बीज और खरबूजे, खीरे, ककड़ीके बीज और सूर्यमुखी फूलके बीज। इन बीजोंमें ऊँचे प्रकारकी बढ़िया घुलनशील चिकनाई, प्रोटीन, प्राकृतिक लवण होते हैं। और इनमें जो गंध और स्वाद होता है उसका तो कहना ही क्या है ? इन खाद्योंसे अनेक तरहके पेय बनते हैं और कई तरहकी मिठाइयां बनायी जा सकती हैं। ये बीज फलोंका सबसे अधिक पुष्टिकारक अंश है जो शरीरमें पहुँचकर शरीरके मज्जा-मांसमें वृद्धि करते हैं। इसकी चिकनाईमें फासफोरस मिला होता है जो स्नायुओंको शक्ति प्रदान करता है।

सूर्यमुखीके फूलका बीज इस दृष्टिसे बहुत मूल्यवान है। इस फूलसे आप सभी परिचित हैं। यह फूल जिसमें बीज होते हैं, पीले रंगका गोलाकार होता है और सूर्योदयसे सूर्यास्ततक सूर्यकी ओर अपना मुँह किये रहता है। स्पेनकी भाषामें इस फूलका नाम "मीरासल" हैया "टोनेसिल" जिसका अर्थहोता है सूर्य की ओर देखनेवाला या सूर्यको खोजनेवाला, जो इस फूलके सूर्यकी ओर अपना मुंह करते रहनेके कारण बहुत उपयुक्त जान पड़ता है। इसके सूर्यमुखी नाममें भी संभवतः यही भाव निहित हैं। स्पेनमें इस फूलके तथा खरबूजे, तरबूजे, खीरे, ककड़ी आदिके बीज फलके गूदेसे अलग कर लिये जाते हैं और धोकर सुखा लिये जाते हैं। लोग इन बीजोंको दाँतोंसे फोड़कर छिलके अलग करके खाते हैं। बीजोंको खानेकी इस रीतिमें समय बहुत लगता है। यदि कोई इन्हींसे पेट भरना चाहे तो घंटों लग जायँगे। इन बीजोंको तोड़ने और उनकी गिरी अलग करनेकी छोटी-छोटी मशीनें भी आती हैं, पर इनकी माँग कम होनेके कारण हर जगह नहीं मिलतीं।

बीजोंका झोल और शर्बत

मुझे जब इन बीजोंका पुष्टिकारक गुण ज्ञात हुआ तो मैं इन बीजोंसे छिलके अलग करनेकी सरल विधि खोजनमें लगा। मैंने बीजोंको आटा पीसनेवाली चक्कीमें पीसा और फिर पानीमें उबालकर, छानकर पिया। सिल बट्टेसे भी यही काम लिया जा सकता है। इस प्रकार बने सूप या शर्बतमें इच्छानुसार शहद या गुड़ मिलाया जा सकता है। लोग इस विधिसे बादाम और पिस्तेकी ठंडाई बनाया करते हैं पर इन बीजोंसे बनी ठंडाई इन मेवोंकी ठंडाईसे किसी प्रकार कम नहीं हैं। मेवोंकी बनी ठंडाई बच्चोंके लिए भारी पड़ती है पर इन बीजोंकी बनी ठंडाई तो उन्हें दूधकी तरह या दूधकी जगह नित्य दी जा सकती है। निश्चय ही यह ठंडाई उनके लिए दूधका काम करेगी।

तरबूजके बीज सिलपर ठीक तरह नहीं पिसते; अतः उन्हें चक्कीमें पीसना या समय हो तो उन्हें चिमटीसे तोड़कर गूदा निकालना ज्यादा आसान होता है।

विशेष सूचना

यदि ताजा और तुरंत इस्तेमाल किया जाय तो खरबूजेसे बीजके साथ लगे गूदेको फेंकनेकी जरूरत नहीं है। गूदेके साथ ही बीजोंको पीसना चाहिए और सबको छानकर गुड़के साथ इस्तेमाल करना चाहिए। संभवतः मेरी यह बात अमीरोंको अच्छी न लगे, पर जिनके लिए पेट भरना एक समस्या है, आशा है उन लोगोंको मेरी सिफारिश बुरी नहीं लगेगी। पर मैं अमीरोंको भी यह बता देना चाहता हूँ कि बीजके साथ लगे गूदेमें खरबूजेके उस गूदेकी तुलनामें जो वे खाते हैं पोषक तत्त्व समाहृत रूपमें एवं प्रचुरमात्रामें भरे होते हैं। फलकी जातिको बचानेके लिए कुदरत बीजोंको परिपुष्ट बनाती है। यह कार्य वह उनके निकट बढ़िया भोजन इकट्ठा करके करती है। फलके बाहरी छिलकेके निकटका गूदा तो फलके बीजके पास इकट्ठे भोजनका संरक्षक मात्र होता है।

खैर, आप गूदेको लें या न लें, इन बीजोंसे बने शरबतका व्यवहार शुरू करें। छठें-छमाहे नहीं, इसका इस्तेमाल नित्य करना चाहिए। इस शरबतमें चाहें तो थोड़ा दूध डालकर इसे अधिक स्वादिष्ट बना सकते हैं।

फल-तरकारियोंका रस भी इनमें मिलाया जा सकता है । यह शरबत कमजोर रोगियोंके लिए और पाचनशक्तिकी खराबीवाले रोगियोंके लिए तथा जो अपना वजन बढ़ाना चाहते हैं उनके लिए बहुत लाभकर है । इन बीजोंको यदि आप स्वयं इकट्ठा कर लें तो आपको ये मुफ्त मिल जाते हैं । बाजारसे खरीदें तो ये मेवोंके मुकाबलेमें बहुत सस्ते पड़ते हैं। सूर्यमुखीके बीज कुछ महँगे मिल सकते हैं पर ज्यों-ज्यों इनकी माँग बढ़ती जायेगी लोग इसकी उपज बढ़ायेंगे, तब ये निश्चित रूपसे सस्ते हो जायँगे ।

अन्य बीज

सभी फलोंके बीज खाने लायक नहीं होते । कुछ फलोंके बीज बहुत कड़ुवे होते हैं और निश्चित रूपसे हानिकारक होते हैं । संतरे, मुसम्मी, नींबू, खिरनी, पपीता, अंगूर, शरीफा तथा और भी अनेक फलोंके बीज खाने लायक नहीं है । बीज अथवा कोई भी खाद्य जो स्वादमें अच्छा नहीं है प्राकृतिक खाद्योंकी गणनामें नहीं आ सकता।

सूर्यमुखीके गुण

सूर्यमुखी अन्य पौधोंकी अपेक्षा जमीनसे बहुत अधिक प्राकृतिक लवण इकट्ठा करता है । जिस खेतमें सूर्यमुखी बोया जाता है उस खेतमें दूसरे वर्ष जो अनाज बोया जाता है वह बहुत कम होता है, क्योंकि सूर्यमुखी जमीनसे इतना सामान खींच लेता है कि जमीन एक तरहसे 'निसठ' (निःसत्व) हो जाती है । नीचे हम एक तालिका देते हैं जिससे गेहूँ और सूर्यमुखीके बीजकी तुलना हो जायगी । यह तालिका ऐसे सूर्यमुखीके बीजों और गेहूंके आधारपर बनायी गयी है जिनसे जलका अंश पूर्णतः निकाल दिया गया है।

खाद्योंके नाम	पोटैशियम	सोडियम	कैल्शियम	मैग्नीशियम	आइरन	फासफोरस	सल्फर	सीलिकन	क्लोरिन
सूर्यमुखीके बीज	६.१२	२.८०	२.८७	४.६५	०.६०	१३.३८	५.५४	०.८७	०.९०
चोकरसमेत आटा	७.२०	०.५०	०.७५	२.८०	०.३०	१०.९०	०.०९	०.०९	०.०७
मैदा	१.८३	०.०८	०.४३	०.४४	०.०३	२.८०			

ऊपरकी तालिकासे ज्ञात हुआ है कि चोकरसमेत गेहूँके आटेकी अपेक्षा सूर्यमुखीके फूलमें कैलशियम (चूना), मैगनीशियम, आइरन (लोहा) और सिलिकन कई गुना अधिक है। मैदा तो इस दृष्टिसे बहुत ही हेय है। सिलिकनका आधिक्य सूर्यमुखीकी एक मुख्य विशेषता है। इतना सिलिकन कम ही खाद्योंमें मिलता है। सिलिकनका हमारे बाल, नाखून, स्नायु, वीर्य आदिके बनानेमें बड़ा भाग है। क्लोरिनके साथ मिलकर यह हमारे दाँतोंमें चमक पैदा करता है। इस प्राकृतिक लवणके अभावके कारण छूतके रोग लगते हैं, बाल गिरने लगते हैं और दाँत कमजोर पड़ जाते हैं।

सूर्यमुखीमें घावके रक्तस्राव या किसी प्रकारके रक्तस्रावको रोकनेकी विशेष शक्ति है। इस दृष्टिसे स्त्रियोंके मासिकके समय होनेवाले अधिक रक्तस्रावमें, घावोंको भरनेमें, नासा फूटनेपर, मसूड़ोंसे खून निकलते रहनेकी बीमारीमें यह विशेष लाभकर हो सकता है। दाँतोंको मजबूत बनानेके लिए भी इसका इस्तेमाल किया जा सकता है।

इन बीजोंका एवं अन्य बीजोंका व्यवहार मैं कुछ समयसे कर रहा हूँ। ये मुझे स्वास्थ्यके लिए बहुत लाभकर प्रतीत हो रहे हैं। मैं चाहता हूँ कि आप भी इनका व्यवहार करें। ये मुफ्तमें मिलनेवाली चीजें हैं, इन्हें न फेंकें।

अध्याय ४०

श्रेष्ठ भोजन-- मेवे

मेवोंपर भारतमें हमेशासे श्रद्धा प्रकट की गयी है। फल-मेवोंको देवताओंका भोजन समझा गया है। संस्कृत साहित्यमें अतिथि और राजाकी अभ्यर्थना फल-मेवोंसे करनेकी बात जगह-जगह मिलती है।

सचमुच मेवों-जैसा स्वादिष्ट, तृप्तिकर और स्वास्थ्यकर भोजन मिलना कठिन है और आज जब दिन-दिन दूधकी कमी होती जा रही है शाकाहारीको केवल मेवे ही स्वस्थ रखनेमें समर्थ हैं। पर मेवोंके भोजनपर कोई ध्यान नहीं दिया जाता। इन्हें महँगा और बड़े आदमियोंका भोजन कहा जाता है। मेवे दूधकी अपेक्षा आठ-नौ गुने अधिक पुष्टिकारक होते हैं। यदि मूँगफलीको भी मेवा मान लिया जाय तब यह दूधकी अपेक्षा कहीं सस्ती पड़ती है। पर, मेवोंका उपयोग हमें नहीं मालूम और हम उन्हें दुष्पाच्य भी समझते हैं, इसमें दोष मेवोंका नहीं, बल्कि हमारी समझका है। हम उन्हें भोजन समझकर कभी ग्रहण नहीं करते, या तो नाश्तेमें उनका उपयोग करते हैं या यों ही जब-तब खा लेते हैं। जो चीज दूधसे नौ गुनी पुष्टिकारक हो वह क्या यों ही खा लेनेकी चीज हो सकती है? उसके पचानेमें भी तो दूधकी अपेक्षा नौ गुनी ताकत लगती है। अतः मेवोंको भोजन समझकर ही ग्रहण करना चाहिए। हाँ, उनमें जल नहीं के बराबर होनेके कारण उन्हें फलों या तरकारियोंके साथ खाना चाहिए। यदि शाम या दोपहरके भोजनमें टमाटंर, गाजर, पातगोभी आदि पाव-डेढ़-पाव कच्ची तरकारियां हों और साथमें मेवे, तो यह आदर्श भोजन कहा जा सकता है। वह भोजन शरीरको सशक्त बनानेके साथ-साथ रोगोंका भी निवारण करेगा और हमारे भोजनमें दूधकी कमीके कारण होनेवाले रोगोंसे बचा लेगा।

इस भाँति उपयोगमें लानेपर मेवे जाड़ेमें ही खानेकी चीज नहीं रह जाते, उनका उपयोग हर मौसममें किया जा सकता है।

अन्य मेवे हमारे यहाँ कम मिलते हैं पर मूँगफलीकी कमी नहीं। आज मूँगफलीका जमाया तेल घीके नामपर बेचनेके लिए मूँगफलीका सत्यानाश किया जा रहा है। उससे तेल ले लिया जाता है और उसकी बाकी चीजें व्यर्थ

चली जाती हैं। मूँगफलीमें केवल तेल ही नहीं है, उसमें शरीरको बढ़ानेमें मदद करनेवाली और शरीरकी छीजनकी पूर्ति करनेवाली चीज प्रोटीन उतनी मात्रामें होती है जितनी न दूधमें होती है और न दालोंमें, जो कि शाकाहारीके लिए प्रोटीनका विशेष साधन है।

अधिक विस्तारमें न जाकर यहाँ मेवोंके लाभ संक्षेपमें दिये जा रहे हैं:--

१--मेवोंमें प्रोटीन विशेष रूपसे होती है, खास तौरसे बादाम और मूंगफलीमें।

२--मेवोंमें चिकनाई भी खूब होती है और आज जबकि घी मिलना दुर्लभ हो रहा है भोजनमें इसकी पूर्ति मेवोंद्वारा हो सकती है।

३--मेवोंमें कैलशियम (चूना) बहुत होता है, और लोहा भी। ये दोनों प्राकृतिक लवण स्वास्थ्यके लिए बहुत उपयोगी हैं।

४--विटामिन बी, जिसकी कमीकी वजहसे अनेक रोग होते हैं, मेवोंमें यथेष्ट मात्रामें हैं।

५--मेवोंको उनके स्वाभाविक रूप में, बिना किसी मिलावटके प्राप्त किया जा सकता है, और उनका, उनकी स्वाभाविक दशामें उपयोग किया जा सकता है। उनके द्वारा किसी रोगके लगनेकी संभावना नहीं रहती।

६--मेवोंमें प्राकृतिक लवण और ऐसे प्राकृतिक लवण जिनकी हमें अति अल्प मात्रामें जरूरत रहती है, पर जो कम ही खाद्योंमें मिलते हैं इनमें उचित मात्रामें रहते हैं। संभवतः इसलिए कि वे पेड़ोंपर फलते हैं और पेड़ अपना भोजन पृथ्वीद्वारा प्राप्त करते हैं।

७--मेवे कच्चे खाये जा सकते हैं, अतः उनका सूर्य तत्त्व नष्ट न होकर हमें प्राप्त हो जाता है।

८--उनका स्वाद एवं गंध रुचिकर होता है।

९--मेवोंको पीसकर, चबाकर, अकेले अन्य चीजोंमें मिलाकर खाया जा सकता है अतः उनसे कभी तबीयत नहीं उचटती।

१०--मेवोंको रखना और उनका एक जगहसे दूसरी जगह ताजी हालतमें भेजना आसान है।

११--मेवोंके पेड़ उगानेके लिए साधारणतया अच्छी जमीनकी जरूरत नहीं पड़ती; अतः इनकी पैदावार बढ़ानेमें अन्नकी खेतीको नुकसान पहुँचनेका डर नहीं है।

अध्याय ४१

मूँगफली--भोजन और दवा

अमरीकाके डाक्टर श्री एच० ब्रूस कमरेमें पड़े हुए थे। उनके घुटनेसे खून बह रहा था। लाख कोशिश करनेपर भी खून बंद नहीं हुआ था। उन्हें भय था कि यदि इसी तरह खूनका बहना जारी रहा तो थोड़ी ही देरमें उनकी मृत्यु हो जायगी।

रात धीरे-धीरे उतर रही थी। उसके साथ ही डा० ब्रूसके मनमें भी अंधकार बढ़ रहा था। वे शून्यकी तरफ देख रहे थे। सामने मेजपर कुछ भुनी हुई मूंगफली पड़ी हुई थी। उन्होंने उसमेंसे मुट्ठीभर मूँगफलियां उठायीं और उन्हें छील-छीलकर चबाना शुरू कर दिया। मूंगफली खाते-ही-खाते वे अपनी कुर्सीपर ही सो गये। सुबह जब उनकी नींद खुली तो उन्होंने देखा कि उनके घुटनेसे खून बहना बंद हो गया है। एक ही रातमे इतना बड़ा करिश्मा! डाक्टर ब्रूस आश्चर्यचकित थे। उन्होंने मूँगफलियोंके सिवा कुछ नहीं खाया था। तो क्या यह मूंगफलीका ही प्रभाव था।

डा० ब्रूस वैज्ञानिक थे। उन्हेंने बहुत जल्दी जान लिया कि निरंतर बहते हुए खूनको रोकनेंमें मूँगफलीने ही उनकी सहायता की है। अब तो उन्होंने उस पर विभिन्न प्रयोग आरंभ किये।

एक रोगीके गुर्दोंमें दस दिनसे दर्द था। पेशाबके साथ बराबर खून आता था। डाक्टर उसके शरीरमें बराबर रक्त चढ़ाते थे किंतु खूनका आना बंद नहीं हो रहा था। डाक्टर ब्रूसने खून चढ़ाना बंद करवा दिया और रोगीको हर छह घंटेके बाद पाँच ग्राम मूँगफलीका आटा खिलाया। अगले दिन पेशाबमें खून नहीं आया; तीन दिन बाद वह रोगी बिलकुल स्वस्थ हो गया।

मूँगफलीका प्रयोग केवल बहते हुए खूनको रोकनेमें ही सहायक नहीं होता; बल्कि उसके द्वारा अन्य अनेक रोगोंको भी अच्छा किया जा सकता है। शारीरिक शक्तिको बढ़ानेमें तो मूँगफली बेजोड़ है। क्योंकि भोजनके अनेक तत्त्व मूँगफलीमें बहुतायतसे पाये जाते हैं। दो मुट्ठी मूँगफलीमें १०७ मिलीग्राम कैलशियम, १०७ मिलीग्राम लोहा, ४२ मिलीग्राम थियामिन,

१९ मिलीग्राम रिबोफ्लोबिन और २८. ३ मिलीग्राम नियासिन रहता है। फासफोरस भी उसमें काफी मिलता है। ऊपरके लाल छिलकेमें रिबोफ्लेबिन अधिक रहता है।

मूँगफली प्रोटीन-प्रधान खाद्य है और प्रोटीनसे शरीर बनता है। उसमें माँसकी अपेक्षा अधिक प्रोटीन मिलता है और वह माँससे अच्छा भी होता है। साथ ही वह सस्ता सौदा भी है।

मूँगफलीका तेल घीके स्थानपर काममें लाया जा सकता है; क्योंकि उसमें घीके बराबर ही चिकनाई विद्यमान है। फेटी ऐसिडकी कमीसे होनेवाले रोगों तथा उकवत आदि रोगोंमें भी यह तेल लाभदायक है। दुबले-पतलोंको मोटा बनानेके लिए मूँगफलीका तेल बड़ा उपयोगी है।

नाइजीरियाकी सरकारने अपने देशवासियोंके भोजनमें मूँगफलीको स्थान देकर देश की खाद्य समस्या को बहुत कुछ सुलझा लिया है। वहाँ सरकारकी ओरसे लोगोंको मूंगफली खानेके लिए खूब उत्साहित किया जाता है। अब धीरे-धीरे वहाँके लोग मूँगफलीके शौकीन बनते जा रहे हैं।

भारतमें मूँगफलीकी पैदादार बहुत अधिक होती है। किंतु खेद है कि उसका उचित उपयोग नहीं किया जाता। अधिकांश मूँगफलीका तेल निकालकर वनस्पति बनाकर खली पशुओंको खिला दी जाती है और खलीमें सारा प्रोटीन चला जाता है। यदि मूँगफलीका सही उपयोग किया जाय तो हमारे देशके भोजनमें प्रोटीनकी जो भारी कमी है उसकी पूर्ति सहज हीमें की जा सकती है।

हमारे यहाँ गरीबी अधिक है। गरीब प्रोटीनकी पूर्तिके लिए माँस, मछली, दूध, दही, मेवेका व्यवहार नहीं कर सकते। यदि मूँगफलीको भोजनमें स्थान दिया जाय तो वे बहुत ही सस्तेमें प्रोटीन प्राप्त कर सकते हैं।

मूँगफलीका मक्खन भी बनाया जाता है। इसे लोग रोटी या बिस्कुटपर लगाकर बड़े मजेसे खाते हैं। यह मक्खन घरपर भी बनाया जा सकता है। इसके लिए एक छोटी-सी मशीन होती है जिसमें मूँगफलीका तेल डालकर घुमानेपर मक्खन बन जाता है। इसे सलादके साथ भी खा सकते हैं।

मूँगफली पीसकर अनेक व्यंजन बनाये जा सकते हैं। सब्जियोंमें इसका पिसा हुआ चूरा डालनेसे सब्जी बहुत स्वादिष्ट बनती है और उनमें घी

डालनेकी भी आवश्यकता नहीं रहती।

नाश्ते या भोजनके रूपमें मूँगफलीका प्रयोग बड़ी सरलतासे किया जा सकता है। मैं एक ऐसे परिवारको जानता हूँ जिसका प्रत्येक सदस्य शामको भोजनके स्थान पर दो मुट्ठी मूँगफली, थोड़ा-सा गुड़ और पाव-डेढ़ पाव टमाटर या गाजर या कोई मौसमी फल खाता है और इस सस्ते भोजनके द्वारा खूब स्वस्थ रहता है।

कुछ लोगोंका विचार है कि मूँगफली गरम होती है, अतः उसे गर्मियोंमें नहीं खाना चाहिए। परंतु यह एक भ्रम है। भोजनका काम ही है शरीरको गर्मी देना। यदि मूँगफली गर्मी देती है तो वह भोजनका ही काम करती है। अतः उसकी गर्मीसे भयभीत होनेकी आवश्यकता नहीं है। आप उसे हर मौसममें बिना किसी भयके खा सकते हैं।

मूँगफलीके विषयमें लोगोंमें एक और गलत धारणा है कि मूँगफली खांसी करती है; किंतु खांसी वह तभी करती है जब लोग उसे भोजनके बाद भरे पेटपर टूंगेके तौरपर खाते हैं। यदि उसे भोजनके रूपमें खाया जाय तो वह किसी भी प्रकार हानिकारक नहीं है।

अतः मूँगफली खाइए और कम-से-कम पैसोंमें अपने भोजनको संतुलित बनाइए।

अध्याय ४२

नारियल--एक पूर्णाहार

फिलिपाइन टापूमें, जहाँ नारियल इतना अधिक पैदा होता है कि वहाँकी सारी आवश्यकताएं पूरी होनेके बाद भी बहुत अधिक परिमाणमें निर्यात किया जाता है। एक कहावत प्रचलित है जिसका अभिप्राय यह है कि "जो नारियलका पेड़ लगाता है वह अपने लिए तो पात्र, वस्त्र, भोजन, पेय, घर आदिका प्रबन्ध करती ही है, अपने वंशजोंके लिए भी एक अच्छी जायदाद छोड़ जाता है।"

जीवनमें इतना उपयोगी होनेके कारण ही इसे 'जीवन-तरु' कहा करते हैं।

गरम जगहोंके निवासी इसे कई तरहसे खानेके काममें लाया करते हैं और हर एक आदमी महीनेमें औसतन ६० नारियल खाया करता है। इससे उसे आहार और पेय दोनों सारे आवश्यक पोषक तत्त्वोंके साथ प्राप्त हो जाते हैं और प्राकृतिक रूपमें ही स्वादिष्ट होनेके कारण पाकक्रियाकी सहायता भी नहीं लेनी पड़ती।

प्राप्त होनेवाले तत्त्व

इस अद्‌भुत खाद्य पदार्थमें विटामिन बी, सी, ए तथा पोटैसियम, कैलसियम, मैगऩीसियम, लोहा, फास्फोरस, गन्धक आदि खनिज तत्त्व अच्छी मात्रामें होते हैं। इसमें उच्चकोटिका वानस्पतिक तेल भी होता है जिसमें प्रोटीन साधारण मात्रामें मौजूद रहता है। इससे शरीरको काफी चिकनाई मिल जाती है और इससे आँतोंमें जितनी स्निग्धता आती है उतनी और किसी तेलसे नहीं आती। कार्बोज साधारण मात्रामें होता है जिससे यह गरम देशोंमें, जहां अधिक गरमी पैदा करनेवाली चीजें खानेकी आवश्यकता नहीं होती, उपयुक्त आहार सिद्ध होता है और जिस स्थानका जलवायु नातिशीतोष्ण है वहाँ भी इसकी चिकनाईसे काफी उष्णता और शक्ति प्राप्त होती है।

नारियलकी एक बड़ी विशेषता यह है कि इसकी गिरीमें बहुत अधिक रेशे होते हैं जिससे कब्ज दूर होनेमें बड़ी सहायता मिलती है। प्रत्येक छोटे टुकड़ेमें तेलके बहुतसे छोटे-छोटे कण होते हैं जो आँतोंको स्निग्ध कर देते और हरएक फुजलेको संवेदनशील श्लैष्मिक कलामें, जो प्रायः तरह-तरहकी कब्ज करनेवाली चीजें खाते रहनेके कारण प्रदाहयुक्त होती है, किसी तरहका क्षोभ उत्पन्न किये बिना नीचेकी ओर खसकाते जाते हैं।

नारियलका पानी

हालके वैज्ञानिक अनुसंधानसे पता चला है कि पके हुए नारियलका पानी गुणकी दृष्टिसे करीब-करीब माताके दूधके समान होता है। इसके पानीसे बच्चोंका स्वास्थ्य अच्छा रहता और उनकी बाढ़ भी अच्छी होती है। कई तरहके दर्दोंमें ताजा रस बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ है। अगर सोनेके समय इसका रस पी लिया जाय तो इससे क्षुब्ध नाड़ी-संस्थानको आराम मिलता और गाढ़ी नींद आती है जो ताजगी लानेवाली होती है : अपने स्वास्थ्यकर गुणोंके कारण यह रस गाय और बकरीके दूधसे बढ़कर है।

प्राकृतिक खाद्य

यह स्वादिष्ट प्राकृतिक खाद्य पकनेपर अपने उसी रूपमें खाने योग्य होता है। अगर किसी और फलके साथ इसे मिलाकर खाया जाय तो भरपेट मजेमें खाया जा सकता है और आप चाहें तो इसे मिठाई, आइसक्रीम, बिस्कुट आदिके रूपमें प्रस्तुत करके भी खा सकते हैं। इससे वानस्पतिक वसा, प्रोटीन, शर्करा, विटामिन और खनिज लवण अच्छी मात्रा और अपने प्राकृतिक रूपमें ही प्राप्त होते हैं जिससे उनका बड़ी आसानीसे परिपाक हो जाता है।

इन विशेष गुणोंके ही कारण नारियल संसारमें सबसे अधिक उपजाया जाता है और कुछ लोगोंका तो यहाँतक कहना है कि भोजनके लिए नारियलपर निर्भर रहनेवालोंकी संख्या अन्य किसी भी वृक्षपर निर्भर रहनेवालोंकी अपेक्षा अधिक है।

अध्याय ४३

पेड़ लगनेवाली मिठाई--खजूर

मिठाई किसको नहीं अच्छी लगती ? यद्यपि डाक्टरों और दंतचिकित्सकोंका कहना है कि मिठाइयां स्वास्थ्यके लिए हानिकर होती हैं, क्योंकि वे धीरे-धीरे दाँतोंको कमजोर करती हैं।

अब प्रश्न उठता है कि क्या कोई और ऐसी वस्तु है जो मिठाईके समान स्वादिष्ट हो और साथ ही पौष्टिक हो और दाँतोंको भी हानि न पहुँचाती हो? खाद्यविशेषज्ञोंका उत्तर है--खजूर।

खजूर भारतमें काफी सस्ती और बहुतायतसे मिलती है। यद्यपि भारतमें यह काफी परिमाणमें पैदा होती है, लेकिन बढ़िया खजूर अरबसे ही आती है। कहा जाता है कि अरबवासी केवल खजूरों और ऊँटनीके दूधके सहारे महीनों रेगिस्तानोंमें घूम सकते हैं।

प्रतिदिनके भोजनमें प्राकृतिक खाद्य वस्तुओंका बहुत महत्त्व है; क्योंकि प्राकृतिक खाद्योंमें शरीरको पुष्ट बनानेके तत्त्व होते हैं जो स्वास्थ्य और जीवनके लिए बहुत आवश्यक हैं। इस प्रकार जो भी भोजन अपने असली रूपमें हो और साफ करने और पकानेमें जिसका प्राकृतिक तत्त्व नष्ट न हुआ हो वह मनुष्यके स्वास्थ्यके लिए लाभदायक होता है।

खजूर बहुत उत्तम प्राकृतिक भोजन है। आटा, दाल, चावल आदिके भोजनके समान ही यह भी अपनेमें पूर्ण भोजन है। किसीने इसको 'सूर्यका संगृहीत प्रकाश' भी कहा है। वृक्षोंपर पकनेके लिए इसको सूर्यकी कड़ी गरमीकी आवश्ययकता होती है। अरब देशकी कहावत है "खजूरके पेड़का सिर आगमें और पैर पानीमें होना चाहिए।" भारतमें भी खजूरका वृक्ष प्रायः रेतीली जमीनमें या रेगिस्तानमें होता है और इसकी जड़ें जमीनमें गहरी चली जाती हैं और वहाँसे पोषण-तत्त्व प्राप्त करती हैं।

खजूर बड़ों और बच्चों दोनोंके लिए बहुत लाभदायक खाद्य है क्योंकि इसमें बड़े अनुपातमें प्राकृतिक शक्कर होती है जिसको पचानेके लिए प्रयत्न करनेकी आवश्यकता नहीं है और जो शीघ्र ही शरीरमें मिल जाती है।

खजूरमें ऐसी शक्कर होती है जो शीघ्र ही पचनेके अतिरिक्त चर्बी भी नहीं बढ़ाती और इस तरह यह मिलकी चीनी और उसकी बनी मिठाइयोंके दोषोंसे मुक्त होती है।

इसके अतिरिक्त खजूरमें प्रोटीन आदि ऐसे तत्त्व भी होते हैं जो शरीरके विकासके लिए बहुत लाभदायक हैं। खजूरमें लोहा और चूना आदि खनिज तत्त्व होते हैं जो खून बढ़ाते हैं और हड्डियों और दाँतोंको पुष्ट करते हैं। इसके अतिरिक्त उसमें मैग्नीशियम, सोडियम पोटाशियम, फ़ास्फोरस आदि खनिज तत्त्व होते हैं। खजूरमें काफी परिमाणमें विटामिन 'ए', 'बी' १ 'बी' और 'बी कम्प्लेक्स' होते हैं लेकिन विटामिन 'सी' और 'डी' बहुत कम परिमाणमें पाये जाते हैं।

ये सब चीजें शरीरको हृष्ट-पुष्ट बनानेके लिए बहुत आवश्यक हैं। यदि खजूर और माँसकी तुलना की जाय तो खजूरमें खाद्य-लौह माँससे एक-तिहाई अधिक और अच्छी किस्मका होगा।

खजूरको दूधके साथ खाया जाय तो पूरा भोजन बन जाता है। पाँच सौ ग्राम खजूर और एक लीटर दूध, एक व्यक्तिके लिए एक दिनका न केवल पर्याप्त बल्कि उच्चकोटिका भोजन है।

खाद्य महत्त्वके अतिरिक्त, खजूरकी एक खूबी यह भी है कि यदि इसे नियमित रूपसे खाया जाय तो यह कब्ज भी दूर करती है। खजूर, बकरीका दूध और फल गांधीजीका प्रधान आहार था और इसके कारण उनका स्वास्थ्य बहुत उत्तम रहा।

नियमित भोजनके रूपमें खजूरको अपनानेसे पहले यह देख लेना आवश्यक है कि वह अच्छी और साफ-सुथरी हो। प्रायः बाजारमें जो खजूर बिकती है उस पर धूल और कूड़ा चढ़ा रहता है। इसलिए उसे पहले अच्छी तरह धो लेना चाहिए। आम तौरपर बाजारमें जो खजूर खुली बिकती है उसपर मक्खियां और मच्छर बैठकर रोगाणु छोड़ देते हैं, इसलिए उनसे भी सावधान रहना चाहिए।

हो सकता है, एक साथ ज्यादा खजूर खानेसे उसे पचानेमें कठिनाई हो। इसलिए सर्वोत्तम तरीका यह है कि भोजनके साथ थोड़ी मात्रामें खजूर ली जाए और खूब चबाकर खायी जाये।

अध्याय ४४

प्रो० अर्नाल्ड इहरिटकी जीवन-गाथा

प्राकृतिक चिकित्साके इतिहासमें प्रो० अर्नाल्ड इहरिटका उल्लेख अत्यंत श्रद्धापूर्वक किया जाता है। प्रयोगों एवं अनुसंधानोंद्वारा मानव-आहारके क्षेत्रमें मौलिक क्रांति करनेमें उन्हें अद्वितीय सफलता प्राप्त हुई थी। उनके जीवनका एक ही लक्ष्य था--स्वास्थ्य, रोग एवं आहारके पारस्परिक संबंधका रहस्योद्घाटन करना। उन्होंने अपने शरीरको आहार-विषयक अनुसंधानकी प्रयोगशाला बना दिया था और अपने अपेक्षाकृत अल्पकालीन जीवनमें ही एक संपूर्णतः अभिनव और मूलतः क्रांतिकारी आहार-प्रणालीका सूत्रपात करनेमें सफलता प्राप्त की।

जर्मनीके बेडन नामक स्थानको प्रो० इहरिटकी जन्मभूमि होनेका गौरव प्राप्त है। उनका जन्म २९ जुलाई, १८६६ में हुआ था। वे जबतक जीवित रहे, उपवास और सम्यक् आहारकी महत्ता प्रतिपादित करनेमें लगे रहे। थोड़े समयमें ही उन्होंने अपने विषयके आचार्यके रूपमें यथेष्ट कीर्ति अर्जित कर ली थी। ५६ वर्षकी आयुमें दुर्घटनाग्रस्त होकर यदि वे अचानक ही स्वर्गीय न हो गये होते तो पता नहीं आहार-चिकित्सा आज कितनी समृद्ध होती।

प्रो० इहरिटने अपनी जीवनी स्वयं ही लिखी है। उन्हींके शब्दोंमें :

मैं मनसे और तनसे बहुत थक चुका था और जीवन मुझे इतना भार लगने लगा था कि कई बार आत्महत्याद्वारा संकटोंसे त्राण पानेका मन होता। इसी समय मुझे प्राकृतिक चिकित्साका नाम सुनाई पड़ा। तीन बार क्नाइप सेनेटोरियममें मैंने अपनी चिकित्सा करायी, कुछ लाभ होता देख पड़ा और सबसे बड़ी बात कि जीवनके प्रति रुचि पैदा हुई। मेरे रोगके मुख्य लक्षण थे श्लेष्मा अथवा पूय एवं मूत्रमें अलबूमिन तथा वृक्कोंमें दर्द। अनुभवसे मुझे लगा कि सही भोजनमें श्लेष्मा और अलबूमिनसे युक्त पदार्थोंके लिए कोई स्थान नहीं है। इस ज्ञानने आहारके विषयपर पड़े हुए अंधकारके परदेको उठा दिया। प्राकृतिक चिकित्सासे तबतक कोई फायदा नहीं हो सकता जबतक भोजनमें समुचित परिवर्तन न किया जाय। प्राकृतिक उपचारोंसे

मेरे शरीरसे पर्याप्त श्लेष्मा बाहर निकल चुका था; किंतु अयुक्ताहारने सारे किये-धरेपर पानी फेर दिया।

अयुक्ताहार रोगका कारण है, युक्ताहार निवारणका उपाय। मैंने शाकाहार, फलाहार और भोजन-संबंधी अन्य उपचारोंके संबंधमें सुन रखा था, उपवासकी महत्तासे भी मैं परिचित था, किंतु इन सबका विधिवत् अध्ययन आवश्यक जान पड़ा। इसके लिए जर्मनीमें बड़ी सुविधा थी, वहां जाकर मैंने एक विचित्र वस्तु देखी कि आमिषभोजियोंकी अपेक्षा निरामिषभोजी अधिक बीमार लगते थे। यहां मुझे श्वेतसारीय भोजन और दूध लेना पड़ा जिससे मेरी हालत और बदतर हो गयी; किंतु मैंने विश्वविद्यालयमें औषध, शरीर-विज्ञान और जीवन-विज्ञानके अध्ययनका श्रीगणेश कर दिया। मैंने कुछ प्राकृतिक चिकित्साकेंद्र भी देखे और मानसोपचार, श्रद्धोपचार आदिका भी परिचय प्राप्त किया। स्वास्थ्यका पूर्ण रहस्य जाननेके लिए मैं अत्यंत आतुर था। ये सब उपचार मुझे अधूरे जान पड़े और इनसे मेरी जिज्ञासा पूर्णतः तृप्त नहीं हुई। नाइस (दक्षिणी फ्रांस) जाकर मैंने फलाहार किया। हाँ, यह सोचकर कि मुझे अलबूमिनकी आवश्यकता है, एक सेर दूध अवश्य लेता रहा--मुझे इससे विशेष लाभ नहीं हुआ। कुछ दिनों मैं अच्छा रहता, पर कुछ दिनोंमें ही मेरी हालत फिर खराब हो जाती।

अगले जाड़ोंमें मैं उत्तरी अफ्रिकाके अल्जीयर्स नामक नगरमें गया। वहाँ के सुहावने मौसम और अमृतदायी फलोंकी कृपासे मेरी अवस्थामें बड़ा सुधार हुआ, प्राकृतिक पद्धतिमें मेरी आस्था और दृढ़ हुई। मौसम और फलोंसे मिलनेवाले लाभको और तीव्र करनेके लिए मैंने छोटे-छोटे उपवास प्रारंभ किये। इन सबका परिणाम यह हुआ कि दर्पणमें अपने मुखकी कांति देखकर मुझे स्वयं आश्चर्य होने लगा और मुझे एक नयी ताजगीका अनुभव हुआ।

इस ताजगी और सजीवताका फल यह हुआ कि जीवित रहना अपने आपमें एक अनुभव बन गया। स्वास्थ्य, शक्ति और स्फूर्तिकी वृद्धिके कारण मेरे तन-मनपर एक अकथनीय उल्लासकी अनुभूति छा गयी, शारीरिक उन्नतिके साथ ही मानसिक क्षमतामें भी स्पष्ट वृद्धि प्रतीत हुई।

मैं घर वापिस आया। मेरे स्वास्थ्य एवं कार्यक्षमताको देखकर सब दंग रह गये। इस बीच फल एवं श्लेष्मा-विहीन आहारकी प्रभावशीलतापर मेरी

गवेषणा चालू थी और मैं इनके रोगनिवारक कारणोंकी खोजमें तल्लीन था। गवेषणाकी प्रक्रियामें मुझे इस तथ्यका ज्ञान हुआ कि पाचनकी प्रक्रियामें ये श्वेतसारसे द्राक्ष शर्करामें परिवर्तित हो जाते हैं । मैंने अपने प्रयोगों और परीक्षाओं, अनुभवों और चिकित्सासे यह सिद्धकर दिया कि मानव-भोजनके लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है फलोंकी द्राक्ष शर्करा । स्फूर्ति एवं शक्तिका अक्षय स्रोत भी यही है । मल-निष्कासनकी इसमें अद्‌भुत् क्षमता है और रोग-निवारण गुणोंमें तो यह अतुलनीय ही है ।

मेरी ये खोजें डाक्टरोंके नाइट्रोजन-अलबूमिन खोजोंकी पूर्ण विरोधी हैं। भोजनके क्षार, लवणसंबंधी नये सिद्धांतोंसे भी इनका कोई मेल नहीं है। सन १९०९ में एक लेख लिखकर मैंने समावर्तन सिद्धांतके दोषों और अभावोंकी ओर संकेत किया था । पर १९१२ में यह जानकर मुझे परम संतोष हुआ कि लास एंजिल्सके डाक्टर थामस पावेल भी अपने अनुसंधानोंद्वारा उसी निष्कर्षपर पहुँचे थे, जिसपर मैं । वे भी भोजनमें उन पदार्थोंके प्रयोगसे जो पाचन-प्रक्रियामें द्राक्ष शर्करामें परिवर्तित हो जाते हैं, आश्चर्यजनक चिकित्साकर रहे थे । अपने सिद्धांतोंका एक और सहयोगी पाकर मुझे बड़ा बल मिला । मैंने अपने दोस्तों और परिवारसे विदा ली और एक ऐसे युवकको साथ लेकर जो भोजन-संबंधी मेरे प्रयोगों और उपवासोंका कायल था और अपनी हकलाहटकी चिकित्सा करना चाहता था, फ्रांसके दक्षिणी भागमें चला गया । यहाँ महीनोंतक मैं प्रयोगरत रहा । प्रयोगकालमें ही अफ्रिकाके मेरे एक मित्र द्वारा इस अनुभवकी पुष्टि हुई कि रोगमुक्ति और स्वास्थ्यके लिए फलाहार एवं उपवास प्रकृतिके अमोघ शस्त्र हैं । आधुनिक सभ्य समाजमें प्रचलित समस्त रोगोंका एक ही मूल कारण है--गलत ढंगसे पकाया हुआ गलत भोजन ।

जबतक उपवासद्वारा शरीर निर्मल न बन जाय तबतक न तो हमें भोजनका वास्तविक स्वाद ही मिलता है और न यही मालूम होता है कि भोजन और शरीरका प्राकृतिक संबंध क्या है ? इस प्रकारके प्रयोग और किसीने किये हों तो मुझे पता नहीं । इन कष्टसाध्य और कठिन प्रयोगोंके बाद मुझे भोजन-विषयक जो ज्ञान प्राप्त हुआ है उसने आहारके क्षेत्रमें एक नूतन क्रांति की सृष्टि कर दी है । विशेषज्ञोंको हमारा यह कृत्य बड़ा चमत्कारपूर्ण लगा ।

इस प्रसंगमें सबसे विलक्षण बात तो यह है कि डाक्टरोंने मेरे कभी

अच्छा न हो सकनेका फतवा दे दिया था और यक्ष्मा एक प्रकारसे हमारा कुलगत रोग बन गया था। मेरे पिता और भाईकी मृत्यु यक्ष्मासे हुई थी। हमारे इटली-प्रवासमें वहाँकी सुंदरियोंसे हमें बड़ी प्रशंसा प्राप्त हुई और हमारे मतवाले स्वास्थ्य और दमकते हुए चेहरेको देखकर वे रीझ-रीझ उठीं। शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक रूपसे अब मैं पूर्ण परिवर्तित व्यक्ति था। मेरे मित्रकी भी अवस्थामें आश्चर्यजनक सुधार हुआ, यद्यपि उनकी हकलाहट ज्यों-की-त्यों रही। उनकी हकलाहटका एक ही कारण मेरे सम्मुख स्पष्ट था अर्थात् उनके शरीरका श्लेष्मामय होना। एक लंबे उपवासके लिए हमने केप्री द्वीपमें एकांत स्थान चुना। उपवासके १८वें दिन मेरे मित्रकी आवाज भारी हो गयी और उसे डर लगा कि कहीं उसकी वाक् शक्ति लुप्त न हो जाये; किंतु यह उभार था। मेरे मित्रको उभारके मूल कारणका ज्ञान नहीं था। फलतः उसने अपना उपवास तोड़ दिया। मेरी सलाहसे उसने तीन ताजी अंजीर खायी। इसका परिणाम यह हुआ कि लगभग एक घंटेतक उसके गलेसे ढेर सारा श्लेष्मा निकलता रहा और अन्य प्रकारोंसे भी उसके शरीरकी सफाई हो गयी। उसके चेहरेका प्रकृत रूप लौट आया और हकलाहट मिट गयी। डाक्टरोंके पास जिसका कोई उपचार नहीं था, वह उपवास और फलाहारसे अनायास ही संभव हो गया।

उपवास प्रकृतिका एक अचूक अस्त्र है। मैं अत्यंत निश्चयपूर्वक कह सकता हूँ कि प्रकृतिके अस्त्रागारमें सही ढंगसे चलाये गये उपवाससे बढ़कर कोई महास्त्र है ही नहीं।

घर लौटनेके पहले हमने नावद्वारा मिस्र, पेलेस्टाइन, तुर्की, रूमानिया और आस्ट्रियाकी भी यात्राएं कीं।

मिस्रमें हम एक ऐसी जातिके संपर्कमें आये जो अपनी सहिष्णुता और कार्यक्षमतामें अनुपम थी। यह जाति मुख्यतः शाकाहारी और अत्यंत अल्पाहारी थी। इन लोगोंके भोजनको देखकर मिस्रकी विकसित सभ्यताका रहस्य मेरी समझमें आ गया। यह जाति पीढ़ियोंसे बहुत कम तरहकी चीजें बहुत कम बार खाती रही है।

हमने पेलेस्टाइनमें कुछ महीने गुजारे और वहाँ ईसा मसीहकी जीवनीका अध्ययन किया। हमसे यह छिपा नहीं रहा कि ईसा मसीह प्राकृतिक नियमोंके सच्चे पालनकर्त्ता थे और उनका जीवन और उनके प्रवचन सभी प्राकृतिक नियमोंकी शिक्षा देते हैं। अन्य देशोंके भ्रमणसे हमारा

यह अनुभव और भी पुष्ट हुआ कि उन्हीं देशोंके लोग स्वस्थ हैं जो अपने आहारके विषयमें सजग हैं। मुझे यह भासित हुआ और बादमें मैं यह सिद्ध करने में भी सफल हुआ कि कुछ प्राकृतिक पदार्थ ऐसे हैं जो सही ढंगपर पकाये जानेपर अत्यंत शक्तिदायक और मलनिष्कासक सिद्ध होते हैं। उपवाससे मिला देनेपर ऐसे आहारकी उपयोगिता और बढ़ जाती है। असाध्य रोगोंमें भी इनका प्रयोग किया जा सकता है और लाभ उठाया जा सकता है। इस प्रणालीसे केवल उन्हीं रोगियोंके अच्छे होनेकी संभावना नहीं है जो पूर्णरूपेण जीवन-शक्तिसे हाथ धो बैठे हैं।

छोटे या लंबे उपवासकी तैयारीके लिए यह आवश्यक है कि प्रांरभमें कुछ दिनों जो भोजन किया जाये, बहुत सही ढंगका हो और मात्रा में अधिक न हो। इससे पाचन-प्रणालीको छुट्टी मनानेका मौका मिल जाता है। अल्प तथा सम्यक् भोजन एवं उपवाससे शरीरकी सफाई कर लेनेके उपरांत जो भोजन किया जायेगा, वह आश्चर्यजनक फल देनेवाला होगा।

वास्तवमें सच तो यह है कि उपवास, युक्ताहार और स्वास्थ्य-सुधारसे रोगोंसे मुक्ति ही नहीं मिलती, एक नया जीवन मिलता है, एक अनुपम आनंद एवं अकथनीय तृप्तिकी उपलब्धि होती है। मेरे नये सिद्धांतोंसे स्वास्थ्य-जगत्में बड़ी हलचल रही और इहरिटवादी और इहरिटविरोधी नामक दो शिविर बन गये।

एक प्रमुख संपादक और सुधारकने इहरिटवादियोंके सिद्धांतोंका आकलन इन शब्दोंमें किया है "इहरिटने उपवास, फलाहार अथवा युक्ताहारकी खोज या उनका सूत्रपात नहीं किया। प्राकृतिक चिकित्साके साधनोंके रूपमें उनका प्रचार तो अत्यंत दीर्घकालसे था। इहरिटका श्रेय इस बातमें है कि उसने उपर्युक्त साधनों को वैज्ञानिक उपचारका एक नियमबद्ध स्वरूप प्रदान किया।" मेरे इस श्लेष्मा-सिद्धांतकी, जो सभी रोगोंकी जड़ श्लेष्माको मानता है, बड़ी मान्यता प्राप्त हुई और क्रमशः मेरी उपचार-प्रणालीने अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बना लिया।

मेरा अखंड विश्वास है कि यदि मानवताको रोगमुक्त करना है और मनुष्योंकी एक ऐसी नस्ल पैदा करनी है जो रोगका नाम ही न जाने और सभी प्रकार से नीरोग और प्रसन्न रहे तो एक ही प्रणालीकी शरण लेनी होगी और यह प्रणाली है श्लेष्माविहीन आहार-प्रणाली। इस प्रणालीकी जानकारीके लिए मेरी पुस्तक आहार-चिकित्सा पढ़ें।

अध्याय ४५

बर्चर-बेनर-आहार

डा० मैक्स बर्चर बेनरका जन्म सन १८६७में और मृत्यु सन् १९३९में द्वितीय महासमर आरंभ होनेके कुछ ही दिन पहले हुई। वे जूरिख (स्विटजरलैंड) के नामी डाक्टर थे और उनके यहाँ बराबर रोगियोंका जमघट लगा रहता था। यह सब होते हुए भी चिकित्साकी प्रचलित (औषधोपचार) पद्धति उन्हें जरा भी पसंद नहीं थी।

नया अनुभव

वे उदरके एक असाध्य समझे जानेवाले रोगसे ग्रस्त व्यक्तिकी चिकित्सा कर रहे थे। उस रोगीको एक अनाड़ीने कच्ची तरकारियां खानेकी राय दी। बेनरको यह बात स्वीकार नहीं थी, पर रोगीका आग्रह देखकर वे किसी तरह राजी हो गये। रोगी केवल इस आहारके जरिए बिलकुल चंगा हो गया जिसका बेनरके हृदय पर बहुत गहरा असर हुआ। उन्नीसवीं सदीके अंतिम दिनोंमें वे स्वयं पीलिया रोगसे ग्रस्त हो गये। भोजनसे उन्हें अरुचि हो गयी थी और कुछ भी खानेपर मतली आने लगती थी। एक दिन उनकी पत्नी उनकी चारपाईके पास बैठकर परिवारों के कुछ सदस्योंके लिए सेबका छिलका उतार रही थी। बेनरको अचानक सेबके कुछ पतले कतरे खानेकी इच्छा हुई। चिकित्सकोंकी रायके खिलाफ उनकी पत्नी उन्हें सेबके कतरे खिलाती गयी। कुछ ही समयके बाद उन्हें अपनी हालतमें कुछ सुधार देख पड़ने लगा। उन्होंने सहज बुद्धिकी प्रेरणासे और कुछ न खाकर सिर्फ खाना जारी रखा और कुछ ही दिनोंमें रोगसे पूर्णतः मुक्त हो गये। इस व्यक्तिगत अनुभवके आधारपर उन्होंने यह पता लगाना शुरु किया कि अपक्व सेब कुछ रोगोंके उपचारमें कैसे सहायक होता है। सुप्रचलित 'बर्चर-बेनर-आहार', जो भिगोयी हुई जई, नीबू, शहद, दूध और सेबके टुकड़ोंके संयोगसे तैयार किया जाता है और पोषक तत्त्वोंकी दृष्टिसे हमारे एकमात्र प्राकृतिक आहार माताके दूधके सदृश होता है, इसी खोजका परिणाम है।

नये सिद्धांतका प्रयोग

इसके अनंतर बेनर इस खोजमें लगे कि कच्चे फलों और तरकारियोंका शरीरपर क्या प्रभाव होता है और कुछ दिनोंमें इस नतीजेपर पहुँचे कि स्वस्थ व्यक्तियोंका आहार तो पचास प्रतिशत अपक्व होना चाहिए, पर रोगियोंका आहार शत-प्रतिशत अपक्व ही होना चाहिए। उन्होंने कई रोगोंके संबंधमें अनुसंधान कर प्रचलित आहारको, जिसमें जांतविक पदार्थोंकी बहुलता रहती थी, उन रोगोंका कारण ठहराया। बेनरने हिपोक्रैटिसके इस कथनका कि 'भोजन ही आपका भेषज और भेषज भोजन होना चाहिए,' अनुसरण कर संतुलित आहारद्वारा रोगकी रोक-थाम करने और संयत आहारद्वारा कई रोगोंके निवारणका सिद्धांत प्रयोगमें लाना आरंभ किया और इसके लिए एक छोटा-सा उपचारालय भी स्थापित किया जिसमें पहले केवल आठ रोगी रखे जा सकते थे। धीरे-धीरे इस उपचारालयका क्षेत्र बढ़ता गया और बादमें तो इतना प्रसिद्ध हो गया कि सारी दुनियाके लोग इसमें पहुँचने लगे।

चिकित्सकोंकी प्रतिक्रिया

बेनरकी इस नयी पद्धतिने चिकित्सा-जगत्में हलचल मचा दी। कुछ लोग इसकी उपेक्षा करते, कुछ खिल्ली उड़ाते और कुछ इसका विरोध भी करते थे। कारण यह था कि अपक्व पदार्थ खाना खतरनाक समझा जाता था और केवल हट्टे-कट्टे और मजबूत लोगोंको खानेकी अनुमति दी जा सकती थी। हाँ, ताजा फल लोग अवश्य खाया करते थे और उससे उतना नहीं डरते थे, पर पाचनमें जरा भी गड़बड़ी होनेपर फल खाना तुरंत बंद कर दिया जाता था। सलाद गर्मियोंमें कभी-कभी शौकिया खा लिया जाता था, पर पाचनमें कोई विकार आनेपर उससे भी परहेज किया जाता था। उन दिनों मांस खानेका चलन ज्यादा था; क्योंकि एक तो उसमें प्रोटीनकी मात्रा अधिक रहती है और दूसरे उसकी कोई कमी नहीं थी।

दो मुख्य सिद्धांत

'बर्चर-बेनर-आहार' के दो मुख्य सिद्धांत थे--पक्वाहार कम करना और अगर आवश्यक समझा जाय तो मांस पदार्थ और मांस बिलकुल बंद कर

देना। जब बेनरको यह निश्चय हो जाता कि आहारोपचारके रूपमें अपक्व पदार्थ ही देना आवश्यक है तो वे कमजोर रोगियोंको उसे इस रूपमें देनेका उपाय करते थे जिसमें रेशोंके कारण पचानेमें उन्हें कठिनाई न हो। वे उन्हें कद्दूकसपर कसा हुआ फल देते थे और, रोगकी हालत विषम होनेपर फलों तथा तरकारियोंके रसके साथ प्रोटीनकी प्राप्तिके लिए गिरीका रस देते थे जो पिसी हुई गिरीको उबालकर निकाला जाता था। इस आहारसे उन्हें पर्याप्त पोषक तत्त्व प्राप्त होते रहते थे। वे अपनी बहनकी सहायतासे भोजन बहुत स्वादिष्ट बना दिया करते थे और आहारका क्रम ऐसा रखते थे जिसमें पक्व और पक्वापक्व आहार बारी-बारीसे बहुत दिनोंतक मजेसे चलाया जाता रह सके। वे कठोर जीवन--कड़े बिस्तरेपर, सोना, ठंढा पानी पीना, प्रातःकाल टहलना आदि--बहुत पसंद करते थे, फिर भी इस बातके कायल थे कि भोजन बहुत स्वादिष्ट होना चाहिए, नहीं तो उसमें के तत्त्व पूर्णतः आत्मसात नहीं हो सकेंगे।

प्रभावका रहस्य

अपने जीवनके अंतिम दिनोंमें उन्होंने अपने आहारोपचारके प्रभावकर होनेका कारण ढूंढ़नेका बहुत प्रयत्न किया, पर इसमें उन्हें कोई उल्लेखनीय सफलता नहीं मिली। इधर, विटामिनों और खनिज लवणोंका पता चल जानेसे उनके सिद्धांतोंको अच्छी सहायता मिली है, फिर भी अपक्वाहारके उपचारात्मक प्रभावका रहस्य हम पूरा-पूरा नहीं समझ पाये हैं। यूरोपके कई देशोंने इस रहस्यको समझे बिना भी उनके अनुभवोंको बिना किसी आपत्तिके अपना लिया है, पर ब्रिटेन आदि कुछ देश इस सिद्धांतकी--चाहे वह ठोस-से-ठोस क्यों न हो--पूरी व्याख्या न होनेके कारण इसे प्रयोगमें लानेके लिए उतने तैयार नहीं हैं।

अन्य सिद्धांत

रोगियोंको शत-प्रतिशत अपक्वाहार देने और जांतविक पदार्थ कम करने या बिलकुल बंद कर देनेके अलावा बेनरने अन्य कई बातोंपर भी जोर दिया। उनका कहना था कि आहारमें अम्लोत्पादक और क्षारोत्पादक पदार्थोंका संतुलन रहना चाहिए, पाक हो जानेपर खाना शीघ्र परस देना चाहिए, फलों और तरकारियों को पकाते या तैयार करते समय यह खयाल

रखना चाहिए कि उनके पोषक तत्त्व कम-से-कम नष्ट हों और वानस्पतिक खादकी ही सहायतासे फल और तरकारियां उत्पन्न की जायँ।

प्रोटीनकी कमी

इस आहारके संबंधमें ध्यान देनेकी विशेष बात यह है कि रोगसे छुटकारा दिलाने, स्वास्थ्य बनाये रखने और बच्चोंकी ताकत और रोग-निरोधकी शक्ति बढ़ानेके लिए उस व्यक्तिद्वारा प्रवर्तित किया गया है जो बहुत अनुभवी डाक्टर था। इसके अनुसार चलनेपर आहारमें जांतविक पदार्थ, विशेषकर जांतविक प्रोटीनकी ही कमी नहीं होती, बल्कि ग्रहण किये जानेवाले कुल प्रोटीनकी ही मात्रामें कमी हो जाती है। एक बात यह भी है कि स्वस्थ और शारीरिक श्रम करनेवालेके लिए जितना प्रोटीन आवश्यक होता है उतना रोगीके लिए नहीं होता।

इतने दिनोंके अनुभवसे मेरा यह मत दृढ़ हो गया है कि अपक्वाहार आँतोंकी अवस्थामें कुछ ऐसा परिवर्तन कर देता है जिससे शरीर पक्वाहार ग्रहण करनेवालोंकी अपेक्षा खाद्य पदार्थोंका और अच्छा उपयोग करने योग्य हो जाता है। कहनेका अभिप्राय यह कि अपक्व रूपमें रहनेपर हमारे खाद्य पदार्थोंकी उपयोगिता बहुत बढ़ जाती है।

मानसिक प्रभाव

अपक्वाहारके मल-निष्कासक रूपपर भी ध्यान देना आवश्यक है। मैंने यह भी देखा है कि लगातार अधिक दिनोंतक अपक्वाहार चलाते रहनेपर थकान और चिड़चिड़ापन आ जाता है और नींद भी गाढ़ी नहीं आती। शायद यही कारण है जिससे बेनर अपक्वाहारके लिए सप्ताहमें कुछ दिन नियत कर देते थे, रोगियोंको शांत रहने और दिमागपर किसी तरहका जोर न पड़ने देनेका खयाल रखनेको कहा करते थे और बीच-बीचमें पचास प्रतिशत पक्व और पचास प्रतिशत अपक्व पदार्थ दिया करते थे। इससे नाड़ियों तथा शरीरको आवश्यक विश्राम मिल जाया करता था। इसलिए यह समझना ठीक न होगा कि चूँकि अपक्वाहार अच्छा होता है इसलिए केवल यही ग्रहण करते रहा जाय। अगर किसी पदार्थकी अल्प मात्रा अच्छी हो तो इससे यह नहीं समझ लेना चाहिए कि उसकी अधिक मात्रा भी अच्छी ही

होगी। अच्छी चीजोंके संबंधमें भी संतुलन या संयमका खयाल रहना चाहिए। क्योंकि यही प्राकृतिक नियम है जिसका पालन हर एक आदमीके लिए आवश्यक है।

प्राकृतिक आहारकी प्रवृत्ति

बेनर प्रायः कहा करते थे कि शरीरपर, विशेषकर रुग्णावस्थामें जब और कोई पदार्थ ग्रहण करना या पचाना कठिन होता है, अपक्वाहारका विशेष प्रभाव होनेका कारण यह है कि आदिम अवस्थामें मनुष्यका आहार अपक्व ही होता था। शरीरमें अपनेको परिस्थितिके अनुकूल बना लेनेकी अद्भुत् शक्ति होनेके कारण वह सभी तरहके पक्व और निष्प्राण पदार्थोंके सहारे भी किसी तरह अपना काम चला लिया करता है, पर कभी-कभी ऐसा समय भी आ जाता है जब सभ्यताकी यह प्रवृत्ति उस बिंदुपर पहुंच जाती है जहां उसे रोकना आवश्यक हो जाता है। वर्तमान काल ऐसा ही जान पड़ता है जब कई देशोंके मनुष्योंमें विभिन्न कारणोंसे प्राकृतिक आहारकी ओर लौटनेकी प्रवृत्ति नजर आ रही है।

बच्चोंका आहार

बेनर और उनके कुछ पुत्रोंने भी शिशुओंके आहारके संबंधमें बहुत कार्य किया है जिसके फलस्वरूप उनके उदररोगके संबंधमें, जो सबसे बुरा होता है, मेरी कठिनाई बहुत कुछ दूर हो गयी है। उनका मत है कि अगर बच्चेको उसका प्राकृतिक आहार--माताका दूध--न मिले तो गायका दूध उसका स्थान ग्रहण नहीं कर सकता। गायके दूधकी बनावट माताके दूधकी बनावटसे बिलकुल भिन्न प्रकारकी होती है। गायका दूध बछड़ेके शरीर और बाढ़के उपयुक्त होता है और माताका दूध बच्चेकी बाढ़ और आकारके। बेनरका यह भी कहना था कि गायके दूधसे और कुछ बुराइयोंके साथ एक बड़ी बुराई यह होती है कि नाक और गलेके तंतुओंके साथ अवटुका आदि ग्रंथियोंकी बहुत अधिक वृद्धि हो जाती है जो वांछित नहीं हो सकता। इसलिए वे फलके रसके साथ गिरीका उपर्युक्त रस मिलाकर देनेकी राय देते थे जो माताके दूधका स्थान मजेमें ग्रहण कर लेता है। वे बच्चेका वजन बढ़नेके साथ गिरीका रस क्रमशः बढ़ाते जाते और फलके रसकी जगह तरकारीका रस

भी काममें लाया करते थे। मैंने एक बच्चेपर उसकी तीन सप्ताहकी अवस्थासे ही इसका प्रयोग किया था। उसकी ऊँचाई, वजन, त्वचा, बाल, दाँत आदिमें कोई कसर नहीं आयी और साथ ही वह शांत और प्रसन्न भी रहता था। कुछ रुग्ण बच्चोंपर भी इसका प्रयोग किया गया जिसका बहुत अच्छा फल देख पड़ा। गिरीका रस बिलकुल नपी-तुली मात्रामें दिया जाता है--जराभी कम या ज्यादा नहीं। यह घनीभूत पदार्थ है इसलिए इसके संबंधमें कुछ सावधानी बरतना आवश्यक होता है।

मनुष्यका मुख्य खाद्य

बेनर फलको ही मनुष्यका मुख्य खाद्य मानते थे, इसलिए वे तरकारियोंसे फलोंको अधिक महत्त्व दिया करते थे। उन्होंने मनुष्यके लिए प्रतिदिन तीन बार खानेका जो नियम बनाया था उसमें हर बार फल अच्छी मात्रामें देने और सिर्फ एक बार उबली हुई तरकारी या सलाद देनेको कहा गया है। बेनर फलको अमीरी या शौककी चीज न मानकर, जैसा कि आजकल प्रायः लोग समझते हैं, स्वास्थ्यवर्द्धक खाद्य मानते थे और कम-से-कम एक बार कई तरकारियां, विशेषकर पत्रशाक और एक प्लेट मिश्र सलाद (पत्र, मूल और फलके संयोगसे बना हुआ सलाद) खाना आवश्यक मानते थे। पत्तियोंकी मात्रा अधिक रखते थे; क्योंकि उनसे प्रोटीन अच्छी मात्रामें प्राप्त होता है।

विट्ठलदास मोदी
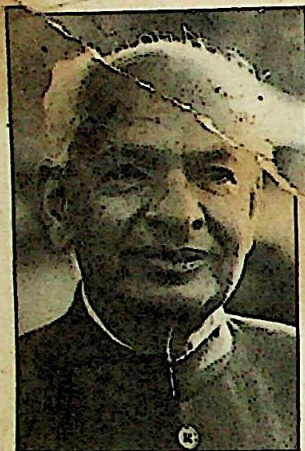
जन्म १९१२, जन्मस्थान गोरखपुर । प्रारंभिक शिक्षा गोरखपुरमें । मैट्रिक करनेके पश्चात् अध्ययनके लिए काशी हिंदू विश्वविद्यालय चले गये । हिंदीके प्रति आरंभसे ही अनुराग था । कालेज-जीवनमें कहानियां और गद्य-काव्य लिखते थे, इच्छा थी कि हिंदीमें एम० ए० करके शिक्षाका कार्य करें । लेकिन बी० ए० की परीक्षा के समय बीमार पड़ गये और हर प्रकारकी चिकित्सा करनेपर भी तीन वर्षतक स्वस्थ नहीं हुए । दवाओंसे निराश होनेपर प्राकृतिक चिकित्साकी ओर ध्यान गया । उसका साहित्य पढ़ा और उसके आधारपर अपनी चिकित्सा स्वयं की । उससे न केवल रोग-मुक्ति हुई, बढ़िया स्वास्थ्य भी प्राप्त हुआ । इससे प्राकृतिक चिकित्सामें निष्ठा पैदा हुई। इस चिकित्सासे दूसरोंको लाभ पहुंचानेकी दृष्टिसे १९४० में गोरखपुरमें आरोग्य-मंदिरकी स्थापना की, जो आज उत्तर भारतमें प्राकृतिक-चिकित्साका श्रेष्ठ केन्द्र माना जाता है । जहांसे सैकड़ों ऐसे रोगी स्वास्थ्य लाभ कर चुके हैं, जो एक प्रकारसे जीवनसे निराश हो चुके थे। यहींसे १९४७ में 'आरोग्य' नामक मासिक पत्र निकाला । अपने समयका यह बहुत लोकप्रिय पत्र है । उसके दस हजार ग्राहक हैं ।

इससे पहले सन् १९३८-३९ में दो वर्षतक प्रयागसे प्रकाशित होनेवाले 'जीवनसखा' का और १९४२ से १९४५ तक सस्ता साहित्य मंडल, नयी दिल्लीमें प्रकाशित 'जीवन-साहित्य' का भी संपादन किया था।

'रोगोंकी सरल चिकित्सा,' के अलावा 'दुग्ध-कल्प,' 'जीनेकी कला' आदि पुस्तकें लिखी हैं । एडोल्फ जस्टकी 'रिटर्न टू नेचर', का 'प्राकृतिक जीवनकी ओर' के नामसे तथा अन्य पुस्तकोंका अनुवाद किया है। हिंदीकी पत्र-पत्रिकाओंमें अक्सर प्राकृतिक चिकित्सापर लेख लिखते हैं जिनमेंसे बहुतोंके अंग्रेजी, गुजराती, उर्दू आदि भाषाओंमें रूपांतर हुए हैं ।

यूरोपमें प्राकृतिक-चिकित्साकी प्रगतिका अध्ययन करनेके लिए सन् '५६में इंग्लैंड, फ्रांस, स्विट्जरलैंड, जर्मनी, इटली आदि देशोंकी यात्रा की। और, फिर इसी दृष्टिसे सन् १९७० में दुबारा इन्हीं देशों तथा अमेरिकाकी यात्रा की ।

—यशपाल जैन